बुन्देलखण्ड के दलित अभिजनों का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

(हमीरपुर जनपद के विशेष सन्दर्भ में)

समाजशास्त्र विषय में पी-एच०डी० उपाधि
हेतु बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी
में प्रस्तुत

शोध–प्रबन्ध

सुमन कीर्ति

गवेषिका

सुमन कीर्ति
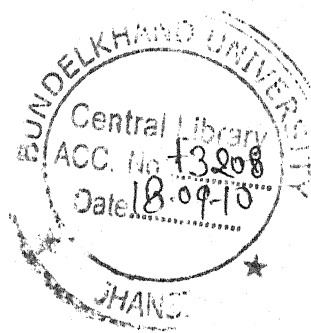
शोध निर्देशिका

डा० नीलम मित्तल
प्राचार्या
आर्य कन्या महाविद्यालय
झाँसी - उ०प्र०

डा. नीलम मित्तल
प्राचार्या

आर्य कन्या महाविद्यालय
झांसी - उ0 प्र0

प्रमाण - पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि सुमन कीर्ति बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी के पत्रांक– बु0वि0/प्रशा0/शोध/2005/4361–63 दि0 10.08.05 के द्वारा समाजशास्त्र विषय में शोध हेतु पंजीकृत हुई थी। इनका शोध विषय "बुन्देलखण्ड के दलित अभिजनों का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (हमीरपुर जनपद के विशेष सन्दर्भ में)" था।

इन्होंने मेरे निर्देशन में आर्डिनेन्स 7 के द्वारा वांछित अवधि तक कार्य किया तथा इस अवधि में शोध केन्द्र में उपस्थित रहीं। इन्होंने शोध के चरणों को अत्यन्त सन्तोषजनक रूप में श्रमपूर्वक सम्पन्न किया है। मैं इस शोध प्रबन्ध को प्रस्तुत करने की संस्तुति करती हूँ।

दिनांक

Neelam Mittal
(डा. नीलम मित्तल)
शोध निर्देशिका

घोषणा

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध "बुन्देलखण्ड के दलित अभिजनों का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (हमीरपुर जनपद के विशेष सन्दर्भ में)" मेरा मौलिक शोध कार्य है। इसे मैंने प्राथमिक एवं द्वितीयक स्त्रोतों के माध्यम से परिपूर्ण किया है। द्वितीयक स्त्रोतों के रूप में सन्दर्भित ग्रन्थों एवं पत्र-पत्रिकाओं का यथा स्थान प्रयोग किया गया है। यह शोध-प्रबन्ध किसी अन्य शोध-प्रबन्ध का अनुकरण न होकर पूर्णतया मौलिक है।

सुमन कीर्ति

(सुमन कीर्ति)

गवेषिका

आभार

मुझ जैसी अल्पज्ञ एवं अनुभवहीन शोधार्थिनी के लिये शोध जैसे गाम्भीर्य सारस्वत अनुष्ठान को पूर्ण कर पाना मेरी सामर्थ्य से परे था किन्तु मेरे लिये प्रणम्य एवं वन्दनीया तथा शोध-विद्या में निष्णात डा. नीलम मित्तल जी, प्राचार्या, आर्य कन्या महाविद्यालय, झांसी की प्रज्ञा वेदी में मेरी अन्वेषणात्मक अध्यवसाय की साधना पूर्ण हुई। आदरणीया डॉ. मित्तल जी की मैं सदैव ऋणी रहूँगी जिनके सद्प्रयासों, प्रेरणा तथा प्रोत्साहनयुक्त निर्देशन में यह शोध कार्य पूर्ण हो सका है।

परम श्रद्धेया डॉ. नीलम मित्तल जी मेरे लिये मात्र शोध निर्देशिका ही नहीं अपितु वे मेरे शैक्षणिक प्रगति पथ की मार्ग प्रस्तोता भी हैं जिनकी अनुशीलनात्मक आराधना करके मैंने इस गवेषणात्मक प्रयोजन को पूर्ण किया है। ऐसे में इनके शोध सहयोग के लिये मैं अपनी अशेष श्रद्धा अर्पित करती हूँ।

परम श्रद्धेय श्री रमेश चन्द्र शर्मा, पूर्व चिकित्सा अधीक्षक बाँदा के प्रति मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ जिनके संरक्षकत्व में मैंने यह शोधपथ पूर्ण किया। श्री लालता प्रसाद पांचाल, कार्यालय अधीक्षक, आर्य कन्या महाविद्यालय, झांसी के प्रति श्रद्धावनत हूँ जिनके संप्रेरक व्यवहार से मैं इस उच्च लक्ष्य को पा सकी।

मैं अपने श्वसुर श्री जाहर सिंह, प्रधानाचार्य, भागीरथ भारद्वाज इन्टर कॉलेज, पूँछ तथा सास श्रीमती रामजानकी जी के प्रति नतशीश हूँ जिनका अविस्मरणीय सहयोग मुझे पग-पग पर प्राप्त होता रहा है। मै अपने

चाचा श्वसुर श्री अमर सिंह यादव, पुलिस उपाधीक्षक, गाजीपुर एवं चाची सास श्रीमती सुधा यादव के प्रति आभार ज्ञापित करती हूँ जो मेरे लिये एक आदर्श स्वरूप रहे हैं।

मैं अपने ज्येष्ठ स्व. श्री कप्तान सिंह यादव के प्रति आभार ज्ञापित करती हूँ। जिनकी स्मृतियाँ सदैव मेरे सम्मुख विद्यमान रहती हैं तथा उनका अप्रत्यक्ष आशीष मुझे सदैव प्राप्त होता रहता है।

मैं अपने जनक एवं जननी श्री रामबिहारी जी एवं श्रीमती जनका के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ। जिन्होंने मुझे सदैव आगे बढ़ने की प्रेरणा दी है। मै अपने देवर श्री दीपक यादव एवं अवधेश यादव, ननद श्री मती किरन यादव एवं अनुजा श्रीमती गीता यादव के प्रति श्रद्धावनत हूँ जिनका सतत् सहयोग मुझे प्राप्त होता रहा है।

मैं अपने प्रणयी श्री धीरेन्द्र सिंह यादव, भारतीय रेल विभाग के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ जिन्होंने "गृह कारज नाना जंजाला" से मुझे मुक्त करके इस महत कार्य में सहयोग दिया मैं अपनी सन्तति अभय एवं हर्षिता के प्रति भी धन्यवाद ज्ञापित करती हूँ जिन्होंने मातृत्व स्नेह के आकस्मिक अभाव को सहज रूप से व्यतीत कर लिया।

श्रीमती रामदेवी यादव, पुस्तकालयाध्यक्ष, आर्य कन्या महाविद्यालय, झांसी के प्रति विनयावत हूँ जिनका पुस्तकीय सहयोग मुझे समय-समय पर प्राप्त होता रहा है। मैं डा. स्वामी प्रसाद गुप्ता जी, विभागाध्यक्ष समाजशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हमीरपुर के प्रति भी हृदय से कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ जिन्होंने कुछ ऐसे सन्दर्भ ग्रन्थों को उपलब्ध कराया जिनसे मेरा शोध-ग्रन्थ पूर्णता को प्राप्त हो सका।

शोध कार्य के अध्ययन क्षेत्र के सर्वेक्षणात्मक अनुदाय के लिये मैं उन दलित अभिजनों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ जिनके उपयोगी विचारों से यह प्रज्ञा आयोजन पूर्ण हो सका।

शोध प्रबन्ध के टंकण एवं रूप सज्जा तथा आवरण के लिये नीतेन्द्र जी तथा अहमद बाइन्डर्स, कानपुर बधाई के पात्र हैं जिनकी कर्मठता से शोध प्रबन्ध प्रस्तुत रूप ले सका। इन सभी के अतिरिक्त मैं उन सभी जाने-अनजाने सुधी जनों की हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने मुझे यथा सम्भव मदद दी।

दिनांक

(सुमन कीर्ति)
गवेषिका

अनुक्रम

00000––––––00000

अध्याय - 1

प्रस्तावना

- अस्पृश्यता की प्रकृति
- अस्पृश्यता की परिभाषा
- अस्पृश्यता की उत्पत्ति एवं विकास
- अनुसूचित जातियाँ
- अभिजन की अवधारणा
- अभिजन के प्रकार
- भारत में अभिजन
- अध्ययन समीक्षा : भारत के सन्दर्भ में

1. प्रस्तावना

जाति व्यवस्था के अस्तित्व में आने से पूर्व भारतीय हिन्दू समाज वर्ण पर आधारित था, जिसे वर्ण–व्यवस्था कहा जाता था। वर्ण शब्द का प्रयोग आर्य और दास इन दो वर्गों के रंगों क्रमशः गोरे और काले में अन्तर करने के लिए किया गया।[1] ऋग्वेद के पुरूष सूक्त में कहा गया है कि संसार की समृद्धि के लिए विराट पुरूष ने अपने मुख से ब्राह्मण, भुजा से क्षत्रिय, जंघा से वैश्य एवं पैर से शूद्र को पैदा किया।[2] अंगों से सम्बन्धित यह विभाजन उस समय के सामाजिक स्तर को दर्शाता है।[3] हिन्दू धर्मग्रन्थों एवं विचारकों ने इस व्यवस्था को श्रम विभाजन का प्रमुख आदर्श माना, जिसमें प्रत्येक वर्ण का अपना पृथक कार्य निर्धारित था। नैतिक दृष्टिकोण से प्रत्येक वर्ण का स्थान कर्तव्यों के आधार पर ही निश्चित था, न कि अधिकारों की माँग पर जैसा कि डा० राधाकृष्णन ने कहा है, "यदि सभी वर्गों के लोग अपने–अपने निश्चित कर्तव्यों को करते रहें, तो वे उच्चतम अमिट आनन्द की अनुभूति कर सकते हैं।"[4]

वर्ण–व्यवस्था भारतीय हिन्दू समाज की एक विचित्र एवं अनोखी व्यवस्था है। वर्ण–व्यवस्था के परिणामस्वरूप ही आगे चलकर जाति–व्यवस्था, अस्पृश्यता एवं शोषण पर आधारित समाज का निर्माण हुआ। जाति–व्यवस्था के जनक मनु ने जिस संहिता (मनुस्मृति) की रचना की, वह असमानता एवं अन्याय पर आधारित है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र चारों वर्णों की उत्पत्ति शरीर के विविध अंगो से बताकर[5] मानव–मानव में भेदभाव करना एवं एक वर्ण ब्राह्मण को असीमित अधिकार देना तथा दूसरे वर्ण (शूद्र) से दासता करवाना इस व्यवस्था का प्रमुख उद्देश्य था। मूलतः मनु की संहिता ब्राह्मणों की

---

[1] घुर्ये, जी. एच., कास्ट एण्ड क्लास इन इण्डिया, बॉम्बे, पापुलर बुक डिपो, 1940, पृ. 176
[2] ग्रिफिथ, आर. टी. एच., हांस ऑफ द ऋग्वेद, देहली, मोतीलाल बनारसीदास, 1976, पृ. 603
[3] श्रीनिवास, एम. एन., कास्ट इन इंण्डिया एण्ड अदर एशेज, बाम्बे, एशिया पब्लिशिंग हाऊस, 1962, पृ. 54
[4] राधाकृष्णन, एस., ईस्टर्न रिलिजन्स एण्ड वेस्टर्न थॉट, लंदन, एलेन एण्ड अनविन, 1949, पृ. 13
[5] प्रभु, पी. एन., हिन्दू सोशियल आर्गेनाइजेशन, बॉम्बे, पापुलर प्रकाशन, 1963, पृ. 286

असीमित एवं अवैधानिक शक्तियों को न्यायोचित ठहराने की एक गहरी साजिश थी। हिन्दू समाज में अज्ञानी ब्राह्मणों को भी ईश्वर के समान समझा गया एवं बिना किसी योग्यता व कार्यकुशलता के ब्राह्मण–पुत्र जन्म के आधार पर ही ब्राह्मण माना गया।[6] ब्राह्मणवाद ने वर्ण–व्यवस्था के आदर्श को अपनी झूठी सामाजिक प्रतिष्ठा का साधन बना लिया, जिसको कायम रखने के लिए उन्होंने निम्न वर्गों पर अनेक प्रकार के अत्याचार किये, अनेक निर्योग्यताएँ उनके ऊपर लादी गईं तथा विभिन्न अंधविश्वासों का सहारा लेकर उन्हें गुमराह करते रहे। इस प्रकार वर्ण–व्यवस्था ने शोषण की भावना को अत्यधिक बल दिया। समाज में असमानता एवं अत्याचार जैसी सामाजिक बुराइयों को संरक्षण मिला।[7] जाति–व्यवस्था में सामाजिक न्याय तथा परिवर्तन के लिए कोई स्थान नहीं है। अतः वर्ण–व्यवस्था एवं जातिवाद सामाजिक सुदृढ़ता एवं एकता के विपरीत हैं। तथा इनसे समाज का खण्डीय विभाजन हुआ है।[8]

वर्ण–व्यवस्था के परिणामस्वरूप आगे चलकर हिन्दू समाज सैकड़ों जातियों में विभाजित हुआ। भारतीय जाति–व्यवस्था अपनी तरह की एक विचित्र एवं रोचक संस्था है। धर्म की सीमाओं के बाहर हिन्दुओं का जो कुछ भी अपनापन है, उसकी अनोखी अभिव्यक्ति जाति व्यवस्था है। वास्तव में यह संस्था हिन्दू जीवन–पद्धति को दूसरों से इतना पृथक कर देती है कि सैंकड़ों भारतीय एवं विदेशी विद्वानों का ध्यान इस संस्था की ओर हुआ है। जाति–व्यवस्था मुख्यतः जन्म के आधार पर सामाजिक संस्तरण और खण्ड विभाजन की एक गतिशील व्यवस्था है जो खाने–पीने, विवाह, व्यवसाय और सामाजिक सहवासों से सम्बन्ध में अनेक या कुछ प्रतिबंधों को अपने सदस्यों पर लागू करती है।[9] जाति–व्यवस्था भारतीय समाज पर एक कलंक है जो नागरिकों में असमानता एवं भेदभाव पैदा करती है। निम्न एवं अस्पृश्य जातियों

---

[6] कीर, धनन्जय, डा. अम्बेडकर लाइफ एण्ड मिशन, बाम्बे, पापुलर प्रकाशन, 1954, पृ. 3

[7] राधाकृष्णन, एस., द हिन्दू व्यू ऑफ लाइफ लंदन, एलेन एण्ड अनविन, 1949, पृ. 93

[8] अम्बेडकर, बी. आर., एनिहिलेशन ऑफ कास्ट, डा. बाबा साहेब अम्बेडकर : राइटिंग्स एण्ड स्पीचेज, वॉ. 1 बाम्बे, गवर्नमैंट ऑफ महाराष्ट्र, 1979, पृ. 21

[9] दलित लिबरेशन टुडे (मासिक), लखनऊ, दिसम्बर, 1995, पृ. 15

के लोग भय में जी रहे हैं। इन जातियों के सदस्य यदि सामाजिक अयोग्यताओं, धार्मिक भेदभाव और राजनीतिक दमन के विरूद्ध आवाज उठाते हैं तो उसे सामाजिक व्यवस्था का उल्लंघन समझा जाता है।[10] अस्पृश्य जाति के लोगों को निम्न स्तर का नागरिक माना जाता है, देश के अनेक भागों में उन्हें मानव से कम तथा जानवरों से भी बदतर समझा जाता है। आज धर्म–निरपेक्षतावाद, लोकतन्त्र और लोगों में समाजवादी एवं वैज्ञानिक विचारों के प्रसारित होने के बावजूद भी, जातिवाद एक जीवन–पद्धति बना हुआ है। जाति–व्यवस्था का सारांश देते हुए श्रीनिवास[11] ने लिख है, "शिक्षित भारतीयों में यह सुविस्तृत धारणा है कि जाति अपनी अंतिम सांस ले रही है और नगरों में रहने वाले उच्च शिक्षा प्राप्त उच्च वर्गों के लोग इसके बंधन से मुक्त हैं। परन्तु ये दोनों धारणायें गलत हैं। ये लोग भोजन सम्बन्धी प्रतिबन्धों का चाहे अनुसरण न करते हों, जाति एवं धर्म के बाहर विवाह करते हों, परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि वे जाति बंधनों से पूर्णतः मुक्त हैं।"

1.1 अस्पृश्यता की प्रकृति

अस्पृश्यता की प्रक्रिया में न केवल उच्च जाति का सदस्य अस्पृश्य, निम्न एवं दलित व्यक्ति को नीच–निकृष्ट समझता है, अपितु उसे छूना तथा देखना भी पाप माना जाता है। अस्पृश्यता क्या है? यह एक अतिसंवेदनशील प्रश्न है। भारतीय समाज में जातिगत स्तर पर सर्वाधिक असमानताएँ तथा निर्योग्यताएँ अस्पृश्यता की अवधारणा में निहित हैं। अस्पृश्यता एक स्थायी वंशानुगत कलंक है जो किसी प्रकार धुल नहीं सकता है।[12] अस्पृश्यता के सम्बन्ध में भगवान दास के ये शब्द उचित प्रतीत होते हैं कि "अस्पृश्यता हिन्दूवाद का अभिन्न अंग है। यह एक हिन्दू के लिए उसकी माता द्वारा पालने में सिखाया गया प्रथम पाठ है, जिसका अनुसरण वह

---

[10] जाटव, डी. आर., भारतीय समाज एवं संविधान, जयपुर, समता साहित्य सदन, द्वि, सं. 1992, पृ. 45

[11] श्रीनिवास, एम. एन., 1962, इबिद, पे. 75

[12] अम्बेडकर, बी. आर., अन्टचेबल्स–हू आर दे एण्ड व्हाई बिकम अन्टचेबल, न्यू देहली, अमृत बुक कं. 1948, पे. 38

जीवनपर्यन्त पूर्ण विश्वास के साथ करने का प्रयास करता है।[13] उड़ीसा के विसीपारा गाँव के अध्ययन (1958) में बेली[14] ने लिखा है कि, "जाति संस्तरण में अस्पृश्य निम्नस्थ है। सवर्ण जाति के लोग इनके हाथों से भोजन तथा जल ग्रहण नहीं करते। कुछ मामलों में निश्चित दूरी के भीतर उनका प्रवेश वर्जित है और कहीं–कहीं पर उनका दर्शन भी सामाजिक अपराध है।" कुछ समुदायों को अपवित्र, पतित एवं हीन समझना इसकी अभिव्यक्ति है, लेकिन अस्पृश्यता के सम्बन्ध में मात्र इतना कहना पर्याप्त नहीं है। इसकी वास्तविक अनुभूति एक अस्पृश्य ही कर सकता है जिसको अस्पृश्यता ने अस्तित्वहीन बना दिया है।

1.2 अस्पृश्यता की परिभाषा

भारतीय संविधान में अस्पृश्यता को अपराध घोषित किया है, लेकिन संविधान में इसकी कोई निश्चित परिभाषा नहीं दी गई है। भारतीय संसद ने 1955 में अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम, 1955 पारित किया, जिसमें अस्पृश्यता के कुछ लक्षण बताये गये हैं, लेकिन निश्चित परिभाषा नहीं दी गई है।[15]

डी. एन. मजूमदार के अनुसार "अस्पृश्य जातियाँ वे हैं जो विभिन्न सामाजिक एवं राजनैतिक निर्योग्यताओं से पीड़ित हैं, जिनमें से बहुत सी निर्योग्यताएँ उच्च जातियों द्वारा परम्परागत रूप से निर्धारित और सामाजिक रूप से लागू की गई हैं।[16]

---

[13] भगवान दास, अन्टचेबल एण्ड बुधिज्म, इन एल. आर. बाली (एडी.) थॉट्स ऑन डॉ. अम्बेडकर, जालंधर, भीम पत्रिका प्रकाशन, 1975, पृ. 23

[14] बेली, एफ. जी., कास्ट एण्ड इकनामिक फ्रंटियर : ए विपेज इन हाइलैंड ओरिसा, मैनचेस्टर प्रेस, 1958, पृ. 8–9

[15] क्षीरसागर, आर. के., अनटचेबिल्टी इन इंण्डिया, इम्पलीमेन्टशन ऑफ द लॉ एण्ड एबॉलिशन, न्यू देहली, दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स, 1986, पृ. 21

[16] मजूमदार, डी. एन., रेसेज एण्ड कल्वर्स ऑफ लाइफ इंडिया, बाम्बे, पापुलर प्रकाशन, 1958, पृ. 36

महात्मा गाँधी ने अस्पृश्यता को परिभाषित करते हुए लिखा है, "किसी निश्चित स्तर के परिवार में जन्म लेने वाले सदस्य के स्पर्श मात्र से अपवित्र हो जाने की स्थिति अस्पृश्यता है।"[17]

डॉ. अम्बेडकर के अनुसार, "अस्पृश्यता का आधार गंदगी, अपवत्रिता तथा छूत लग जाने की कल्पना तथा उससे मुक्त होने का तरीका व साधन है। यह एक स्थायी वंशानुगत कलंक है जो किसी प्रकार मिट नहीं सकता है।"[18]

प्रभाती मुखर्जी ने अपने अध्ययन "बेयोंड द फोर वर्णाज, द अनटचेबल्स इन इंडिया" (1988) में अस्पृश्यता को परिभाषित करते हुए लिखा है कि "स्पष्ट रूप से अस्पृश्यता का प्रथम लक्षण है कि वे हिन्दू जातियों के लिए अस्पृश्य हैं तथा द्वितीय, हिन्दू आबादी से पृथक आवास, हिन्दू जातियों के साथ सहभोज एवं वैवाहिक सम्बधों का निषेध सामयिक लक्षण है।"[19]

परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि अस्पृश्यता एक स्थायी कलंक है जो अस्पृश्य जातियों के ऊपर सदियों से थोपा गया है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें निम्न जाति के सदस्य द्वारा उच्च जाति के सदस्य को स्पर्श कर लेने मात्र से वह अपवित्र हो जाता है एवं उसे पुनः पवित्र होने के लिए कुछ संस्कार करने पड़ते हैं। अब यद्यपि शारीरिक एवं भौतिक अस्पृश्यता के व्यवहार में बदलाव आया है, लेकिन उसका स्थान मनोवैज्ञानिक अस्पृश्यता ने ले लिया है। हिन्दू समाज का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है जहाँ वर्ण श्रेष्ठता, जातिगत व्यवहार और अस्पृश्यता की मानसिकता न दिखाई देती हो। वर्ण, जाति तथा अस्पृश्यता का अंत निकट भविष्य में असम्भव लगता है, क्योंकि

---

[17] हिंगोरानी, ए. टी. (एडी.), माई फिलॉसफी ऑफ लाइफ बाई महात्मा गाँधी, बॉम्बे, पीयर्ल पब्लिकेशन्स प्रा. लि. 1961, पृ. 146

[18] अम्बेडकर, बी. आर., द अन्टचेबल्स, गोंडा, भारतीय बौद्ध शिक्षा परिषद, द्वि. सं., 1969, पृ. 1, 26

[19] मुखर्जी, प्रभाती, बेयोंड द फॉर वर्णाज : द अन्टचेबल्स इन इंडिया, शिमला, इंडियन इन्स्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडी, 1988, पृ. 14

हिन्दू धर्म उसका अनुमोदन करता है।[20] 1968 में काशी में आयोजित विश्व हिन्दू धर्म सम्मेलन में जगन्नाथ पुरी के शंकराचार्य ने अस्पृश्यता को न्यायोचित बताया है।[21] संघ परिवार मनुस्मृति एवं अन्य धार्मिक पुस्तकों को, जिनमें असमानता एवं शोषण को उचित बताया है, अपना आदर्श मानता है जबकि भारतीय संविधान को, जो समानता, स्वतन्त्रता एवं बंधुत्व पर आधारित है तथा इसमें बिना किसी भेदभाव के सभी नागरिकों को राजनैतिक, आर्थिक एवं सामाजिक अधिकार दिये हैं, विदेशी संविधान बताकर अलोचना है।[22]

1.3 अस्पृश्यता की उत्पत्ति एवं विकास

अस्पृश्यता की उत्पत्ति कब व कैसे हुई? इस प्रश्न के सम्बन्ध में व्यापक विरोधाभास दिखाई देता है। कोई एक निश्चित समय एवं तिथि बताना मुश्किल है जहाँ से कुछ व्यक्तियों को अस्पृश्य बताकर पशुतुल्य जीवन जीने को मजबूर किया गया। यहाँ यह भी स्पष्ट करना आवश्यक है कि 'शूद्र' एवं 'अस्पृश्य' दोनों पृथक–पृथक वर्ग हैं। इन दोनों को पर्यायवाची समझना भयंकर भूल है। एक आम धारणा है कि प्राचीन काल में था, आज की अस्पृश्य अथवा अनुसूचित जातियाँ उन्हीं शूद्रों की वंशज हैं। मेरे विचार से यह धारणा सत्य नहीं है।

प्राचीन हिन्दू समाज चातुर्वर्ण्य व्यवस्था पर आधारित रहा है जिसमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र नामक चार वर्णों का समावेश है। इनके अतिरिक्त प्राचीन हिन्दू साहित्य में अवर्ण, अन्त्यज, परियाह, अतिशूद्र, अस्पृश्य, श्वपच, चाण्डाल, पुल्केशा आदि अनेक शब्दों का उल्लेख मिलता है। अवर्ण शब्द प्रत्यक्षतः सवर्ण का विलोम है। सवर्ण का अर्थ है चारों वर्णों में से किसी एक का होना, जबकि अवर्ण का अर्थ है चारों वर्णों से पृथक होना, बाहर

---

[20] पर्वत्तमा, सी., केस फॉर इंडियन अनटचेबल्स, यूनाइटेड एशिया, वॉ. 20, नं. 5, सितम्बर–अक्टूबर, 1968

[21] नरगोलकर, वी. एस., रिमूवल ऑफ अन्टचेबल्टी : गोल्स एण्ड अटेनमेंट्स, इंडियन जनरल ऑफ सोशियल वर्क, वा. 30, नं. 3 अक्टूबर, 1969

[22] राजकिशोर (संपा), हरिजन से दलित, में मस्त राम कपूर का लेख, ब्राह्मणवाद का नया छल, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 1994, पृ. 105

होना। अछूत एवं अतिशूद्र अवर्ण हैं।[23] इसी प्रकार द्विज एवं अद्विज शब्द परस्पर विरोधी अर्थ रखते हैं। द्विज का अर्थ है दो जन्मों वाला और अद्विज का अर्थ केवल एक जन्म वाला है। उपनयन संस्कार को दूसरा जन्म माना गया है, अतः ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य जिनका उपनयन होता था, द्विज कहलाये। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि शूद्र एवं अस्पृश्य दोनों पृथक समुदाय रहे हैं तथा इन दोनों को पर्यायवाची समझना भ्रामक है। चारों वर्णों से पृथक होने के कारण ही अस्पृश्यों के लिए "पंचमा" या "फिफ्थकास्ट" जैसे शब्दों का प्रयोग भी हुआ है।

अस्पृश्यता की उत्पत्ति एकदम न होकर धीरे–धीरे इनका व्यवहार समाज में प्रचलित हुआ है। अस्पृश्यता अपने आप में एक स्वतन्त्र संस्था नहीं है अपितु यह हिन्दू समाज में जाति–व्यवस्था के साथ घनिष्ठता से सम्बद्ध है।[24] वी. एस. नारगोलकर के अनुसार अस्पृश्यता का व्यापक प्रचलन जाति का प्रचलन जाति का परिणाम है तथा जाति–व्यवस्था, वर्ण–व्यवस्था की अवैध संतान है।[25] इसी प्रकार का उल्लेख करते हुए माननीय न्यायाधीश नसीरूल्ला बेग ने लिखा है कि "अस्पृश्यता अपने आप में कोई पृथक संस्था नहीं है। यह हिन्दू समाज में गहराई से जड़ें जमा चुकी जाति–व्यवस्था से सम्बद्ध है।[26] जाति–व्यवस्था से सम्बद्ध होने के कारण अस्पृश्यता की उत्पत्ति जाति की उत्पत्ति के साथ जुड़ी हुई है तथा जातियों की संख्या में निरन्तर वृद्धि ने अस्पृश्यता को व्यापक बनाया है। इसकी उत्पत्ति का विश्लेषण ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में निम्न बिन्दुओं के आधार पर किया जा सकता है।

---

[23] अम्बेडकर, बी. आर., हू वर द शूद्राज? हाऊ दे केम टू बी फोर्थ वर्ण इन द इंडो आर्यन सोसायटी? बॉम्बे, ठक्कर, एण्ड कं. लि., 1946, पृ. 20

[24] रिपोर्ट ऑफ द कमेटी ऑन अनटचेबल्टी, इकॉनामिक एण्ड एजूकेशनल डेवलपमेंट ऑफ शिड्यूल्ड कास्ट्स एण्ड कनेक्टेड डाक्यूमेंट्स, न्यू देहली, लोकसभा सेक्रेटिरेट, 1969, पृ. 1

[25] नारगोलकर, वी. एस., 1969, इबिद, पृ. 26

[26] बेग, नसीरूल्ला जे, राइट्स ऑफ माइनारिटीज अंडर द इंडियन कांस्टीट्यूशन, लखनऊ, बुद्ध विहार, 1976, पृ. 19

1.3.1 पूर्व मनुस्मृति युग

पूर्व मनुस्मृति युग में वैदिक काल, ब्राह्मण–आरण्यक काल, उपनिषद, महाकाव्य एवं जैन तथा बौद्धकाल शामिल हैं। ऋग्वेद के पुरूष सूक्त में उल्लेख है कि विराट पुरूष के द्वारा शरीर के विविध अंगो से समाज में चार वर्णों को जन्म दिया गया है। यह विभाजन स्वतः चारों वर्णों के स्तर को दर्शाता है। इन चार वर्णों के अलावा वैदिक साहित्य में असुर, दास, दस्यु एवं राक्षस शब्दों का उल्लेख हुआ है, लेकिन यह निश्चित करना कठिन है कि इनको अस्पृश्य समझकर इनके साथ अस्पृश्यता का बर्ताव किया जाता था। शतपथ ब्राह्मण में एक जगह उल्लेख है कि ब्राह्मणों एवं असुरों में यदा–कदा अपनी–अपनी सर्वोच्चता सिद्ध करने के कारण विवाद होते थे। एक बार प्रजापति ने असुरों को पराजित किया तथा उसके बाद ब्राह्मण आज तक उन्हें अपमानित करते रहते हैं।[27] उपनिषद काल में भी देवों एवं असुरों के मध्य इस प्रकार के संघर्ष के वृतान्त मिलते हैं, लेकिन इस काल में भी निर्योग्यता के रूप में अस्पृश्यता का उल्लेख नहीं मिलता है।[28] रामायण में एक दृष्टान्त आता है जिसमें उल्लेख किया है कि एक शूद्र ऋषि शंबूक की कठोर तपस्या के कारण एक ब्राह्मण बालक की मौत हो गई। ब्राह्मणों ने राम से प्रार्थना की कि शंबूक की तपस्या के कारण ब्राह्मण लड़के की मृत्यु हुई है। राम ने बिना जाँच पड़ताल के शंबूक का वध कर दिया।[29] महाभारत में एकलव्य की कथा है जिसमें उसकी जाति भील होने के कारण कौरव–पाण्डवों के गुरू द्रोणाचार्य ने उसे अपने आश्रम में शिक्षा देने तथा अपना शिष्य स्वीकार करने से इनकार कर दिया। बाद में द्रोणाचार्य ने एकलव्य की धनुर्विद्या से प्रभावित होकर उसके दाहिने हाथ का अंगूठा गुरूदक्षिणा में मांगा। इन दोनों घटनाओं से अस्पृश्यता एवं घृणा का उल्लेख मिलता है, लेकिन फिर भी इस समय तक

---

[27] इंग्गलिंग, जूलियस, सतपथ ब्राह्मण–पार्ट–1, देहली, मोती लाल बनारसी दास, 1963, पृ. 54

[28] मूलर, मैक्स. एफ., द उपनिषद, देहली, मोतीलाल बनारसीदास, 1965, पृ. 4

[29] शास्त्री, शिवराम, श्रीमद् वाल्मीकी रामायण, वाराणसी, चौखम्बा विद्याभवन, 1977, उत्तर काण्ड, पृ. 1029–30

अस्पृश्यता स्थायी एवं वंशानुगत नहीं थी, केवल सामयिक स्तर पर दिखाई देती थी।[30]

1.3.2 मनुस्मृति युग

मनु ने मनुस्मृति की रचना पुष्यमित्र शुंग द्वारा मौर्य शासक वृहद्रथ के विरूद्ध की गई राज्य क्रान्ति के दार्शनिक समर्थन में लगभग 185 ई.पू. की थी।[31] मनु के समय अनुलोम एवं प्रतिलोम विवाह के कारण चार वर्णों के अलावा अनेक निम्न जातियों का जन्म हुआ। मनु ने इस प्रकार की संतानों को 'वर्ण संकर' नाम से संम्बोधित किया।[32] मनु ने इन निम्न जातियों एवं शूद्रों पर अनेक प्रकार की अयोग्यताएँ लगाई तथा शूद्रों एवं वर्णसंकर जातियों को राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक स्वतन्त्रता तथा समानता के अधिकार से वंचित किया। फिर भी निश्चित रूप से यह कहना कठिन है कि मनु द्वारा निर्धारित अयोग्यताएँ अस्पृश्यता पर आधारित थीं, जैसा कि अम्बेडकर ने लिखा है, "मनु के समय अस्पृश्यता नहीं थी उस समय केवल 'अपवत्रिता' थी। चाण्डाल के प्रति मनु का भाव मात्र घृणा का है, वह चाण्डाल भी केवल मात्र अपवित्र ही था।[33] पंचम वर्ण के सन्दर्भ में डा. अम्बेडकर आगे लिखते हैं, "नारद स्मृति दासों को पाँचवा वर्ण मानकर उनका उल्लेख करती है। यदि नारद स्मृति में पाँचवें वर्ण का नाम 'दास' हो सकता है तो कोई कारण नहीं है कि मनुस्मृति में पाँचवें में पाँचवें वर्ण का अर्थ दास न हो।" इन तर्कों से स्पष्ट होता है कि मनु के समय में जाति–व्यवस्था, ब्राह्मणों की सर्वोच्चता और निम्न जातियों एवं शूद्रों पर अयोग्यताएँ थीं, लेकिन अस्पृश्यता नहीं थी।[34]

---

[30] सत्वलेकर, एस. डी. (अनु.), महाभारत (आदिपर्व), बलसाड़, स्वाध्याय मण्डल, पराथी, 1979, पृ. 669–673

[31] क्षीरसागर, आर. के., 1986, इबिद, पे. 34: अम्बेडकर, बी. आर., अछूत कौन और कैसे? भदन्त आनन्द कौसल्यान (अनु.), लखनऊ, कल्चरल पब्लिशर्स, 1990, पृ. 168

[32] विस्तृत अध्ययन के लिए देखें – बुहलर, जी., दा लाज ऑफ मनु, देहली, मोतीलाल बनारसीदास, 1964: अम्बेडकर, बी. आर., हिन्दू धर्म का गूढ़ रहस्य, एस. मूर्ति (अनु.) ए लखनऊ कल्चरल पब्लिशर्स, 1991: अम्बेडकर, बी. आर., शूद्रों की खोज, एस. मूर्ति (अनु.) लखनऊ, कल्चरल पब्लिशर्स, 1991: चतुर्वेदी, ज्वालाप्रसाद, मनुस्मृति, हरिद्वार, रणधीर बुक सेल्स (प्रकाशन) पृ. सं. 1992

[33] अम्बेडकर, बी.आर., 1969, इबिद, पृ. 186

[34] इबिद, पे. 178: क्षीरसागर, आर. के.,, 1986 इबिद., पृ, 35

1.3.3 उत्तर मनुस्मृति युग

उत्तर मनुस्मृति युग अस्पृश्यता की उत्पत्ति का साक्षी है। अम्बेडकर के मतानुसार इस युग में अस्पृश्यता की उत्पत्ति के दो प्रमुख कारण थे– (अ) बौद्ध धर्म की अवमानना, (ब) छितरे हुए आदमियों द्वारा मृत पशुओं का माँस भक्षण जारी रखना। एक प्रसिद्ध चीनी यात्री फाह्यान (399–414 ई.) ने तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था का चित्रण करते हुए लिखा है कि "चाण्डाल गाँव से बाहर एक ओर रहते हैं। जब वे शहर या बाजार में प्रवेश करते हैं तो उन्हें एक विशेष प्रकार की आवाज करनी पड़ती है ताकि उच्च जाति के सदस्य उनके स्पर्श से बच सकें।[35] इसी प्रकार दूसरे चीनी यात्री ह्वेनसांग (629 ई.) ने अपृश्यों की दशा का उल्लेख करते हुए लिखा है कि "कसाई, धोबी, नट–नर्तक, बधिक और भंगियों की बस्ती एक निश्चित चिन्ह द्वारा पृथक की गई है। वे शहर से बाहर रहने के लिए मजबूर किये जाते हैं और जब कभी उन्हें किसी घर के पास से गुजरना होता है तो वे बायीं ओर बहुत दबकर निकलते हैं।"[36] इन दोनों यात्रियों के वृतान्त से स्पष्ट होता है कि लगभग 400 ई. के आस–पास अस्पृश्यता की उत्पत्ति हो चुकी थी एवं यह एक संस्था के रूप में समाज में अपना स्थान बना चुकी थी।

1.3.4 मध्य युग

मध्य युग में महत्वपूर्ण सूचना अलबरूनी के यात्रा वृतान्त से मिलती है जिसने 1007 से 1033 ई. के मध्य भारत का भ्रमण किया। उन्होंने लिखा कि "शूद्रों के नीचे आने वाले 'अन्त्यज' कहलाते हैं। इन अन्त्यजों की आठ श्रेणियाँ हैं– चमड़ा कमाने वाले, चमार, जुलाहे, जादूगर, टोकरी बनाने वाले, नाविक, मछुआरे एवं बहेलिये। इनमें चमार, मोची और जुलाहों को छोड़कर परस्पर शादी–विवाह होते हैं। हाड़ी, होम, चाण्डाल, बधातु आदि

---

[35] लेगे, जेम्स, द ट्रेवलर्स ऑफ फॉह्ययान, देहली, ओरियेंट पब्लिकेशन्स, 1971, पृ. 43

[36] वाल्टर, ह्वेनसांग वॉ. 1, कोटेड बाई बी. आर. अम्बेडकर इन द अन्टचेबल्स, 1969, इबिद., पृ. 198

जातियाँ शहर में सफाई का कार्य करती हैं।[37] इस समय सम्पूर्ण भारत में अस्पृश्यता व्यवहार में आ चुकी थी। यादव कालीन साम्राज्य में अस्पृश्य गाँव के मुख्य द्वार से बाहर रहते थे तथा उनके पानी के स्त्रोत भी पृथक होते थे। महाराष्ट्र के प्रसिद्ध संत चोखा महार को पंढ़रपुर मंदिर के प्रवेश की विजयनगर सम्राट ने अनुमति प्रदान नहीं की।[38] मुस्लिम युग में जाति–व्यवस्था तथा अस्पृश्यता के प्रति मुस्लिम सम्राटों के विरीत रवैये के कारण जाति–व्यवस्था अत्यधिक कठोर हो गई एवं अस्पृश्यता समाज में गहराई से व्याप्त होती चली गई।[39]

1.3.5 आधुनिक युग

यद्यपि अस्पृश्यता की उत्पत्ति एक संस्था के रूप में मध्य युग के प्रारम्भ में ही हो चुकी थी तथा अस्पृश्यों के साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता था। लेकिन आधुनिक युग में लगभग अठारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में इसका तीव्र गति से विकास हुआ। मुगल साम्राज्य के पतन एवं ब्रिटिश शासन की स्थापना के दौर में यह प्रत्यक्षतः कुख्यात रूप में दिखाई देने लगी। सच्चिदानन्द ने दक्षिण भारत में अस्पृश्यता की स्थिति का उल्लेख करते हुए 'द हरिजन इलिट' (1977) नामक अध्ययन में लिखा है कि "दक्षिण भारत में एक स्थान पर लोग विभिन्न जाति समूहों से निश्चित दूरी का ध्यान रखते हैं। शूद्रों को अपने से तुरन्त ऊपर वाले वर्ग से 33 फीट, उससे ऊपर वाले वर्ग से 66 फीट तथा ब्राह्मणों से 99 फीट की दूरी पर रहना अनिवार्य है। इसके साथ ही उच्च जातियों के मोहल्लों से गुजरते समय उन्हें (अस्पृश्यों) एक विशेष प्रकार की आवाज तथा विशेष चिन्ह धारण करना पड़ता है।[40] 1777 में एक मराठा पेशवा रघुनाथ राव की पत्नी आनन्दी बाई ने, जो कि वास्तविक शासक थी, एक आदेश पारित किया, जिसमें कहा गया कि महार चलते हुए

---

[37] सचान, एड्वर्ड, सी., अलबरूनीज इंडिया, देहली, एस. चंद एण्ड कं., 1964, पृ. 101, 137

[38] क्दम, एस. बी., (संपादक) श्री संत चोखा मेला महाराज, बॉम्बे, भीमदीवाला बिल्डिंग, वारलीनाका, 1969, पृ. 55

[39] सागर, एस. एल., हिन्दू संस्कृति में वर्ण–व्यवस्था और जातिवाद, लखनऊ, बहुजन कल्याण प्रकाशन, पृ. 49

[40] सच्चिदानन्द, द हरिजन इलिट : ए स्टडी ऑफ देअर स्टेट्स, नेटवर्क, माबलिटी एण्ड रोल इन सोशियल ट्रासफारमेशन, फरीदाबाद, थामसन प्रेस (इंडिया) लि., 1977, पृ. 4

अपने पद चिन्हों को मिटाते चलेंगे, थूक के लिए गले में एक पात्र रखेंगे तथा पान चबाना निषिद्ध होगा। इस आदेश का कठोरता से पालन कराया गया।[41]

एक अन्य घटना से यह ज्ञात होता है कि किस प्रकार अस्पृश्यों के ऊपर अमानवीय प्रतिबंध लगाये गये थे। 1783 में भरूच में एक 'मराठा घोषणा' जारी की गई जिसमें तीन अस्पृश्य जातियों हलालखोर, डेढ़ और चाण्डाल को प्रातः 9 बजे बाद अपने घरों से निकलने पर प्रतिबंध लगाया गया था ताकि उच्च हिन्दू उनकी वायु एवं स्पर्श से बच सकें।[42]

हट्टन ने अस्पृश्यता का विस्तृत विवेचन करते हुए कुछ निर्योग्यताएँ गिनाई हैं, जिनके आधार पर अस्पृश्य जातियों का निर्धारण किया जा सकता है। ये निर्योग्यताएँ निम्न हैं –[43]

1. उच्च स्थिति प्राप्त ब्राह्मणों की सेवा से वंचित
2. सवर्णों की सेवा करने वाले नाइयों, कहारों तथा दर्जियों की सेवा पाने के अयोग्य
3. हिन्दू मन्दिरों में प्रवेश के अयोग्य
4. सार्वजनिक सुविधाओं (पाठशाला, कुआँ, सड़क, पार्क) के उपयोग पर प्रतिबन्ध
5. घृणित पेशे को त्यागने या अलग होने पर प्रतिबन्ध

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में अस्पृश्यता के आधार पर डा. अम्बेडकर को संस्कृत विषय के अध्ययन की अनुमति नहीं दी गई।[44] यहाँ तक कि 1917 में कोलम्बिया विश्वविद्यालय, अमेरिका से उच्च शिक्षा प्राप्त कर लौटने के बाद बड़ौदा महाराज सयाजीराव ने जब अम्बेडकर को सैन्य सचिव

---

[41] क्षीसागर, आर. के., 1989, इबिद, पृ. 39–40
[42] ओ' मेली, एल.एस.एस., इंडियन कास्ट कस्टम्स, देहली, विकास पब्लिसिंग हाउस, 1974, पृ. 147
[43] हट्टन, जे.एच., कास्ट इन इंडिया, लंदन, आक्सफोर्ड यूनिवर्सटी प्रेस, 1946, पृ. 195
[44] कीर, धनन्जय 1954, इबिद, पृ. 19

पद पर नियुक्त किया, तब भी एक सवर्ण हिन्दू चपरासी अपवित्र होने के भय से सरकारी फाइलों को दूर से फेंकता था।[45]

पिकॉक ने अपने अध्ययन क्षेत्र गुजरात के कैरा जिले की एक घटना का वर्णन करते हुए लिखा है कि "नानू गाँव के बारिया जाति का एक युवक पाटीदार स्टाइल में धोती पहने, हाथ में लम्बी छड़ी (लाठी) लिये हुक्का पीते हुए गाँव से गुजर रहा था। एक अग्रणी पाटीदार ने उस युवक को रोका एवं निर्दयता से पिटाई की तथा भविष्य में कभी भी पाटीदार स्टाइल में धोती पहनने एवं हुक्का पीने से मना किया।[46] दिसम्बर, 1930 में दक्षिण भारत में रामनाद जिले की एक प्रभुत्वशाली 'कालर' जाति ने हरिजनों के ऊपर आठ प्रतिबंध लगाये। परिणामस्वरूप भयंकर विवाद उत्पन्न हो गया, हरिजनों की झोपड़ियाँ जलाईं गईं, उनकी फसल एवं सम्पत्ति को नष्ट किया गया एवं मारपीट तथा लूट–पाट की गई।[47] बिहार में भी इसी प्रकार की अनेक घटनाएँ हुईं। जब बिहार के हरिजनों ने यज्ञोपवीत धारण किया तो सवर्ण जातियों के सदस्यों ने उनके यज्ञोपवीत तोड़ डाले एवं हरिजनों को बुरी तरह पीटा गया।[48] 1935 में गुजरात में एक घटना घटी। कविथा (गुजरात) के हिन्दुओं ने अस्पृश्यों को आदेश दिया कि गाँव के सरकारी विद्यालय में अपने बच्चों को न भेजें।[49]

ब्रिटिश शासन के दौरान अस्पृश्यता का व्यापक विकास हुआ। यद्यपि अंग्रेज जाति–व्यवस्था में विश्वास नहीं करते थे, लेकिन उन्होंने सत्ता में रहते हुए भी अस्पृश्यता उन्मूलन की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। गोलमेज सम्मेलन में ब्रिटिश सरकार की आलोचना करते हुए डा. अम्बेडकर ने कहा था, "यद्यपि सरकार ने यह महसूस किया कि जमींदार लोग असहाय, गरीब

---

[45] इबिद, पृ. 154

[46] पिकाक, डी.एफ., द मूवमेंट ऑफ कारट्स, मैन, मई, 1955, पृ. 71–72

[47] हट्टन, जे.एच., 1963, इबिद, पृ. 205–206

[48] सच्चिदानन्द, 1977, इबिद, पृ. 120

[49] अम्बेडकर, बी.आर., 1969, पृ. 40

एवं दलितों का खून चूसे जा रहे हैं, फिर भी सरकार ने उन सामाजिक बुराइयों का अन्त नहीं किया, जिनसे दलितों का जीवन सदियों से मुरझाया पड़ा है। सरकार के पास इन बुराइयों को समाप्त करने की कानूनी शक्ति है, पर उसने सामाजिक–आर्थिक जीवन की वर्तमान संहिता को नहीं बदला।" अम्बेडकर ने आगे कहा, "ब्रिटिश सरकार से पूर्व हम अस्पृश्य थे। क्या ब्रिटिश सरकार ने उसकी समाप्ति के लिए कुछ किया? ब्रिटिश शासन से पूर्व हम कुओं से पानी नहीं भर सकते थे। क्या ब्रिटिश सरकार ने यह अधिकार हमें दिलाया है? ब्रिटिश सरकार से पूर्व हमको मन्दिरों में प्रवेश, पुलिस एवं सेना में भर्ती का अधिकार नहीं था। क्या इस सरकार ने हमें यह अधिकार दिलाये हैं? यद्यपि 150 वर्ष ब्रिटिश शासन के भारत में बीत चुके हैं, लेकिन अस्पृश्यों के दुख–दर्द ज्यों के त्यों बने हुए हैं।[50] ब्रिटिश सरकार के दृष्टिकोण का मूल्यांकन करते हुए ओ'मेली का कहना है कि "ब्रिटिश भारत में न तो जाति पर कोई प्रतिबन्ध था और न ही जातिगत रीति–रिवाजों में राज्य का कोई हस्तक्षेप था। सरकार अहस्तक्षेप की नीति का अनुसरण करती थी, इसके लिए सरकार का यह निश्चित सिद्धान्त था कि वह सामाजिक कानूनों एवं व्यक्तिगत रीति–रिवाजों में तब तक कोई हस्तक्षेप नहीं कर करेगी, जब तक सामान्यतया लोग न चाहें।[51] 1950 के दशक में गाँवों में ढ़ेकली से पानी चलता था और रस्से का इस्तेमाल होता था। कुओं से सिंचाई के लिए पानी निकालने का कार्य दलित करते थे। परन्तु यदि कोई दलित अपने पीने के लिए पानी भरने अपनी गागर लेकर आता था तो उसे कुएँ पर चढ़कर पानी निकालने की अनुमति नहीं थी या तो उसे खाली गागर लिए लौटा दिया जाता था, या कोई सवर्ण अपने पात्र से पानी निकाल कर उसके बर्तन में उड़ेल देता था। साइकिल पर चढ़कर एक दलित का गाँव से गुजरना एक घटना मानी जाती थी।

---

[50] डा. बाबा साहेब अम्बेडकर– राइटिंग्स

[51] ओ'मेली, एल.एस.एस., इंडिया'ज सोशियल हेरिटेज, लंदन, ऑक्सफोर्ड एट दी क्लेरेंडन प्रेस, 1934, पे. 63

1.4 अनुसूचित जातियाँ

'शिड्यूल्ड कास्ट' शब्द का हिन्दी रूपान्तर 'अनुसूचित जाति' है। अनुसूचित जाति एक संवैधानिक शब्द है, क्योंकि संविधान में इसे पूर्ण वैधानिकता प्रदान की गई है। संविधान के अनुच्छेद 341(1) में कहा गया है कि "राष्ट्रपति, किसी भी राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के सम्बन्ध में और जहाँ वह राज्य करता है वहाँ उसके राज्यपाल से परामर्श करने के पश्चात्, लोक अधिसूचना द्वारा, उन जातियों, मूलवंशों या जन–जातियों अथवा मूलवंशों या जन–जातियों के भागों या उनके यूथों को विनिर्दिष्ट कर सकेगा, जिन्हें इस संविधान के प्रयोजनों के लिए यथास्थिति, उस राज्य या संघ राज्य क्षेत्र के सम्बन्ध में दलित समझा जायेगा।" इसी प्रकार अनुच्छेद 341(2) में स्पष्ट किया गया है कि "संसद, विधि द्वारा, किसी जाति, मूलवंश या जनजाति को अथवा उसके किसी भाग को खण्ड (1) के अधीन निकाली गई अधिसूचना में विनिर्दिष्ट अनुसूचित जातियों की सूची में सम्मिलित कर सकेगी या उसमें से अपवर्जित कर सकेगी।" अनुच्छेद 366(24) में अनुसूचित जातियों के सम्बन्ध में कहा है कि "दलितों से ऐसी जातियाँ, मूलवंश या जनजातियाँ अथवा ऐसी जातियों मूलवंशो या जनजातियों के भाग या उनमें के यूथ अभिप्रेत हैं जिन्हें इस संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुच्छेद 341 के अधीन अनुसूचित जातियाँ समझा है।"[52]

अनुसूचित जातियाँ हिन्दू समाज व्यवस्था की अस्पृश्य जातियाँ हैं। निर्धारित चातुवर्ण्य व्यवस्था से पृथक, ऐसे लोगों का समुदाय, जो रंग के काले तथा अस्वच्छ पेशों से सम्बद्ध थे, अस्पृश्य कहे जाते थे।[53] प्राचीन धर्म ग्रन्थों में इन्हें चाण्डाल, अन्त्यज, श्वपच, पतित, परियाह, अतिशूद्र, अवर्ण आदि अनेक नामों से सम्बोधित किया गया है। इन जातियों को सबसे निम्न स्तर का व्यवसाय प्रदान किया गया एवं समाज में इनकी निम्नतम प्रस्थिति थी।

---

[52] भारत का संविधान, इलाहाबाद, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन्स, 1994, पृ. 99, 12

[53] पेरूमल, निल्कान, द अन्टचेबल्स, मद्रास, आर.जे. राम एण्ड कम्पनी, 1937, पृ. 45

चारों वर्णों से पृथक होने के कारण इन्हें पंचम वर्ण (पंचमास) या 'फिफ्थकास्ट' के नाम से भी सम्बोधित किया गया।[54]

19वीं शताब्दी में इन अस्पृश्य जातियों के लिए एक प्रसिद्ध गुजराती संत नरसिंह मेहता ने 'हरिजन' (ईश्वर की संतान) नाम से सम्बोधित किया, जिसे आगे चलकर बीसवीं शताब्दी में महात्मा गाँधी ने लोकप्रिय बनाया।[55] 1931 में असम के जनगणना अधीक्षक ने इन जातियों के लिए "एक्सटीरियर कास्ट्स" शब्द का प्रयोग किया। आगे चलकर हट्टन ने इस शब्द को अपने अध्ययन में इस्तेमाल किया। हट्टन ने अपने अध्ययन 'कास्ट इन इंडिया' (1946) में अस्पृश्य जातियों को बाहरी जातियों के नाम से सम्बोधित किया।"

ब्रिटिश शासन के दौरान जब 1901 में जनगणना की गई तो अस्पृश्य जातियों को हिन्दुओं से पृथक वर्गीकृत किया गया। इसके बाद 1911 मे एक कमेटी उन जातियों की जाँच–पड़ताल के लिए नियुक्त की गई जो कि सामाजिक–धार्मिक दृष्टि से निम्न स्तर पर थीं।[56] 1921 में की गई जनगणना में अस्पृश्य जातियों के लिए अंग्रेजों ने सरकारी तौर पर 'डिप्रेस्ड क्लासेज' के नाम का प्रयोग किया। परन्तु उन्होंने इस शब्द का प्रयोग करने में निहित परिभाषा का उल्लेख नहीं किया।[57] डा. अम्बेडकर ने भी अस्पृश्य जातियों के लिए ब्रिटिश सरकार द्वारा दिये गये नाम 'डिप्रेस्ड क्लासेज' का ही प्रयोग किया। 1930 में प्रस्तुत प्रतिवेदन में साइमन कमीशन ने इन जातियों के लिए नया नाम 'शिड्यूल्ड कास्ट' प्रदान किया, जिसे 1931 की जनगणना में पूर्णतः परिभाषित एवं संशोधित रूप में प्रयोग किया गया। 1935 के भारतीय शासन अधिनियम की पाँचवीं अनुसूची की धारा 19 में इस शब्द का

---

[54] रेवन्कर, रतन, द इंडियन कांस्टीट्यूशन : ए केश स्टडी ऑफ बेकवर्ड क्लासेज, फेयरलीघ, डिकिन्सन यूनिवर्सटी प्रेस, 1971, पृ. 112

[55] मूर्थी, बी.एस., डिप्रेस्ड एण्ड ओप्रेस्ड, न्यू देहली, एस चांद कम्पनी, 1971, पृ. 45

[56] विद्यार्थी, एल.पी. तथा मिश्रा, एन., हरिजन टुडे, न्यू देहली, प्रेन्टिस हाल ऑफ इंडिया प्रा. लि., 1977, पृ. 3

[57] सिंह, रवि प्रताप, दलित जाति के विधानमण्डलीय अभिजन, दिल्ली, मितत‍ल पब्लिकेशन्स, 1989, पृ. 15

अधिकारिक रूप में प्रयोग किया गया। यहाँ अनुसूचित जातियों से अभिप्राय उन जातियों से था, जिनको विशेष सुविधाएँ देने के उद्देश्य से ब्रिटिश सरकार ने एक अनुसूची (शिड्यूल) में सम्मिलित किया था। आज भी इस अनुसूची में शामिल जातियों को दलितों के नाम से सम्बोधित किया जाता है तथा यह शब्द संवैधानिक बन गया है।

1.5 अभिजन अवधारणा

अभिजन' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम 17वीं शताब्दी में विशेष श्रेष्ठता वाली वस्तुओं का वर्णन करने के लिए किया गया और बाद में इस शब्द का प्रयोग उच्च सामाजिक समुदायों यथा शक्तिशाली सैनिक इकाइयों और उच्च श्रेणी के सामंत वर्ग के लिए किया जाने लगा। ऑक्सफोर्ड इंगलिश डिक्शनरी के अनुसार अंग्रेजी भाषा के 'एलिट' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम 1923 में हुआ, उस समय तक यूरोप के अन्य देशों में इस शब्द का प्रयोग सामाजिक समहों के लिए होने लगा था। लेकिन यूरोप में उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक एवं ब्रिटेन, अमेरिका में बीसवीं शताब्दी के मध्य तक सामाजिक तथा राजनीतिक रचनाओं में 'एलिट' शब्द का व्यापक प्रचलन नहीं हो पाया था। उस समय यह अभिजनों से सम्बन्धित समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों के माध्यम से विशेषतः परेटो की रचनाओं में प्रचलन में आया।[58]

अभिजन वर्ग धनिक वर्ग, कुलीन वर्ग या पूँजीपति वर्गों का समानार्थी नहीं है। वह वर्ग इन सभी वर्गों से अधिक व्यापक एवं परिष्कृत है। अभिजन वर्ग में यद्यपि धनिक, कुलीन एवं पूँजीपति वर्गो की अनेक विशेषताएँ दिखाई देती हैं, फिर भी यह एक स्थायी एवं रूढ़ वर्ग न होकर गतिशील वर्ग है जिसमें नवीन सदस्यों का आगमन होता रहता है।[59]

---

[58] बॉटीमोर, टी.बी., इलिट एण्ड सोसायटी, मिडिलसैक्स, पेब्जियन बुक्स, 1966, पृ. 7

[59] बर्थवाल, चन्द्रप्रकाश एवं पाण्डेय, रामनिवास, आधुनिक राजनीतिक विश्लेषण, लखनऊ, उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, 1974, पृ. 441

परेटो श्रेष्ठता को अभिजन का द्योतक मानता है और कहता है कि अभिजन प्रभावशाली, बुद्धिमान, कुशल, चतुर और समाज के शासक होते हैं।[60] कोलाब्रिस्का ने भी श्रेष्ठता को अभिजन की प्रमुख पहचान माना है। इसी प्रकार नाडेल[61] ने भी अपने लेख में इस बात का पर बल दिया है कि किसी भी अभिजन की पहचान कराने वाला प्रमुख लक्षण सामाजिक श्रेष्ठता है।

अभिजन की परिभाषा देते हुए लासवेल ने लिखा है, "एक राजनीतिक व्यवस्था के अन्तर्गत शक्ति को धारण करने वाला वर्ग ही राजनीतिक अभिजन होता है। शक्ति धारण करने वाले वर्ग में नेतृत्व करने वाला वर्ग तथा वे सामाजिक समुदाय आते हैं जिसके प्रति एक निर्दिष्ट समय में यह उत्तरदायी रहता है।[62]

सी. राइटमिल्स के अनुसार, "अभिजन उन व्यक्तियों का संगठन है जो पैसा, शक्ति और प्रतिष्ठा के क्षेत्र में प्रभावी होते हैं तथा अपनी इच्छाओं की पूर्ति करने में सक्षम होते हैं, साथ ही ये महत्वपूर्ण निर्णय देने की दशा में होते हैं। अभिजन समाज के निर्णायक की स्थिति में होते हैं तथा इनकी शक्ति को समाज के किसी दूसरे अंग द्वारा नियन्त्रित नहीं किया जा सकता है।[63]

इसी प्रकार अभिजन शब्द को परिभाषित करते हुए आहूजा लिखते हैं कि "अभिजन उन व्यक्तियों का समूह है जो उच्च स्तर पर आसीन होते हैं एवं समुदाय में उनको उच्च प्रस्थिति प्राप्त होती है।"[64]

---

[60] परेटो, वी., द माइंड एण्ड सोसाइटी, फोर्थ वाल्यूम, लंदन, जोनाथन केप, 1935, पृ. 1422–23

[61] नाडेल, एस.एफ., द कानसेप्ट ऑफ सोशियल इलिट्स, इंटरनेशनल सोशियल साइंस बुलेटिन, वॉ. न. 3, 1956, पृ. 8

[62] लासवेल, एच.डी., लर्नर, डेनियल तथा रूथवेल, सी. ई., द कम्पेरेटिव स्टडी ऑफ इलिट्स, स्टेनफोर्ड, हूवर इन्स्टीट्यूट स्टडीज, 1952, पृ. 6

[63] मिल्स, सी.राइट., द पावर इलिट्स, न्यूयार्क, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सटी प्रेस, 1966., पृ. 49

[64] आहूजा, राम, पालिटिकल इलिट्स एण्ड मॉर्डनाइजेशन : द बिहार पालिटिक्स, मेरठ, मीनाक्षी प्रकाशन, 1975, पृ. 10

1.6 अभिजन के प्रकार

मोस्का पहला विचारक था जिसने अभिजन और जन–साधारण के बीच अन्य परिभाषित शब्दों के प्रयोग द्वारा व्यवस्थित अन्तर प्रदर्शित किया तथा इसे बुनियादी बनाकर राजनीति के नये विज्ञान का सृजन किया। मोस्का ने अपने अध्ययन में दो प्रकार के वर्ग बताये हैं – शासक वर्ग एवं शासित वर्ग। प्रथम वर्ग के लोगों की संख्या बहुत कम होती है लेकिन समस्त राजनीतिक गतिविधियों को यही वर्ग अंजाम देता है। इसके विपरीत दूसरा वर्ग बहुसंख्यक है, वह प्रथम वर्ग द्वारा कभी कमोबेश वैधानिक तरीके से और कभी कम और कभी ज्यादा स्वेच्छापूर्ण और कभी हिंसक तरीकों से नियन्त्रित होता है।[65] समाज में विविध क्षेत्रों में अलग–अलग प्रकार के अभिजन दृष्टिगोचर होते हैं। अनेक विद्वानों द्वारा अभिजन वर्ग का वर्गीकरण किया गया है।

1. कोलाब्रिस्का[66] ने फ्रांस के अभिजन वर्ग के अध्ययन में शासक अभिजनों को विभिन्न उपसमूहों के बीच व्यक्तियों के संचार के तत्व की विस्तार से चर्चा की है तथा अभिजन वर्ग के चार प्रकार बताए हैं–

(अ) धनी सदस्य

(ब) सामंत वर्ग

(स) सशस्त्र कुलीन वर्ग

(द) धर्मोपदेशक

2. परेटो[67] ने अभिजन वर्ग का वर्गीकरण दो रूपों में किया है–

(अ) शासक अभिजन

(ब) शासकेत्तर अभिजन

---

[65] मोस्का, जी., द रूलिंग क्लास, न्यूयार्क, मैक्यू हिल बुक कं. 1939, पृ. 50

[66] कोलाब्रिस्का, एम., सरकुलेशन ऑफ इलिट्स इन फ्रांस, लुसाने, प्राइमरी रिथुनाइस, 1912, पृ. 7

[67] परेटो, वी., 1935, इबिद, पृ. 1423–24

शासक अभिजन में शासन के भीतर प्रत्यक्षतः या अप्रत्यक्षतः रूप से महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने वाले लोगों का समावेश होता है तथा शासकेत्तर अभिजन वर्ग में समाज के शेष लोग शामिल होते हैं। परेटो का यह वर्गीकरण बुद्धि, संगीत एवं गणित विषयों के प्रति अभिरूचि, चरित्र, सामाजिक एवं राजनीतिक प्रभाव की शक्ति आदि आधारों पर है।

3. बाटोमोर[68] ने विकासशील देशों में पाँच प्रकार के अभिजनों का उल्लेख किया है–

(अ) क्रान्तिकारी बुद्धिवाद
(ब) राष्ट्रवादी राजनीतिक नेता
(स) सैनिक अधिकारी
(द) शासकीय अधिकारी
(य) व्यवसायी

4. क्लार्क तथा अन्य[69] द्वारा औद्योगीकरण पर किये गए एक अध्ययन 'इंडस्ट्रलिज्म एण्ड इंडस्ट्रीयल मैन' (1966) के आधार पर औद्योगीकरण की प्रक्रिया में अभिजनों को निम्न पाँच भागों में वर्गीकृत किया है–

(अ) गतिशील अभिजन
(ब) मध्यम वर्ग
(स) क्रान्तिकारी
(द) प्रशासक
(य) राष्ट्रीय नेता

---

[68] बाटोमोर, टी.बी., 1966, इबिद, पृ. 107
[69] क्लार्क, जे., डनलप, टी., हरबिसन, फ्रेडरिक, एच. तथा चार्ल्स, इन्डस्ट्रीयल मैन, कैम्ब्रिज, हार्वरड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1966, पृ. 50

5. अभिजन वर्ग का एक अन्य वर्गीकरण अमेरिका में किये गये अपने अध्ययन 'पावर इलिट' (1966) में सी. राइट मिल्स[70] ने किया है। उनके अनुसार तीन प्रकार के अभिजन होते हैं–

(अ) निगमों के प्रधान

(ब) राजनीतिक नेता

(स) सैनिक प्रमुख

6. अभिजन का एक अन्य वर्गीकरण शिल्स[71] द्वारा सम्पादित ग्रन्थ में चार प्रकार्यात्मक समस्याओं, जिन्हें प्रत्येक समाज को सुलझाना आवश्यक है, के आधार पर किया गया है। ये चार प्रकार के अभिजन निम्नांकित हैं–

(अ) लक्ष्य प्राप्ति विषयक – ये कार्य राजनेताओं द्वारा नीतियों, विनिश्चयों आदि के निर्माण के रूप में किये जाते हैं।

(ब) अनुकूलन सम्बन्धी – ये कार्य वाणिज्य, सैनिक, राजनयिक एवं वैज्ञानिक समहों के शीर्षस्थ सदस्यों द्वारा किये जाते हैं।

(स) एकीकरण सम्बन्धी – अभिजन की इस श्रेणी में धर्माधिकारियों, दार्शनिकों, शिक्षाविदों जैसे नैतिक अधिकारों का प्रयोग करने वाले सदस्य शामिल होते हैं।

(द) प्रतिमान संधारण – उच्च्व कोटि के कलाकारों, लेखकों, फिल्म अभिनेताओं, अच्छे खिलाड़ियों, हास्य कलाकारों आदि के अभिजन इस श्रेणी में सम्मिलित किये जाते हैं।

7. अभिजनों का अब तक का वर्गीकरण विदेशी विद्वानों द्वारा किया गया है। स्वतन्त्रता के बाद भारत में विभिन्न क्षेत्रों में अभिजन वर्ग का उदय हुआ है। अभिजन वर्ग को लेकर भारत में विभिन्न प्रकार के अध्ययन

---

[70] मिल्स, सी. राइट, 1966, इबिद, पृ. 21

[71] शिल्स, डेविड (एडी.), एनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइंसेज, दहली मैकमिलन ऑफ इंडिया, 1968

किये गये हैं। इन अध्ययनों के आधार पर भारत में अभिजन वर्ग को निम्नांकित प्रमुख दो प्रमुख श्रेणियों में रखा जा सकता है–

(क) ग्रामीण अभिजन (ख) शहरी अभिजन

ग्रामीण अभिजन को पुनः 5 भागों में विभाजित किया जा सकता है–

(अ) ग्राम प्रधान (ब) सामुदायिक नेता (स) जातीय नेता

(द) पुरोहित (य) क्षेत्र विकास समिति के सदस्य

शहरी अभिजनों को भी हम पुनः 6 भागों में वर्गीकृत कर सकते हैं–

1. राजनेता

2. अधिकारी

प्रशासनिक

(अ) भारतीय प्रशासनिक एवं पुलिस सेवा

(ब) राज्य प्रशासनिक एवं पुलिस सेवा

(स) सैनिक प्रशासन

(द) अन्य जिला स्तरीय अधिकारी

व्यवसायिक

(अ) न्यायाधीश

(ब) अभियन्ता

(स) चिकित्सक

(द) निदेशक, कृषि, स्वास्थ्य, फिल्म आदि
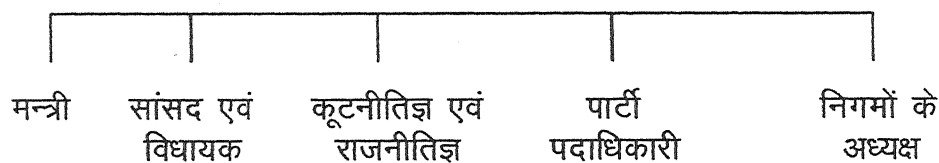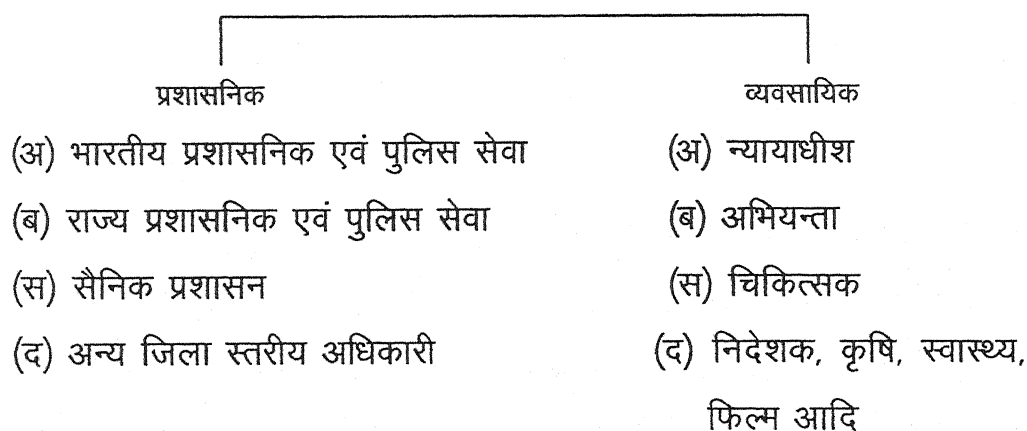
3. व्यवसाय एवं व्यापार

(अ) व्यापारी एवं उद्योगपति

(ब) उच्च कोटि के वकील

(स) आर्थिक संगठनों के सदस्य

4. संघो के पदाधिकारी

(अ) जातीय एवं सामाजिक संगठन

(ब) श्रमिक संगठन

(स) छात्र संगठन

(द) व्यावसायिक संगठन

5. बुद्धिजीवी

(अ) शैक्षणिक अभिजन

(ब) वैज्ञानिक

(स) पुरोहित, मौलवी एवं पादरी

(द) उच्च स्तरीय साहित्य सृजक

6. जन संचार

(अ) समाचार पत्रों के सम्पादक

(ब) उच्च स्तरीय पत्रकार

(स) दूरदर्शन अधिकारी एवं कलाकार

(द) चलचित्र अभिनेता

उपर्युक्त समस्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि राजनेता, नौकरशाह, उद्योग–धंधो के स्वामी तथा प्रबन्धक, बुद्धिजीवी और उच्च सैनिक अधिकारी अभिजन वर्ग के प्रमुख प्रकार हैं। विशेष परिस्थितियों के आधार पर अन्य कुछ वर्ग भी इनमें प्रवेश कर लेते हैं। इन अभिजन श्रेणियों में से विशेष समय में कौन अधिक प्रभावशाली होगा और कौन अपेक्षाकृत कम, यह परिस्थितियों पर निर्भर करता है। विवेचन से इतना स्पष्ट है कि सामान्यतः अभिजन निम्न प्रकार के होते हैं–

(अ) राजनीतिक अभिजन

(ब) प्रशासकीय अभिजन

(स) बौद्धिक अभिजन

(द) व्यावसायिक अभिजन

(य) विशेष क्षेत्रों में दक्ष, यथा– कलाकार, अभिनेता, पुरोहित, या धार्मिक नेता आदि।

(र) सैनिक अभिजन

1.7 भारत में अभिजन

अभिजन के बारे में किसी सैद्धान्तिक अवधारणा को स्वीकार करने से पूर्व यह आवश्यक है कि भारतीय सन्दर्भ में उपलब्ध साहित्य का अवलोकन किया जाए, ताकि विषय की आलोचनात्मक विवेचना की जा सके। भारत में अभिजन सम्बन्धी अध्ययन को कालक्रम के अनुसार निम्न चार भागों में विभाजित किया जा सकता है–

(अ) प्राचीन भारत के अभिजन

(ब) मध्य युग के अभिजन

(स) ब्रिटिश युग में अभिजन

(द) स्वतन्त्रता के बाद अभिजन

1.7.1 प्राचीन भारत के अभिजन

प्राचीन धर्मग्रन्थों एवं इतिहास के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारतीय समाज से ही अभिजन वर्ग का अस्तित्व रहा है। तत्कालीन समाज में अभिजनों की सामाजिक संरचना पदसोपान, पवित्रता एवं निरन्तरता पर आधारित थीं, जो हिन्दू संस्कृति के प्रमुख मूल्य रहें हैं। इस युग में राजा एवं पुरोहित दो महत्वपूर्ण अभिजन भूमिकायें थीं, किन्तु ब्राह्मण अथवा पुरोहित राजाओं के निर्णयों को प्रभावित करने की क्षमता रखते थे। सिद्धान्त रूप में

पुरोहित का पद राजा से उच्च एवं सम्मानसूचक था तथा राजा सर्वदा पुरोहित के नैतिक और धार्मिक विशेषाधिकारों का सम्मान करता था।[72]

वैदिक युग में ब्राह्मणों का प्रभाव अधिक था, क्योंकि वे परामर्श द्वारा राजा के निर्णयों को प्रभावित करते थे। अतः इस युग में राजा, पुरोहित, मन्त्री तथा सामन्त अभिजन माने जाते थे। राजा का कार्य केवल अपने राज्य की सीमाओं को सुरक्षित रखना ही न होकर जाति–व्यवस्था को सुरक्षित रखना भी था। अभिजन के सम्बन्ध में सैद्धान्तिक मान्यता के स्तर से जब हम ऐतिहासिक संक्रमणों की ओर आते हैं तो ज्ञात होता है कि एक लम्बे समय तक भारतीय समाज में अभिजन संरचना वंशानुगत, सत्तावादी, राजतन्त्रात्मक, सामंतवादी और करिश्मावादी बनी रही। विभिन्न स्तरों की इस राजतन्त्रात्मक–सामंतवादी संरचना में प्रत्येक स्तर के साथ पुरोहित और पार्षद भी होते थे। भारत में जाति की सदस्यता अभिजन वर्ग की स्थिति बनाये रखने में अहम भूमिका निभाती थी।[73]

1.7.2 मध्य युग के अभिजन

प्राचीन भारत के बाद जब हम मध्य युग में प्रवेश करते हैं एवं ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना से पूर्व समाज में अभिजन की स्थिति पर विचार करते हैं, तो पाते हैं कि सम्पूर्ण भारत अनेक रियासतों (इकाइयों) में विभाजित था, जिसका मुखिया राजा एवं स्थानीय सामंत (जागीरदार) होते थे। कोशाम्बी[74] ने अपने अध्ययन के आधार पर यह प्रतिपादित किया है कि राजा तथा कृषक वर्ग के बीच एक भूस्वामी वर्ग का शनैः–शनैः विकास हुआ, जिसने क्रमिक रूप से सैन्य अधिकार के द्वारा स्थानीय जनता पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। इस प्रकार के अभिजन 'मनसबदार' कहलाते थे तथा इस प्रथा को 'मनसबदारी प्रथा' कहा जाता था। मनसबदार का प्रभुत्व उसके

---

[72] ब्रोन, ए.आर., स्ट्रेचर एण्ड फंक्शन इन प्रिमिटिव सोसायटी, लंदन, कोहन एण्ड वेस्ट, 1953, पृ. 4

[73] वेबर, मैक्स, द रिलिजन ऑफ इंडिया, लंदन

[74] कोशाम्बी, डी.डी., इन इन्ट्राडक्शन टू द स्टडी ऑफ इंडियन हिस्ट्री, बॉम्बे, एशिया पब्लिशिंग हाउस, 1956, पृ. 275

अधीन सैनिकों की संख्या के आधार पर निर्धारित होता था।[75] मुगलकाल में व्यापारियों का वर्चस्व बढ़ता गया, क्योंकि व्यापारी वर्ग के लोग वित्तीय साधनों से शासकों की सहायता करते थे। इस प्रकार व्यापारी वर्ग के रूप में समाज में एक नये अभिजन वर्ग का आविर्भाव हुआ, जिसका प्रमुख लक्ष्य धनार्जन करना था।[76] इस युग में भूस्वामी, नौकरशाह, सैनिक अधिकारी एवं व्यापारी वर्ग चारों समाज के अभिजन माने गये। इनके अतिरिक्त वैज्ञानिकों, दार्शनिकों, कलाकारों, ज्योतिषियों एवं कवियों को राजकीय संरक्षण मिलने की वजह से उनका सामाजिक स्तर ऊँचा हो गया। अतः इन सबसे मिलकर एक अन्य अभिजन वर्ग का अभ्युदय हुआ।

1.7.3 ब्रिटिश युग में अभिजन

इस युग में भारतीय सामाजिक संरचना में आमूल–चूल परिवर्तन हुआ क्योंकि औपनिवेशिक शासन का समाज–व्यवस्था पर गहरा प्रभाव पड़ा। ब्रिटिश शासकों ने अपने आर्थिक हितों की पूर्ति एवं साम्राज्यवादी नीति के कारण भारमीय समाज व्यवस्था एवं समाज के महत्वपूर्ण विभागों में परिवर्तन करना आवश्यक समझा। अंग्रेजों की नवीन राजस्व व्यवस्था के परिणामस्वरूप मध्यम वर्ग का उदय हुआ, पूरे देश में नवीन प्रशासन, न्याय व्यवस्था एवं नवीन शिक्षा पद्धति लागू किये जाने के फलस्वरूप मध्यम वर्ग का उदय और भी तेजी से हुआ। धीरे–धीरे नये उद्योग समूहों की स्थापना हुई। इन सभी के फलस्वरूप एक नये वर्ग का उदय हुआ, जिसका वर्ग चरित्र अपने पूर्ववर्ती अभिजन वर्ग से बिल्कुल अलग था।

इस युग में बहुसंख्यक भारतीय मध्यम वर्ग, बुद्धिजीवी वर्ग से उत्पन्न हुआ जिनमें नौकरशाह, वेतनभोगी कर्मचारी तथा शैक्षिक संस्थाओं के सदस्य सम्मिलित थे। इस मध्यम वर्गीय अभिजन के चरित्र में पारस्परिक

---

[75] लीच, एडमण्ड एण्ड मुखर्जी, एस.एन., (एडी.), इलिट्स इन साउथ एशिया, लंदन, कैम्ब्रिज यूनिवर्सटी प्रेस, 1970, पृ. 1–3

[76] मिश्रा, बी.बी., द इंडियन मिडिल क्लासेज, लंदन, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सटी प्रेस, 1961, पृ. 26

सामाजिक व्यवस्था एवं आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था के गुणों का सर्वथा अभाव था। शैक्षणिक, कानूनी एवं प्रशासनिक गुणों को ही अभिजन वर्ग की प्रमुख विशेषता माना गया।[77] एडवर्ड शील्स ने अपने अध्ययन में तत्कालीन भारतीय अभिजन के चरित्र पर विचार करते हुए इस तथ्य की ओर ध्यान आकर्षित किया है कि ब्रिटिश काल में भी पूर्ववर्ती युगों की भाँति ब्राह्मणों क वर्चस्व समाज में कायम रहा। लेकिन इस युग में एक नवीन अभिजन वर्ग का उदय भी हुआ। जिसे पूँजीपति वर्ग के नाम से जाना गया। इस पूँजीपति वर्ग की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि इसने ब्रिटिश सरकार के विरोध में भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन को अपना भरपूर समर्थन दिया एवं वित्तीय सहायता के परिणामस्वरूप इस वर्ग ने राष्ट्रवादी अभिजनों के निर्णयों को काफी हद तक प्रभावित करने में सफलता अर्जित की।[78] इस युग में राष्ट्रवादी आन्दोलन के नेता, जमींदार, जागीरदार, वकील, पत्रकार, व्यापारी, चिकित्सक, प्राफेसर आदि अभिजन वर्ग में माने जाते थे। इन वर्गों की निजी जिन्दगी में बुर्जुआ शैली की सम्भ्रान्तता के समावेश से इनकार नहीं किया जा सकता, जिनका बुर्जुआ चरित्र इनकी प्रशासकीय नीतियों से स्पष्टतः देखा जा सकता है।[79]

1.7.4 स्वतन्त्रता के बाद अभिजन

देसाई[80] ने देश में अभिजन प्रवृत्ति पर व्यापकक चर्चा की है। उनके अनुसार भारत में नव अभिजनों की उत्पत्ति का प्रमुख कारण हमारा अंग्रेजों के साथ सम्पर्क तथा नवीन शिक्षा व्यवस्था है। जोशी[81] ने अपने लेख "इकॉनामिक डेवलपमेंट एण्ड द इंडियन इलिट" (1968) में सामान्यतः अभिजनों की भूमिका, विशेषकर राजनीतिक अभिजनों की विकास प्रक्रिया में

---

[77] इबिद, पृ. 26

[78] शिल्स, एडवर्ड, द ट्रेडिशन एण्ड मॉडर्निटी : द इंडियन सिचुएशन, कोटेड बाई रवि प्रताप सिंह 1989, इबिद, पृ. 21

[79] सिंह, भवानी, कांउसिल ऑफ स्टेट्स इन इंडिया, मेरठ, मीनाक्षी प्रकाशन, 1973, पृ. 135

[80] देसाई, आई.पी., द न्यू इलिट, इन टी.के.एन. यूनिथान एण्ड अदर्स (एडी.), टुवर्ड्स ए सोशियोलॉजी ऑफ कल्चर इन इंडिया, न्यू देहली, प्रेन्टिक हाल इंडिया, 1965

[81] जोशी, पी.सी., इकानॉमिक डेवलपमेंट एण्ड द इंडियन इलिट, लिंक, 26 जनवरी 1968

भूमिका का विश्लेषण किया है। लगभग इसी प्रकार का अध्ययन सिरस्कर[82] ने भारत में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के ग्रामीण अभिजनों के सम्बन्ध में किया है। अपने अध्ययन में उसने महाराष्ट्र के तीन जिला परिषदों के लिए निर्वाचित प्रतिनिधियों का चयन किया और यह ज्ञात करने का प्रयास किया कि उनको राजनीति में भागीदारी एवं अभिप्रेरण हेतु कौन से कारक उत्तरदायी रहे हैं? अटल[83] ने वृहत्त स्तर पर उभर रहे नव अभिजनों का अध्ययन किया है। उनके मतानुसार भारत में इस समय दो प्रकार की 'राजनीतिक संस्कृति' उभर रही है। इनमें से एक जनसामान्य की 'राजनीतिक संस्कृति' तथा दूसरी अभिजन वर्ग की राजनीतिक संस्कृति है। मेहता[84] वे अपने अध्ययन 'इमरजिंग पैटर्न ऑफ रूरल लीडरशिप' (1972) में अभिजन को नेतृत्व की उपश्रेणी में शामिल किया है। उनका निष्कर्ष है कि नेता एवं अभिजन ग्रामीण स्तर पर प्रारम्भिक सामाजिक परिवर्तन के लिए उत्तरदायी हैं।

1.8 अध्ययन समीक्षा : भारत के सन्दर्भ में

भारत में अभिजन एवं नेतृत्व सम्बन्धी अधिकांश अध्ययन 'सामान्य अभिजन' की स्थिति से सम्बन्धित रहे हैं। 'दलित' शब्द भारतीय संविधान की अनुसूची में सम्मिलित जातियों का प्रतीक है जिसका विस्तृत विवेचन 'दलितों' शीर्षक के अन्तर्गत किया जा चुका है। प्राचीन काल से ही इन जातियों को समाज के चारों वर्णों से पृथक हीन एवं अस्पृश्य माना जाता रहा है। इसलिए आजादी प्राप्ति तक ऐसी जातियाँ, जिन्हें अस्पृश्य, अदर्शनीय, पतित, अहिन्दू जातियों के नाम से सम्बोधित किया जाता था, अब दलित कहलाती हैं। देश को राजनीतिक स्वतन्त्रता मिलने के पश्चात् संविधान में इन जातियों के लिए किये गये विशेष प्रावधानों के फलस्वरूप इन जातियों में भी परिवर्तन का क्रम दिखाई देने लगा है। इसके फलस्वरूप अनेक भारतीय एवं

---

[82] सिरस्कर, वी.एम.: द रूरल इलिट इन डवलपमेंट सोसायटी : ए स्टडी इन पॉलिटिकल सोशियालॉजी, न्यू देहली, ओरियंट लांगमैन, 1970

[83] अटल, योगेश, लोकल कम्युनिटीज एण्ड नेशनल पॉलिटिक्स, देहली, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 1971

[84] मेहता, एस. आर., इमरजिंग पैटर्न ऑफ रूरल लीडरशिप, न्यू देहली, विले ईस्टर्न, 1972

विदेशी विद्वानों का ध्यान दलित जातियों की ओर आकृष्ट हुआ तथा उन्होंने अध्ययन के लिए इन जातियों का चयन किया।

दलित जातियाँ, जिन्हें तब 'डिप्रेस्ड क्लासेज' नाम से सम्बोधित किया जाता था, राजनीतिक शक्ति के रूप में 1930 में डा. भीमराव अम्बेडकर के नेतृत्व में उभर कर सामने आई, जो हिन्दूवाद एवं ब्राह्मणवाद के कट्टर विरोधी थे। उन्होंने महसूस किया कि दलित जातियाँ अपनी निर्योग्यताओं से छुटकारा केवल हिन्दुओं के समाज अधिकार प्राप्त होने पर ही कर सकती हैं। अम्बेडकर इन जातियों को मुख्यतः राजनीतिक शक्ति प्रदान करने के पक्ष में थे, इसी वजह से पूना पैक्ट में इन जातियों की जनसंख्या के अनुपात में स्थान आरक्षित रखने का प्रावधान किया गया।[85]

भारत में अन्य सामाजिक समुदायों की तुलना में दलित जातियों पर बहुत कम समाजशास्त्रीय अध्ययन हुए हैं। सर्वप्रथम, एक दलित जाति, 'चमार' पर एक विस्तृत अध्ययन (1920) ब्रिग[86] द्वारा किया गया। इस अध्ययन में उत्तर प्रदेश के चमारों के जीवन, विश्वासों एवं व्यवहारों का गहराई से अध्ययन किया गया है। लेखक, जो एक ईसाई मिशनरी था, इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि ईसाई मिशनरियों ने उत्तर प्रदेश के चमारों को समाज में एक सन्तोषजनक स्थान दिलाने एवं धार्मिक क्रियाकलापों में सहभागिता का अवसर प्रदान कराने में अहम भूमिका अदा की है। इसी प्रकार का एक अन्य अध्ययन स्टेफन फुच[87] द्वारा 1949 में 'चिल्ड्रन ऑफ हरि' शीर्षक से किया गया, जिसमें मध्य प्रदेश के निमाड़ जिले की बलाई जाति के जीवन के समस्त पक्षों की गहनतम एवं विस्तृत जानकारी दी गई है।

---

[85] विस्तृत अध्ययन के लिए देखें : कीर, धनन्जय, 1954, इबिदः राज शेखराचार्य, ए.एम., 1989, इबिदः कुबेर, उब्लू.एन., बिल्डर्स ऑफ मॉडर्न इंडिया : बी. आर. अम्बेडकर, न्यू देहली, पब्लिकेशन्स डिविजन, मिनिस्ट्री ऑफ इनफारमेशन एण्ड ब्राडकास्टिंग, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, 1990, वकील, ए. के., गाँधी–अम्बेडकर डिसप्युट : एन एनालिटिकल स्टडी, न्यू देहली, एशिया पब्लिशिंग हाउस, 1991 : चन्द्रमौली, वी., बी. आर., अम्बेडकर : मैन एण्ड हिज विजन, न्यू देहली, स्टर्लिंग पब्लिशर्स प्रा. लि. 1991

[86] ब्रिग, जी. डब्लू., द चमार, लंदन, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सटी प्रेस, 1920

[87] फुच, स्टेफन, चिल्ड्रन ऑफ हरि : ए स्टडी ऑफ निमाइ बलाई'ज इन मध्य प्रदेश, अहमदाबाद, न्यू आर्डर बुक कं. 1949

दलित जातियों से सम्बन्धित सामाजिक अध्ययनों की अपेक्षा दलित जातियों के अभिजन वर्ग पर अपेक्षाकृत कम अध्ययन हुए हैं। 1977 में बिहार के दलित जाति अभिजनों पर सच्चिदानन्द[88] द्वारा 'द हरिजन इलिट' नाम से एक अध्ययन किया गया जिसमें अभिजन के रूप में विधायक, लोकसेवक एवं सामाजिक कार्यकर्ता सम्मिलित थे। यह अध्ययन दलित जाति अभिजनों की प्रस्थिति, भूमिका, व्यावसायिक एवं सामाजिक गतिशीलता, नेटवर्क एवं अभिजनों द्वारा अपने समुदाय में सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया से सम्बन्धित है। अध्ययन से सम्बन्धित कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्ष निम्नांकित हैं–

1. अध्ययन में शामिल अभिजनों में से विधायकों एवं लोकसेवकों की आर्थिक स्थिति सामाजिक कार्यकर्ताओं की अपेक्षा अच्छी है।
2. दलित अभिजनों का एक बहुत बड़ा हिस्सा जन्मजात जटिल हीनता को भोगते रहने के कारण इतना संवेदनहीन हो गया है कि उनके मत, इच्छा एवं भेदभाव का इलाज जरूरी है। दलित जातियों का नवीन व्यवसायों, जैसे– कानून, चिकित्सा, अभियन्ता आदि में प्रवेश, उनके उच्च्य जाति के सहयोगियों द्वारा गम्भीर रूप से रोष प्रगट करने का कारण बना है। इस नाराजगी के तीन प्रमुख कारण हैं– दलित के प्रति घृणा की भावना, बढ़ती हुई प्रतियोगिता एवं दलित जातियों के पक्ष में सुरक्षात्मक भावना के प्रति घृणा।
3. राजनीतिक क्षेत्र में दलित अभिजन वर्ग में राजनीतिक जागृति दिखाई देती है तथा वे अपने मूल्य का मत समझते हैं।
4. दलित अभिजन अपने समुदाय के सही कार्यों में या तो स्वयं या दूसरों के माध्यम से सहयोग करने का प्रयास करते हैं।
5. शिक्षा के प्रसार में अभिजन बहुत क्रियाशील हैं जिसके माध्यम से दलितों में सामाजिक एवं वैचारिक परिवर्तन लाया जा सकता है।

---

[88] सच्चिदानन्द, 1977, इबिद

6. अधिकांश अभिजन अपने समुदाय के प्रति भ्रातृत्व की भावना एवं घनिष्ठता बढ़ाने में बहुत कम रूचि लेते हैं। कुछ अभिजन, जो पदसोपान में बहुत उच्च हैं, अपने भूतकाल को भूलना चाहते हैं।

आन्ध्र प्रदेश में दलित जाति के विधायक अभिजनों पर एक समाजशास्त्रीय अध्ययन अब्बासायूलू[89] द्वारा किया गया है। अध्ययन में सम्मिलित सभी विधायक युवा वर्ग के थे। इसमें स्पष्ट किया गया है कि शिक्षा, सम्पत्ति एवं जातीय श्रेष्ठता आरक्षण के अलावा दलित जाति के सदस्यों को उच्च एवं अभिजन प्रस्थिति तक लाने में प्रमुख उत्तरदायी कारक हैं। दलित जाति के विधायकों ने वर्तमान पद आरक्षण, उच्च शिक्षा एवं आर्थिक सम्पन्नता के कारण प्राप्त किया है। विधायकों ने स्वीकार किया है कि दलित जाति के सदस्यों में अस्पृश्यता, अस्वच्छता, मद्यपान, जूठन खाने एवं शिक्षा के प्रति उदासीनात की समस्यायें आज भी प्रचलित हैं। अध्ययन से यह सिद्ध होता है कि दलित जाति के अभिजन, विशेषकर विधायक अपनी जातियों के उत्थान एवं विकास में सरकार पर ऐसी नीतियों के निर्माण के लिए दबाव डालते रहते हैं जो उनके विकास में सहायक हैं।

अब्बासायूलू[90] ने ही एक अन्य अध्ययन 'शिड्यूल्ड कास्ट इलिट' (1978) आन्ध्र प्रदेश के 236 अभिजनों पर किया है। इस अध्ययन में 18.7 प्रतिशत राजनैतिक, 10.2 प्रतिशत नौकरशाह, 44.4 प्रतिशत चिकित्सक, 6.4 प्रतिशत अभियन्ता, 8.5 प्रतिशत विशविद्यालय शिक्षक तथा शेष 11.8 प्रतिशत न्यायाधीश एवं वकील थे। अध्ययन में उपलब्ध तथ्यों से स्पष्ट होता है कि शिक्षा, राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय भूमिका, समाज सेवा एवं पारिवारिक प्रतिष्ठा को दलित जाति अभिजनों ने अपने वर्तमान उद्भव का प्रमुख कारक माना है। अध्ययन में महिला अभिजनों का प्रतिनिधित्व अत्यधिक निराशाजनक

---

[89] अब्बासायूलू, वाई.बी., ए साशियालॉजिकल स्टडी ऑफ द शिड्यूल्ड कास्ट लेजिस्लेचर्स ऑफ आन्ध्र प्रदेश, अनपब्लिश्ड एम. लिट, थीसिस, 1974 (सबमिट एट डिपार्टमेंट ऑफ सोशियालॉजी, उस्मानिया यूनिवर्सटी, हैदराबाद)

[90] अब्बासायूलू, वाई.बी., शिड्यूल्ड कास्ट इलिट, हैदराबाद, डिपार्टमेंट ऑफ सोशियालॉजी, उस्मानिया यूनिवर्सटी, 1978

रहा है तथा दलित जातियों में कुछ जातियों के सदस्यों ने अभिजन पद प्राप्ति में अधिक सफलता अर्जित की है। अब्बासायूलू के अनुसार आन्ध्र प्रदेश के दलित जाति अभिजन, दलित जातियों के पिछड़ेपन के लिए निम्नांकित कारणों को उत्तरदायी मानते हैं–

1. निर्णय प्रक्रिया मे सवर्णों का प्रभुत्व
2. सरकार द्वारा नीति–निर्धारण में अनावश्यक देरी
3. गैर दलित जाति के अभिजनों का दलित जातियों की ओर ध्यान न देना
4. दलित जातियों में विकासात्मक गतिविधियों की जानकारी का अभाव

दलित जातियों से सम्बन्धित एक महत्वपूर्ण अध्ययन, जो यद्यपि दलित जाति के अभिजन वर्ग से सम्बन्धित नहीं है, मलिक[91] ने 'सोशियल इंटीग्रेशन ऑफ शिड्यूल्ड कास्ट्स' (1979) शीर्षक से किया है। यह अध्ययन केवल अभिजन वर्ग से सम्बन्धित नहीं होने पर भी दलित जाति के विशिष्ट वर्ग के सम्बन्ध में कुछ ऐसे तथ्य निष्कर्ष के रूप में प्रस्तुत करता है जो ध्यान देने योग्य हैं। यह अध्ययन हरियाणा के अम्बाला शहर की पाँच आवासीय कालोनियों में रहने वाली दलित जातियों से सम्बन्ध रखता है। निदर्शन के रूप में अध्ययन हेतु 300 दलित जाति के सदस्यों का चयन किया गया है, जिनमें 100 सदस्य मैट्रिक या उच्च स्तर की शिक्षा प्राप्त तथा 200 सदस्य मैट्रिक से कम शिक्षित या अशिक्षित थे। अशिक्षित, शिक्षित एवं उच्च शिक्षा प्राप्त सदस्यों का यह तुलनात्मक अध्ययन जो महत्वपूर्ण तथ्य प्रगट करता है, संक्षेप में इस प्रकार है–

1. यद्यपि दलित जातियों ने शैक्षणिक एवं व्यावसायिक दृष्टि से प्रगति की है, फिर भी उनको समाज में उच्च जातियों के समकक्ष स्थान प्राप्त नहीं है। इस समुदाय के सदस्य इस आधार पर हीन भावना से ग्रस्त

---

[91] मलिक, सुनीला, सोशियल इंटीग्रेशन ऑफ शिड्यूल्ड कास्ट्स, न्यू देहली, अभिनव पब्लिकेशन्स, 1979

हैं कि उत्पत्ति क्रम में उनका स्थान सबसे निम्न है एवं इसी निम्न उत्पत्ति के कारण उच्च जाति के सदस्य उन्हें समाज में समान देने को तैयार नहीं है। यह एक निर्विवाद सत्य है कि उच्च व्यावासायिक स्तर प्राप्त कर लेने के बावजूद दलित जातियों के सदस्यों के साथ अस्पृश्यता एवं अपमानजनक व्यवहार किया जाता है।

2. उच्च जातियों के सदस्य प्रायः यह महसूस करते हैं कि दलित जातियों के सदस्य अयोग्य एवं असमर्थ हैं एवं बुद्धि व ज्ञान में पिछड़े हुए हैं लेकिन आरक्षण के उच्च पद प्राप्त करने में सफल रहे हैं। यह निष्कर्ष देश के सभी प्रान्तों में दलित जातियों के अधिकारियों के प्रति सवर्ण रूझान को दर्शाता है।
3. एक दुःखद पहलू यह है कि सामाजिक–आर्थिक दृष्टि से विकसित दलित जातियों के सदस्य अपने समुदाय की अपेक्षा उच्च जातियों के अधिक निकट आना चाहते हैं तथा अपनी जाति का नाम तक बताने में संकोच करते हैं।
4. दलित जातियों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति को सुधारने में शिक्षा सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक है। यही वजह है कि दलित जातियों के सदस्य भी उन परम्परागत व्यवसायों को जो निम्न स्थिति को दर्शाते हैं, घृणित हैं एवं जिनसे कम आय प्राप्त होती है, त्याग कर अन्य स्वच्छ व्यवसाय अपनाने लगे हैं तथा अपनी संतानों को भी परम्परागत व्यवसायों में लगाने के विरूद्ध हैं।
5. संगठनात्मक दृष्टि से यह पाया गया है कि दलित जाति के जातीय संगठनों से जुड़े लोगों में उच्च शिक्षित व्यक्तियों की अपेक्षा कम शिक्षित एवं अशिक्षित सदस्य अधिक हैं। उच्च शिक्षा एवं व्यवसाय के सदस्य दलित जाति के जातीय संगठनों की अपेक्षा उच्च जातियों के संगठनों से अधिक जुड़े हैं तथा उच्च व्यवसाय के ऐसे सदस्य भी, जो जातीय संगठनों से सम्बद्ध हैं, केवल संगठन के साधारण सदस्य हैं

जबकि कम शिक्षित एवं निम्नस्तर के कर्मचारी सक्रिय सदस्य अधिक हैं।

6. सरकार की नवीनतम नीतियों, कार्यक्रमों एवं आर्थिक सुविधाओं की जानकारी केवल दलित जाति के उच्च शिक्षित सदस्यों को ही ठीक से है तथा वे ही इन सरकारी सुविधाओं का अधिकतम लाभ उठा पाते हैं जबकि इन सुविधाओं की सर्वाधिक आवश्यकता कमजोर व्यक्तियों को है जिनके पास ऐसी नीतियों की जानकारी ही नहीं पहुँच पाती है।

उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले के दलित जाति अभिजनों पर 'ए स्टडी ऑफ हरिजन इलिट' (1987) नामक अध्ययन राय तथा सिंह[92] द्वारा किया गया है। अध्ययन हेतु जिले के कुल 55 अभिजनों का चयन किया गया जिनमें 17 राजनेता, 5 जातीय संगठनों के नेता, 16 नौकरशाह, 6 चिकित्सक, 4 वकील, 6 अध्यापक, एवं 1 व्यापारी शामिल हैं। अध्ययन में प्राप्त कुछ प्रमुख निष्कर्ष निम्नांकित हैं–

1. गरीबी एवं भुखमरी अस्पृश्यता उन्मूलन में एक प्रमुख बाधा है। अध्ययन में सम्मिलित अभिजनों ने स्वीकार किया है कि दलित जाति के अधिकांश सदस्य गरीबी की रेखा के नीचे जीवनयापन कर रहे हैं, इस से न तो वे सरकारी नीतियों का उचित लाभ प्राप्त कर सकते हैं, न ही अपने बच्चों को सही शिक्षा दिला पाते हैं एवं स्वच्छता, अच्छे भोजन एवं कपड़ो की भी व्यवस्था नहीं कर पाते हैं।
2. आरक्षण का लाभ दलित जाति के बहुत कम एवं मात्र आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न लोगों को ही मिला है। एक बार उच्च पद प्राप्त कर लेने के बाद पीढ़ी दर पीढ़ी उन्हीं को आरक्षण का लाभ प्राप्त होता है एवं पिछड़े आज भी पिछड़े हुए हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि एक या दो पीढ़ी के बाद आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न एवं उच्च पदस्थ व्यक्तियों

[92] राय, रामाश्रय तथा सिंह, वी.बी., ए स्टडी ऑफ हरिजन इलिट्स : बिटविन टू वर्ल्डस, देहली, डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, 1987

को इसका लाभ प्रदान न करके आरक्षण का लाभ कमजोर एवं गरीबों तक पहुँचाया जाये।

3. अधिकतर अभिजन, लगभग 82 प्रतिशत यह स्वीकार करते हैं कि दलित जाति के राजनेता इन जातियों के प्रति अपनी जिम्मेदारी का निर्वाह करने में पूर्णतः असफल रहे हैं। इस वर्ग के अधिकांश नेता 'स्वकेन्द्रित' होते हैं तथा उनका अन्तिम एवं एकमात्र उद्देश्य धन एकत्रित करना होता है। खासकर दलित जाति के ऐसे राजनेता, जो सामान्य निर्वाचन क्षेत्रों से विजयी होकर आते हैं, दलित जातियों की समस्याओं पर कोई ध्यान नहीं देते हैं।
4. अभिजनों की मान्यता है कि अस्पृश्यता उन्मूलन एवं सामाजिक समानता के लिए शिक्षा एक महत्वपूर्ण कारक है। अतः शिक्षा का अधिकाधिक प्रचार–प्रसार जरूरी है। इस वर्ग के लोगों को व्यावसायिक, तकनीकी और उच्चतर अध्ययन हेतु विशेष प्रावधान किये जायें, ताकि इस वर्ग के सदस्य भी इन पदों पर आ सकें।

सिंह तथा सुन्दरम[93] ने उत्तर प्रदेश के वाराणसी जिले के दलित अभिजनों, दलित जाति के सामान्य सदस्यों एवं उच्च जाति के सदस्यों का एक तुलनात्मक अध्ययन 'इमरजिंग हरिजन इलिट : ए स्टडी ऑफ देअर आइडेन्टिटी' (1987) शीर्षक से किया है। कुल 270 उत्तरदाताओं पर आधारित इस अध्ययन में शिक्षित दलित जाति, अशिक्षित दलित जाति एवं उच्च जाति के 90–90 सदस्य शामिल थे। अध्ययन से ज्ञात हुआ कि दलित जातियों में सामाजिक, व्यावसायिक एवं स्थैतिक गतिशीलता व्याप्त है एवं जैसे ही दलित जाति के सदस्य अपना अध्ययन पूरा करते हैं, अपने परम्परागत जीवन एवं समुदाय से सम्बन्ध विच्छेद करके परिवर्तन के 'अगुआ' (एजेन्ट) बनना चाहते हैं। इससे एक संकट की स्थिति उभरती है क्योंकि एक ओर उच्च जाति उन्हें

---

[93] सिंह, एस.एस., तथा सुंदरम्., एस., इमरजिंग हरिजन इलिट : ए स्टडी ऑफ देअर आइडेन्टिटी, न्यू देहली, उप्पल पब्लिसिंग हाउस, 1987

अंगीकार नहीं करती तथा दूसरी ओर वे अपने समुदाय में जाना नहीं चाहते हैं।

दलित जाति के विधानमण्डलीय अभिजनों पर एक ठोस एवं व्यवस्थित अध्ययन सिंह द्वारा उत्तर प्रदेश, बिहार एवं मध्य प्रदेश के 170 दलित जाति के विधायकों को लेकर किया है जिसमें विधायकों का सामाजिक उद्भव एवं बदलते जीवन प्रतिमानों का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन में विधानमण्डलीय अभिजनों की सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि, राजनैतिक समाजीकरण, सामान्य रूचियाँ एवं क्रियाकलाप, व्यावसायिक गतिशीलता, भूमिका एवं जनसम्पर्क, विकास एवं आधुनिकीकरण आदि पक्षों का गहनता से विश्लेषण किया है। अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष इस प्रकार हैं–

1. ग्रामीण पृष्ठभूमि के अभिजनों का प्रभाव राजनैतिक क्षितिज पर बढ़ा है।
2. दलित जाति अभिजनों का सामाजिक संरचना में विभेदीकरण बढ़ा है, जिसमें मध्यम वर्ग और अधिक आयु के अभिजनों की संख्या अधिक है।
3. इन अभिजनों में हित समूहों की उन्मुखताएँ, क्षेत्रीयता, सांस्कृतिक वैचारिकी से ज्यादा नजदीक हैं।
4. जनतन्त्रीकरण की प्रक्रिया अभिजनों की सामाजिक संरचना में बढ़ी है जिसके परिणामस्वरूप उच्च जाति के अभिजनों की संख्या कम हुई है।
5. दलित जाति के विधानमण्डलीय अभिजनों में परम्परावादिता एवं आधुनिकता का समन्वय है और समकालीन आधुनिकीकरण की प्रक्रियाओं से धार्मिक कट्टरता और कटिबद्धता कम होती जा रही है।
6. भारत में सामाजिक परिवर्तन के परिणामस्वरूप परम्परावादी व्यवसाय के स्थान पर आधुनिक व्यवसायों की स्वीकारोक्ति की प्रवृत्ति अधिक परिलक्षित होती है, तीन पीढ़ियों का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि उनकी व्यावसायिकता में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं।

00000————00000

अध्याय - 2

अध्ययन पद्धति

- विषय का निर्धारण
- अध्ययन के उद्देश्य
- समग्र का निर्धारण
- व्यावहारिक कठिनाईयाँ
- निदर्शन
- तथ्य संकलन
- उप–कल्पनाएँ
- तथ्यों का प्रस्तुतीकरण

2. अध्ययन पद्धति

पूर्व अध्याय में अध्ययन विषय की परिचयात्मक विवेचना की गई है, प्रस्तुत अध्याय में अध्ययन पद्धति का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

सामान्य रूप से किसी समाज का सामाजिक–आर्थिक अध्ययन करना एक जटिल कार्य है एवं इस जटिलता में उस समय और भी वृद्धि हो जाती है जब शोध का विषय दलितों से सम्बन्धित हो। इसका मूल कारण यह है कि सदियों से ये जातियाँ उपेक्षित, शोषित, पीड़ित और तिरस्कृत रही हैं। आजादी के पश्चात सरकारी एवं गैर सरकारी स्तर पर इन जातियों के आर्थिक, सामाजिक एवं शैक्षणिक उत्थान के लिये विशेष प्रयास शुरू किये गए। यद्यपि आजादी के बाद भारत सरकार के रजिस्ट्रार जनरल एवं जनगणना आयुक्त तथा राज्यों में स्थित जनगणना निदेशालयों द्वारा सामान्य जनगणना रिपोर्ट्स एवं पुस्तिकों के अलावा दलितों से सम्बन्ध रखने वाली विविध सीरीज प्रकाशित की हैं। इनमें पृथक से दलितों की जनसंख्या, आवासीय पृष्ठभूमि, लिंगानुपात, व्यवसाय, शिक्षा, भाषा, धर्म, वैवाहिक स्थिति आदि सूचनाएँ सम्मिलित होती हैं। लेकिन दुर्भाग्यवश राज्य के अधिकांश सरकारी एवं गैर सरकारी पुस्तकालयों, जिला सूचना केन्द्रों एवं सम्बन्धित विभागों में ऐसी विशिष्ट सीरीज का प्रायः अभाव ही देखा गया है।

2.1 विषय का निर्धारण

सर्वप्रथम 1951 से 1991 तक जनगणना आयुक्त, भारत सरकार एवं उत्तर प्रदेश स्थित जनगणना निदेशालय द्वारा प्रकाशित दलितों से सम्बन्धित कुछ जनगणना रिपोर्ट्स एवं पुस्तिकों का अध्ययन किया गया। तत्पश्चात् देश के अन्य राज्यों में दलितों एवं अन्य जाति के अभिजनों पर किये गये अध्ययनों का गहनता पूर्वक अध्ययन किया गया। उपलब्ध एवं

प्रकाशित अध्ययनों से ज्ञात हुआ कि बिहार, आन्ध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, उड़ीसा आदि राज्यों के दलित अभिजनों पर समाज वैज्ञानिकों द्वारा अध्ययन किये गये हैं। लेकिन अभी तक उत्तर प्रदेश में दलित अभिजनों पर किसी प्रकार का शोधपरक अध्ययन नहीं हुआ है। अतः प्रकाशित साहित्य का गहनतापूर्वक अध्ययन, विषय विशेषज्ञों से विचार–विमर्श एवं अन्य सूचनाओं के आधार पर अध्ययन विषय के रूप में दलित अभिजनों का चयन किया। उत्तर प्रदेश के हमीरपुर जनपद के दलित अभिजनों का ही शोध समस्या के रूप में चयन करने के निम्नांकित कारण उत्तरदायी रहे–

1. उत्तर प्रदेश में जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा दलितों का है। 1991 की जनगणना के अनुसार राज्य की कुल जनसंख्या 4,40,05,990 में से 76,07,820 (17.29%) जनसंख्या दलितों की है। 2001 के अनुसार दलितों की जनसंख्या 1,42,02,330 है।
2. देश की राजनीति में उत्तर प्रदेश की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।
3. आजादी पूर्व के प्रयासों एवं आजादी के बाद किये गये विशेष प्रावधानों के परिणामस्वरूप दलितों के सदस्यों को भी अभिजन स्तर तक पहुँचने का मार्ग प्रशस्त हुआ एवं इसके फलस्वरूप इन जातियों के भी कुछेक व्यक्तियों ने अभिजन पद प्राप्त करने में सफलता प्राप्त की है।
4. अध्याय प्रथम में एवं इसी अध्याय के प्रारम्भ में उल्लेख किया जा चुका है कि देश के कई राज्यों में दलितों से सम्बन्धित शोधपरक अध्ययन हुए हैं, लेकिन आजादी के 50 वर्षों बाद भी प्रदेश में विशेषकर हमीरपुर जनपद के दलित अभिजनों पर कोई शोधकार्य नहीं हुआ है।

2.2 अध्ययन के उद्देश्य

इस अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य उत्तर प्रदेश के जनपद हमीरपुर में दलित अभिजनों के सामाजिक उद्भव एवं बदलते जीवन प्रतिमानों का पता लगाना है। यह ज्ञात करना कि दलित अभिजन विविध क्षेत्रों, यथा–

राजनैतिक, प्रशासनिक, व्यवसायिक, बौद्धिक आदि तक पहुँचने में किस प्रकार सफल रहे हैं? क्योंकि रूरल इलिट इन इंडिया (1979) नामक अध्ययन[1] में पाया है कि व्यक्तिगत गुण, पारिवारिक स्थिति, आर्थिक सम्पन्नता, भाषण कला तथा शिक्षा अभिजन वर्ग तक पहुँचने में प्रमुख कारक हैं। दलित अभिजनों के वर्तमान स्तर तक आने में जो महत्वपूर्ण कारक सहायक रहे हैं, उनका पता लगाना बहुत आवश्यक होता है क्योंकि तथ्यों के अभाव में जन–साधारण के मन में अनेक प्रकार की निराधार धारणाएँ पनपती हैं।[2] प्रस्तुत अध्ययन के मुख्य उद्देश्य निम्नांकित हैं–

1. दलित अभिजनों के सामाजिक एवं आर्थिक उद्भव की प्रासंगिकता में उनके सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का विश्लेषण।
2. भारतीय सामाजिक संरचना के बदलते सामाजिक परिवेश में दलित अभिजनों के सामाजिक, सांस्कृतिक क्रियाकलापों के प्रति संवेदनशीलता, चेतनात्मक जागरण और प्रतिक्रियात्मक स्वरूपों का विवेचन।
3. दलित अभिजनों के विकास में सहायक रहे प्रमुख कारकों, साहित्यिक अभिरूचि एवं अपने जीवन में प्रमुख महापुरूषों के प्रभाव की जानकारी प्राप्त करना।
4. स्वजन समूहों के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक उत्थान में रूचि एवं जातीय संगठनों में दलित अभिजनों की क्रियाशीलता, भूमिका एवं सम्बद्धता की स्थिति एवं प्रकृति का विवेचन।
5. यह देखा जाता है कि 'अभिजन' स्थिति तक आने के बाद अभिजन परकीकृत हो जाता है तथा अपने उद्भव स्थल के प्रति सचेत होकर दायित्व निर्वाह नहीं करता है। दलित के प्रति अभिजन चूँकि समाज के निम्नस्थ सामाजिक–आर्थिक वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है, अतः यह देखना, कि दलित वर्ग का अभिजन वर्ग अपने उद्भव समूह के प्रति

---

[1] शर्मा, एस.एस., रूरल इलिट इन इंडिया, न्यू देहली, स्टर्लिंग पब्लिशर्स प्रा. लि. 1979, पृ. 193
[2] कम्पर्ट, एलेक्स, सैक्स इन सोशियालॉजी, लंदन, गेराल्ड डकबर्थ एण्ड कं. लि. 1963, पृ. 8

दायित्व बोध से बंधा रहता है अथवा परकीकृत हो जाता है, अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य होगा।

6. दलित अभिजनों में सामाजिक एवं व्यावसायिक गतिशीलता, उभरते नवीन मूल्य तथा व्यावसायिक महत्वाकांक्षाओं की यथास्थिति की जानकारी प्राप्त करना।

2.3 समग्र का निर्धारण

अध्ययन समस्या के निर्धारण के पश्चात् 'समग्र' का निर्धारण एक महत्वपूर्ण कड़ी है। समग्र और इसकी इकाईयों का चयन वैज्ञानिक दृष्टि से बहुत महत्व रखता है। गवेषिका जितनी अधिक स्पष्टता से समग्र एवं इसकी इकाइयों का चयन करेगी, उतनी ही मात्रा में उसका शोध सफल एवं दूसरों द्वारा सत्यापन योग्य माना जायेगा।[3]

'अभिजन' शब्द बहुअर्थी एवं व्यापक अवधारणा है। प्रस्तुत अध्ययन के समग्र के रूप में निम्न सेवाओं के अधिकारियों को अभिजन माना है–

1. हमीरपुर जनपद में दलित वर्ग के सांसद, विधायक एवं मन्त्री परिषद के सदस्य।
2. हमीरपुर जनपद में कार्यरत दलित वर्ग के भारतीय प्रशासनिक सेवा एवं भारतीय पुलिस सेवा के अधिकारी।
3. हमीरपुर जनपद में कार्यरत दलित वर्ग के राज्य प्रशासनिक सेवा एवं राज्य पुलिस सेवा के अधिकारी।
4. हमीरपुर जनपद के महाविद्यालयों में कार्यरत दलित वर्ग के प्राध्यापक।
5. हमीरपुर जनपद के समस्त सरकारी विद्यालयों में कार्यरत दलित अध्यापक।

---

[3] सिबर्ग, जी.एण्ड नैट, आर, ए मैथडालॉजी फार रिसर्च, न्यूयार्क, हारपर एण्ड रॉ, 1968, पृ. 169–177

6. हमीरपुर जनपद में कार्यरत दलित वर्ग के चिकित्सक।
7. हमीरपुर जनपद में दलित वर्ग के सिंचाई, सार्वजनिक निर्माण, विद्युत एवं जन–स्वास्थ्य तथा अभियांत्रिकी विभागों में कार्यरत सहायक अभियंता स्तर के अभियंता।
8. हमीरपुर जनपद में दलित वर्ग के न्यायाधीश एवं वकील।

अध्ययन की सुविधानुसार उक्त सेवा के अधिकारियों को निम्न चार श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है–

1. व्यावसायिक अभिजन – अभियंता, चिकित्सक, न्यायाधीश एवं वकील
2. शैक्षणिक अभिजन – महाविद्यालय प्राचार्य, प्राध्यापक, इण्टर कालेजों के प्रवक्ता एवं प्राचार्य
3. नौकरशाह अभिजन – भारतीय प्रशासनिक सेवा, भारतीय पुलिस सेवा, प्रशासनिक सेवा एवं राज्य पुलिस सेवा के अधिकारी
4. राजनैतिक अभिजन – सांसद, मंत्रीगण, एवं विधायक

समग्र निर्धारण के लिये यह आवश्यक है कि विभिन्न विभागों में पदस्थापित दलितों की संख्या ज्ञात की जाये। इसके लिये राज्य की राजधानी स्थित विविध विभागों के मुख्यालयों एवं निदेशालय स्तर पर सम्पर्क स्थापित कर, उनके अधीन विभागों में पदस्थापित दलित वर्ग के सदस्यों की संख्या, नाम एवं कार्य–स्थल की जानकारी का प्रयास किया। दलित वर्ग के अभिजनों की संख्या एवं पदस्थापना की जानकारी के लिए अग्रांकित अधिकारियों से सम्पर्क किया–

1. मुख्य चुनाव अधिकारी, उत्तर प्रदेश, लखनऊ से संसद सदस्यों के लिए

2. सचिव, विधानसभा, लखनऊ से विधायकों एवं मंत्री परिषद् के सदस्यों हेतु
3. सचिव, कार्मिक विभाग, उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ से भारतीय प्रशासनिक सेवा एवं राज्य प्रशासनिक सेवा के अधिकारियों के लिये
4. सचिव, गृह विभाग एवं पुलिस महानिदेशक, उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ से भारतीय पुलिस सेवा एवं उत्तर प्रदेश पुलिस सेवा के अधिकारियों के लिये
5. निदेशक, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाएँ, लखनऊ से सरकारी चिकित्सालयों के चिकित्सकों हेतु
6. निदेशक, उच्च शिक्षा निदेशालय, इलाहाबाद से शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालयों के प्राध्यापकों हेतु
7. मुख्य अभियंता, सार्वजनिक निर्माण विभाग, लखनऊ, मुख्य अभियंता, सिंचाई एवं नहर परियोजना, मुख्य अभियंता, जन स्वास्थ्य एवं अभियांत्रिकी विभाग एवं अध्यक्ष, राज्य विद्युत मंडल, से इन विभागों के सहायक अभियंता स्तर तक के अभियन्ताओं के लिए
8. रजिस्ट्रार, इलाहाबाद उच्च न्यायालय एवं अध्यक्ष, बार एसोसिएशन, इलाहाबाद से न्यायाधीशों एवं वकीलों के लिये।

2.4 समग्र निर्धारण में व्यावहारिक कठिनाइयाँ

दलित अभिजनों की संख्या, नाम एवं पदस्थापना सम्बन्धी सूचनाओं के लिये ऊपर वर्णित विभागाध्यक्षों एवं अधिकारियों से सम्पर्क के दौरान अनेक व्यावहारिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, जिनमें से कुछेक महत्वपूर्ण समस्याओं का उल्लेख यहाँ किया गया है–

1. अधिकांश सरकारी विभागों में दलित अधिकारी/कर्मचारी की संख्या सम्बन्धी आँकड़े पृथक से उपलब्ध न होना।

2. अधिकांश विभागों द्वारा अपने–अपने विभागों में कार्यरत अधिकारियों की सिविल लिस्ट/वरिष्ठता सूची प्रकाशित ही नहीं की जाती है और कुछ विभाग, जो इस प्रकार की सूची प्रकाशित भी करते हैं उसमें दलित वर्ग का उल्लेख नहीं किया जाता है।

3. विभागाध्यक्षों एवं वरिष्ठ अधिकारियों का अधिकांश समय जिलों के दौरों, मीटिंगों एवं सचिवालय आने–जाने में व्यतीत होता है। इस कारण अधिकतर विभागाध्यक्षों ने अपनी व्यस्तता एवं समयाभाव का बहाना बनाकर तथ्य उपलब्ध करवाने में अपनी असमर्थता प्रकट की। एक प्रमुख समस्या यह सामने आई कि प्रायः सभी विभागाध्यक्षों से मुलाकात का समय निर्धारित है जो प्रायः सायं तीन से चार बजे का होता है, लेकिन इस निर्धारित समय में कई बार जाने पर भी वे अनुपलब्ध रहे।

4. गोपनीयता एवं प्रशासकीय प्रक्रिया के कारण दलितों से सम्बन्धित सूचना देने में आनाकानी प्रायः आम समस्या के रूप में सामने आई। विभागाध्यक्षों का तर्क था कि पत्रकार या संवाददाता इन जातियों के लिए आरक्षित कोटे की रिक्तता एवं अन्य सूचनाएँ समाचार–पत्र एवं पत्रिकाओं में प्रकाशित करके उनके लिए प्रशासनिक मुसीबतें पैदा कर देते हैं।

ऊपर वर्णित कुछ समस्याओं एवं अधिकारियों/कर्मचारियों के असहयोगात्मक रुख के बावजूद विविध प्रयासों से कुछ आँकड़े प्राप्त हो सके हैं।

2.5 निदर्शन

समग्र के निर्धारण के पश्चात् समग्र की इकाई अधिक होने के कारण निदर्शन के आधार पर अभिजनों (उत्तरदाताओं) का चयन किया गया। निदर्शन के चयन के लिये निम्न चरणों का सहारा लिया गया है–

2.5.1 निदर्शन की संख्या

वर्तमान में समाज विज्ञानों में वैज्ञानिकता पर अधिक जोर दिया जा रहा है, इसलिए प्रस्तुत अध्ययन कार्य में भी निदर्शन का चयन वैज्ञानिक विधि से किया गया है। इसके लिये संस्तरित निदर्शन की समानुपातिक प्रणाली को अपनाया गया है। मोटे रूप से समग्र का एक तिहाई भाग निदर्शन के रूप में लेने का निश्चय किया। कुल 215 अभिजनों का चयन निदर्शन के लिए किया गया, जिनका अभिजन श्रेणीवार प्रदर्शन सारणी में किया गया है—

क्रम संख्या	अभिजन श्रेणी	समग्र	निदर्शन	प्रतिशत
1.	व्यावसायिक अभिजन	259	90	33.17
2.	शैक्षणिक अभिजन	211	70	34.74
3.	नौकरशाह अभिजन	115	40	34.78
4.	राजनैतिक अभिजन	37	15	40.54
	योग	**622**	**215**	**34.56**

2.5.2 श्रेणीवार अभिजनों का चयन

अभिजन श्रेणीवार निदर्शन की संख्या निश्चित करने के पश्चात् द्वितीय चरण में उत्तरदाता के रूप में लिये जाने वाले अभिजनों का चयन किया गया। इस प्रक्रिया को पुनः दो चरणों में विभाजित कर सम्पन्न किया।

(क) सर्वप्रथम अभिजन श्रेणीवार समग्र के समस्त अभिजनों के नामों की सूची हिन्दी वर्ण माला के क्रमानुसार तैयार की गई।

(ख) तत्पश्चात् सांख्यिकी के निम्न सूत्र की सहायता से सूची में से नाम चयनित किये—

$$\text{सूत्र} = \frac{\text{समग्र}}{\text{निदर्शन}} = \text{उत्तरदाता}$$

जैसे व्यावसायिक अभिजन $= \frac{259}{90} = 2.87$

यहाँ व्यावसायिक अभिजनों की सूची में से सर्वप्रथम तीसरा नाम चुना। इसके बाद क्रमशः 2.87 को जोड़कर आगे के नामों का चयन करते गये। जैसे 2.87 + 2.87 = 5.74 आने पर इसी सूची का दूसरा अभिजन छठे स्थान वाले को समझ लिया गया। सांख्यिकी विधि के अनुरूप यदि (.) के बाद भी संख्या 50 से कम हो तो, उसको छोड़ दिया गया है एवं दशमलव के बाद की संख्या 50 से अधिक हो तो उसे एक माना गया है।

जैसे – राजनीतिक अभिजन $\frac{37}{15} = 2.46$ आने के

कारण इस सूची में प्रथम उत्तरदाता के रूप में क्रम संख्या 2 पर अंकित नाम को चुना गया।

2.6 तथ्य संकलन

अध्ययन समस्या के चयन, उसकी उपादेयता, उद्देश्यों की जानकारी एवं समग्र तथा निदर्शन के चयन के उपरान्त तथ्य संकलन अध्ययन का एक महत्वपूर्ण चरण है। प्रस्तुत अध्ययन में प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के स्त्रोतों की सहायता ली गई है। तथ्य संकलन की कुछ प्रमुख प्रविधियां, जो काम में ली गई हैं, इस प्रकार हैं–

(1) प्रश्नावली

यह व्यापक क्षेत्र में बिखरे हुए व्यक्तियों के सामान्य विचारों, भावनाओं, प्रतिक्रियाओं, सुझावों तथा व्यवहारों को जानने की सरलतम, मितव्ययी, शीघ्रगामी तथा उपयुक्त विधि है।

(2) साक्षात्कार

कभी–कभी उत्तरदाताओं से कुछ विशेष प्रकार की सूचनाएँ संकलित करने हेतु अनुसूची के साथ–साथ साक्षात्कार करना जरूरी हो जाता है। साथ ही अधिकतर अभिजनों से व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करके आपसी वार्तालाप एवं विचारों के आदान–प्रदान द्वारा सूचनाएँ संकलित करने का प्रयास किया गया।

(3) तथ्य संकलन के द्वितीयक स्त्रोत

तथ्य संकलन के द्वितीयक स्त्रोत के रूप में विभिन्न प्रकार के सर्वेक्षणों, अनुभवाश्रित शोध, जनगणना रिपोर्ट्स एवं पुस्तिकों, गजेटियर, समाचार–पत्र एवं शोध पत्रिकाओं, विविध मंत्रालयों एवं आयोगों के प्रतिवेदनों के साथ–साथ प्रलेखों का भी सहारा लिया गया है, ताकि शोध को बल मिल सके।

2.7 उप–कल्पनाएँ

प्रस्तुत अध्ययन को वैज्ञानिक आधार पर निर्देशित दिशा की ओर ले जाने हेतु कुछ उपकल्पनाओं का निर्माण किया गया है और इन्हीं उप–कल्पनाओं को अभिजनों की सहायता से वैज्ञानिक आधार पर प्रमाणित करने की चेष्टा की गई है। प्रमुख उपकल्पनाएँ निम्नांकित हैं–

1. एकाकी परिवार की अपेक्षा संयुक्त परिवार के सदस्यों को अभिजन के अधिक अवसर प्राप्त होते हैं।
2. दलित अभिजन ग्रामीण परिवेश की तुलना में नगरीय परिवेश से अधिक प्रभावित होते हैं।
3. दलित के उद्‌देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति में दलित अभिजन सहयोग करते हैं।

4. उच्च पद प्राप्ति के बाद व्यक्ति अपने परिवार, जाति एवं समाज से परकीकृत हो जाता है।
5. दलितों में शिक्षा, सम्पत्ति एवं व्यावसायिक गतिशीलता में पीढ़ी–दर पीढ़ी वृद्धि हो रही है।
6. संवैधानिक प्रावधानों, सरकारी प्रयासों एवं आर्थिक विकास के फलस्वरूप दलितों में सामाजिक–सांस्कृतिक परिवर्तन आ रहे हैं।
7. कुछ प्रदेशों में जागीरदारी एवं जमींदारी प्रथा के फलस्वरूप दलितों में आजादी पूर्व समुचित नेतृत्व को पनपने का अवसर नहीं मिला।
8. दलितों से सम्बन्धित जातीय एवं सामाजिक संगठन अपने वास्तविक लक्ष्यों की प्राप्ति में असफल रहे हैं।
9. मध्यम एवं उच्च आय वर्ग के सदस्यों को निम्न आय वर्ग की अपेक्षा अभिजन के अधिक अवसर प्राप्त होते हैं।
10. सरकारी कार्यक्रमों एवं नीतियों के प्रति जागरूकता से दलितों का समुचित विकास हुआ है।

2.8 तथ्यों का प्रस्तुतीकरण

अनुसूची एवं साक्षात्कार से प्राप्त सूचनाओं का गहनता एवं सावधानीपूर्वक अध्ययन करके तथ्य प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। प्रस्तुत अध्ययन में तथ्यों के प्रस्तुतीकरण में समाज वैज्ञानिक रूप से महत्वपूर्ण प्रणालियों यथा– वर्गीकरण, सारणीयन, सांख्यिकी विश्लेषण आदि का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन के तथ्यों को उसकी प्रकृति के अनुरूप विशिष्ट वर्गों में रखा गया है तथा वर्गीकरण में तथ्यों की समरूपता के साथ ही उसकी सहायता से सम्बद्धता का ध्यान रखा गया है। अध्ययन के उद्देश्यों के अनुरूप तथ्यों को वर्गीकृत किया गया है तथा यथास्थान उपकल्पनाओं का परीक्षण भी किया गया है।

विभिन्न स्वतन्त्र चरों यथा– शिक्षा, आयु, मूल निवास, पारिवारिक स्वरूप, जाति आदि को अन्य चरों से सह–सम्बन्धात्मक रूप से स्पष्ट करने के अतिरिक्त कतिपय महत्वपूर्ण तथ्यों का उच्च सांख्यिकीय विश्लेषण किया गया है। आँकड़ों का प्रदर्शन, संख्या एवं प्रतिशत दोनों में किया गया है।

00000————00000

अध्याय - 3

दलित अभिजनों का उद्भव : कारक एवं प्रक्रिया

- अभिजन प्रस्थिति : सहायक कारक
- दलित अभिजन एवं वर्तमान पद प्राप्ति में सहायक कारक
- अभिजनों के जीवन पर पुस्तक एवं महापुरूषों का प्रभाव
- अभिजन एवं पुस्तक प्रभाव
- साहित्य एवं पुस्तकों का वर्गीकरण

3. दलित अभिजनों का उद्‌भव : कारक एवं प्रक्रिया

पूर्व अध्याय में प्रस्तुत अध्ययन से सम्बन्धित अध्ययन पद्धति की विवेचना की गई है, प्रस्तुत अध्याय में दलित अभिजनों के उद्‌भव को स्पष्ट किया गया है।

सामाजिक एवं धार्मिक निर्योग्यताओं के कारण प्राचीन काल से ही दलितों को सामाजिक क्रियाकलापों में भाग लेने की स्वतन्त्रता नहीं थी, जिसके परिणामस्वरूप उनमें शोषण के प्रति मूक रहने की प्रवृत्ति का विकास हुआ।[1] लेकिन वर्तमान में जो महत्वपूर्ण परिवर्तन आये हैं, उनमें एक प्रमुख परिवर्तन है दलितों पर सदियों से लादी गई सामाजिक एवं धार्मिक निर्योग्यताओं की वैधानिक रूप से समाप्ति। शहरीकरण, औद्योगिकीकरण, पश्चिमीकरण, शिक्षा, आधुनिकीकरण एवं राजनीतिकरण जैसे कारकों ने दलित वर्ग के व्यक्तियों को व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से अपने निम्न सामाजिक स्तर तथा आर्थिक एवं राजनीतिकरण जैसे कारकों ने दलित वर्ग के व्यक्तियों को व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से अपने निम्न सामाजिक स्तर तथा आर्थिक एवं राजनैतिक पिछड़ेपन के लिये जाग्रत किया है। सामाजिक, आर्थिक, एवं राजनैतिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तनों से उनकी जीवन–शैली में भी परिवर्तन आया है।

दलितों की दशा सुधारने में डा. अम्बेडकर का योगदान महत्वपूर्ण है, जिनके द्वारा संविधान में किये गये विशेष प्रावधानों के फलस्वरूप इन जातियों को स्वतन्त्रता, समानता एवं संरक्षण मिला है। मध्य युग में प्रमुख

---

[1] श्रीवास्तव, एस.एन., हरिजन्स इन इंडियन सोसायटी (ए कल्चरल स्टेडी ऑफ द स्टेट्स ऑफ हरिजन्स एण्ड अदर बैकवर्ड क्लासेज फ्रॉम द अर्लीएस्ट टाइम्स टू दी प्रजेंट डे), लखनऊ, द अपर इंडिया पब्लिशिंग हाउस प्रा. लि., 1980, पृ. 95–96

संतों ने अपने उपदेशों द्वारा समानता, सहिष्णुता, दया एवं प्रेम का संदेश जनसामान्य तक पहुँचाया। संत रविदास स्वयं एक अछूत संत थे, जिनकी प्रतिभा, ज्ञान एवं उपदेशों के कारण अनेक ऊँची जाति के सदस्य उनके शिष्य बने। समाज सुधार एवं पुनर्जागरण आन्दोलन के दौरान प्रमुख समाज सुधारकों, यथा– राजा राम मोहनराय, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द सरस्वती, रामकृष्ण परमहंस आदि ने इन जातियों की समस्याओं की ओर जनसामान्य का ध्यान आकर्षित किया एवं अपने द्वारा स्थापित समाज सुधारक संगठनों में बिना किसी भेदभाव के इन जातियों को सुविधाएँ प्रदान की गईं। इस प्रकार एक ओर राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान भारत को आजाद करवाने हेतु राजनैतिक प्रयास किये गये, वहीं दूसरी ओर दलितों के उत्थान के लिये राजनेताओं, समाज सुधारकों एवं नीति–निर्माताओं ने प्रयास किये। इन प्रयासों, संवैधानिक प्रावधानों, कल्याण कार्यक्रमों एवं योजनाओं से पीड़ित उपेक्षित एवं शोषित दलित वर्ग की सामाजिक–आर्थिक दशा में सुधार आया है एवं इन जातियों के व्यक्तियों ने भी कुछेक उच्च पद प्राप्त करने में सफलता प्राप्त की है।

अधिकांश विद्वान एवं समाजशास्त्री 'अभिजन' स्थिति तक पहुँचने के लिए सम्पत्ति, बुद्धि, शक्ति, पारिवारिक पृष्ठभूमि, कुशलता, व्यक्तिगत गुण, शिक्षा जाति एवं शारीरिक स्वास्थ्य को प्रमुख कारक मानते हैं। वर्तमान लोकतान्त्रिक व्यवस्थाओं में सैद्धान्तिक रूप से जाति एवं धर्म का प्रभाव गौण हो गया है तथा शिक्षा, सम्पत्ति, पारिवारिक प्रतिष्ठा और समाजसेवा प्रमुख उत्तरदायी कारक हैं। अभिजन स्थिति अर्जित करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि उच्च सभी कारक एक साथ हों। दूसरे शब्दों में, अभिजन परिसंचरण की प्रक्रिया बहुआयामी होती है, जिसमें सामाजिक, आर्थिक, बौद्धिक, साहसिक एवं राजनैतिक कारक एक साथ या पृथक–पृथक अपनी भूमिका अदा करते हैं।[2]

---

[2] मोस्का, जी., द रूलिंग क्लास, न्यूयार्क, मैक्यू बुक हिल बुक कं. 1939, पृ. 50

3.1 'अभिजन' प्रस्थिति : सहायक कारक

हमीरपुर जनपद में दलित वर्ग के व्यक्तियों द्वारा वर्तमान 'अभिजन' पद अर्जित करने में उत्तरदायी कारकों का उल्लेख करने से पूर्व यहाँ उन सर्वमान्य कारकों की संक्षिप्त जानकारी देना आवश्यक है, जो भारत के विविध हिस्सों में किये गये अनेक अध्ययनों में उभर कर सामने आये हैं।

3.1.1 शिक्षा

पश्चात्य विद्वानों कोलाम्ब्रिस्का (1912), मिल (1956), लासवैल (1966) तथा मिलिलैण्ड (1970) एवं प्रमुख भारतीय समाज वैज्ञानिकों सच्चिदानन्द (1977), अब्बासायूलू (1978), शर्मा (1979), राय तथा सिंह (1987) एवं सिंह (1989) ने शिक्षा को 'अभिजन' प्रस्थिति के लिये प्रमुख उत्प्रेरक कारक माना है। आज से सैकड़ों वर्ष पूर्व ज्योतिबा फूले ने शिक्षा के महत्व को समझकर पुणे में हरिजन लड़कियों के लिये 1848 में एवं हरिजन लड़के–लड़कियों के लिये 1851 में प्रथम बार स्कूल खोला तथा हंटर आयोग के समक्ष प्रथम बार हरिजनों के लिये अनिवार्य शिक्षा व्यवस्था का प्रस्ताव रखा।[3] शिक्षा में माध्यमिक या इससे निम्न, उच्चतर माध्यमिक, स्नातक, स्नातकोत्तर, व्यावसायिक शिक्षा (यथा– एल.एल.बी., एम.बी.बी.एस., अभियांत्रिकी एवं शिक्षा स्नातक) शामिल हैं।

3.1.2 राष्ट्रीय आन्दोलन

1857 की क्रान्ति, जिसे प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम भी कहा जाता है, से 1947 तक स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु किये गये प्रयासों को राष्ट्रीय आन्दोलन की संज्ञा दी जाती है। इसमें राजनीतिक दलों की सदस्यता, आर्य समाज, ब्रह्मसमाज जैसी समाज सुधारक संस्थाओं की सदस्यता एवं आजादी पूर्व

---

[3] कीर, धनन्जय, महात्मा ज्योतिबा फूले : फादर ऑफ इंडियन सोशियल रिवाल्यूशन, बॉम्बे, पापुलर प्रकाशन, द्वितीय संस्करण, 1975, पृ. 26

गठित दलित संगठनों की सदस्यता तथा जेल यात्रा को रखा गया है। आन्दोलन के दौरान की गई सेवा, जेल यात्रा आदि का लाभ अभी तक स्वयं को या उनके परिवार के सदस्यों को मिल रहा है। बिहार की तीसरी विधानसभा के अध्ययन में झा[4] ने 38.5 प्रतिशत, राजस्थान की चतुर्थ विधानसभा में पुरी[5] ने 50 प्रतिशत तथा सिंह[6] ने उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश एवं बिहार के 45.29 प्रतिशत विधायकों को स्वतन्त्रता पूर्व राजनीति में सक्रिय पाया।

3.1.3 पारिवारिक ख्याति

परिवारिक ख्याति एवं प्रतिष्ठा भी व्यक्ति विशेष के लिये कभी–कभी उच्च पद प्राप्ति में सहायक होती है। इसमें जातीय नेतृत्व, अध्यापक, वकील, लोक सेवक, धार्मिक उपदेशक आदि को रखा जा सकता है। मोस्का[7] ने स्वीकार किया है कि प्राचीन मिश्र, मध्य यूरोप एवं भारत में वंशानुगत जातियों (शाही परिवार में जन्म) को ही अभिजन से अधिक अवसर मिलते थे। नवलखा[8] ने अपने अध्ययन में पाया कि 83.3 प्रतिशत अभिजन उच्च, सम्पन्न एवं मध्यम सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि वाले परिवारों से आये हैं। प्राचीन भारतीय समाज में जातीय श्रेष्ठता के कारण ही ब्राह्मणों को उच्च एवं सम्मानजनक पद प्राप्त हुए थे।

3.1.4 सम्पत्ति

आर्थिक सम्पन्नता समाज में व्यक्ति की प्रस्थिति एवं भूमिका को उच्च स्तर प्रदान करती है। सम्पत्ति में चल या अचल, जैसे– आवासीय मकान, किराये पर दिये मकान, कृषि योग्य भूमि, मिल कारखाने, बस या ट्रक

---

[4] झा, एम.एस., पालिटिकल इलिट इन बिहार, बॉम्बे, वोरा एण्ड कं. पब्लिशर्स प्रा. लि., 1972, पृ. 178
[5] पुरी, एस.एल., पब्लिक लेजिस्लेटिव इलिट इन एन इंडियन स्टेट, न्यू देहली, अभिनव पब्लिकेशन्स, 1978, पृ. 51–52
[6] सिंह, आर.पी., दलितों के विधानमण्डलीय अभिजन, दिल्ली, मित्तल पब्लिकेशन्स, 1989, पृ. 93
[7] मोस्का, जी., इबिद, पृ. 59
[8] नवलखा, एस., इलिट एण्ड सोशियल चेंज–ए स्टेडी ऑफ इलिट फारमेशन इन इंडिया, न्यू देहली, सेज पब्लिकेशन्स, 1989, पृ. 82–82

जैसे वाहन आदि को रखा गया है। सच्चिदानन्द (1977), सिंह एवं सुन्दरम् (1987), राय एवं सिंह (1987) एवं वेंकटेश्वरलू (1990) आदि ने सम्पत्ति को अभिजन पद प्राप्ति का एक महत्वपूर्ण कारक पाया है।

3.1.5 समाज सेवा

अधिकांश समाजशास्त्रियों ने एक प्रमुख कारक के रूप में समाज सेवा का उल्लेख किया है, जो उच्च पद प्राप्ति में सहायक होती है। इसमें सामाजिक मामलों में सक्रिय भूमिका अदा करना, पारस्परिक विवादों के समाधान में रूचि लेना, अपने समुदाय के लोगों को रोजगार दिलवाने में सहायता करना, उचित परामर्श एवं मार्गदर्शन, जाति–पंचायतों एवं जातीय संगठनों में सक्रिय भागीदारी जैसे प्रयास शामिल हैं। कबीर, ज्योतिबा फूले, दयानन्द सरस्वती, महात्मा गाँधी, डॉ. अम्बेडकर, पेरियार रामा स्वामी नायकर, विनोबा भावे आदि महापुरूषों द्वारा की गई समाज सेवा के कारण ही आज भी हम उन्हें श्रृद्धापूर्वक याद करते हैं एवं आगे भी याद किया जाता रहेगा।

3.1.6 संवैधानिक प्रावधान

जहाँ एक ओर संविधान द्वारा दलितों पर सदियों से थोपी हुई निर्योग्यताओं को वैधानिक रूप से समाप्त कर दिया है, वहीं दूसरी ओर संविधान में अनेक सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक प्रावधान करके इन जातियों को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक न्याय दिलाने का प्रयास भी किया गया है। व्यवस्थापिका एवं लोक सेवाओं में आरक्षण, आर्थिक रियायत, शैक्षणिक एवं ऋण सुविधाओं के फलस्वरूप इन जातियों के विकास को नई दिशा मिली है। आजादी के बाद इन जातियों के व्यक्ति भी बड़ी तेजी से प्रशासनिक, शैक्षणिक एवं तकनीकी पदों पर पहुँचने में सफल हुए हैं।[9]

---

[9] देशपांडे, वसन्त, टुवार्डस सोशियल इन्टीग्रेशन्स, प्राब्लम्स ऑफ एडजस्टमैन्ट ऑफ शिड्यूल्ड कास्ट इलिट, पुणे, सुभधा सारस्वत, 1978, पृ. 215

3.1.7 स्थानीय स्वायत्तशासी संस्थाओं की सदस्यता

नगरपालिका, नगर परिषद एवं नगर निगम जैसी शहरी स्वायत्त संस्थाएँ तथा ग्राम पंचायत, पंचायत समितियां एवं जिला परिषद जैसी पंचायती राज संस्थाओं की सदस्यता एवं सहकारी समितियों में भागीदारी इस कारक के अन्तर्गत आती हैं। कभी–कभी उक्त स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं की सदस्यता भी एक व्यक्ति विशेष को राजनैतिक अभिजन बनाने में सहायक होती है।

3.1.8 दलितों में आन्तरिक जागृति

दलितों में जागृति लाने का श्रेय ज्योतिराव फूले को जाता है जिन्होंने पूना में 1873 में 'सत्य शोधक समाज' की स्थापना कर इन जातियों में जागृति लाने का प्रयास किया।[10] तत्पश्चात् डॉ. अम्बेडकर ने इन जातियों में चेतना एवं संगठन की भावना उत्पन्न करने के लिये बहिष्कृत हितकारिणी सभा (1924), महार परिषद् (1936), आल इंडिया शिड्यूल्ड कास्ट फैडरेशन एवं दलित वर्ग कल्याण समिति (1942), पीपुल्स एजूकेशन सोसायटी (1945) एवं रिपब्लिक पार्टी (1956) जैसे सामाजिक एवं राजनैतिक संगठनों का गठन किया। उक्त संगठनों एवं आजादी के बाद निर्मित अनेक संगठनों के दलित चेतना में जागृत हुई।

3.2 दलित अभिजन एवं वर्तमान पद प्राप्ति में सहायक कारक

वर्णित कारक ऐसे सर्वमान्य कारक हैं जो विविध अध्ययनों में उभर कर आये हैं। ये कारक सामूहिक या पृथक–पृथक व्यक्ति विशेष को अभिजन प्रस्थिति अर्जित करने में सहायता करते हैं। यहाँ उन कारकों का उल्लेख किया गया है जिनका योगदान हमीरपुर जनपद में दलित अभिजन अपने वर्तमान पद तक पहुँचने में उत्तरदायी मानते हैं। तालिका में दलित

[10] कीर, धनन्जय, 1974, पृ. 127

अभिजनों द्वारा अपने वर्तमान पद प्राप्ति में सहायक बताये गये कारकों का उल्लेख किया गया है।

तालिका 3.2.1

क्र.	वर्तमान पद प्राप्ति में सहायक कारक	संख्या	प्रतिशत
1	शिक्षा	15	10.00
2	संवैधानिक प्रावधान	10	6.67
3	पारिवारिक ख्याति	04	2.67
4	समाज सेवा	01	0.67
5	शिक्षा एवं संवैधानिक प्रावधान	40	26.67
6	शिक्षा एवं पारिवारिक ख्याति	20	13.33
7	समाज सेवा एवं पारिवारिक ख्याति	01	0.67
8	शिक्षा, संवैधानिक प्रावधान एवं पारिवारिक ख्याति	26	17.33
9	शिक्षा, पारिवारिक ख्याति एवं सम्पत्ति	08	5.33
10	शिक्षा, संवैधानिक प्रावधान एवं सम्पत्ति	12	8.00
11	शिक्षा, संवैधानिक प्रावधान एवं समाज सेवा	10	6.67
12	शिक्षा, समाज सेवा एवं सम्पत्ति	03	2.00
	योग	**150**	**100.00**

तालिका संख्या 3.2.1 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि हमीरपुर जनपद में 20 प्रतिशत दलित अभिजन एक कारक को, 40.67 प्रतिशत दो एवं 39.33 प्रतिशत अभिजन तीन कारकों का योगदान अपने वर्तमान पद प्राप्ति में सहायक मानते हैं। एक कारक को वर्तमान पद प्राप्ति के लिये उत्तरदायी मानने वाले अभिजनों में 10 प्रतिशक्षा को, 6.67 प्रतिशत संवैधानिक प्रावधानों एवं 2.67 प्रतिशत पारिवारिक ख्याति को सहायक मानते हैं।

लगभग 40.67 प्रतिशत दलित अभिजन दो कारकों का योगदान अपने वर्तमान पद पर पहुँचने में सहायक बताते हैं जिनमें शिक्षा एवं संवैधानिक प्रावधानों को 26.67 प्रतिशत तथा शिक्षा षिक्षा एवं पारिवारिक ख्याति को 13.33 प्रतिशत अभिजन उत्तरदायी रूप से उत्तरदायी मानते हैं जिनमें से सर्वाधिक 17.33 प्रतिशत शिक्षा, संवैधानिक प्रावधान एवं पारिवारिक

ख्याति को, 8 प्रतिशत षिक्षा, संवैधानिक प्रावधान एवं सम्पत्ति को एवं 6.67 प्रतिशत, शिक्षा, संवैधानिक प्रावधान एवं समाज सेवा का उल्लेख करते हैं।

दलित अभिजनों ने अपने वर्तमान पद प्राप्ति के लिये शिक्षा, संवैधानिक प्रावधान, पारिवारिक ख्याति, सम्पत्ति, समाज सेवा अदि कारकों को सहायक माना है। तालिका 3.2.1 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि दलित अभिजनों की दृष्टि में तीन कारक प्रमुखतः उनको 'अभिजन' प्रस्थिति तक पहुँचाने में सहायक रहे हैं। ये तीन कारक हैं –

1. शिक्षा
2. संवैधानिक प्रावधान
3. पारिवारिक स्थिति

तालिका संख्या 3.2.2

अभिजन प्रस्थिति तक पहुँचाने वाले कारक

क्रमांक	कारक समूह	संख्या	मुख्य कारक
1.	शिक्षा एवं अन्य	134	शिक्षा
2.	संवैधानिक प्रावधान एवं अन्य	98	संवैधानिक प्रावधान
3.	परिवारिक ख्याति एवं अन्य	59	परिवारिक ख्याति
(कुल अभिजन – 150)			

1. शिक्षा

हमीरपुर जनपद में दलित अभिजनों के वर्तमान पद तक पहुँचने में सर्वाधिक योगदान शिक्षा एवं अन्य कारकों का है, जिनमें शिक्षा प्रमुख कारक है। लगभग 134 अभिजन शिक्षा को एकमात्र या अन्य कारकों के साथ 'अभिजन' प्रस्थिति के लिये प्रमुख कारक मानते हैं। इस आधार पर यह

निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि भले ही अन्य कारक सहायक अवश्य रहे हों, उनको अभिजन स्तर तक पहुँचाने में शिक्षा की मुख्य भूमिका रही है।

2. सवैधानिक प्रावधान

'अभिजन' पद प्राप्ति में दूसरा प्रमुख कारक संवैधानिक प्रावधान है। 150 में से 98 दलित अभिजन वर्तमान पद प्राप्ति में स्वतन्त्र या अन्य कारकों के साथ संवैधानिक प्रावधानों को मुख्यतः उत्तरदायी मानते हैं। अधिकांश अभिजनों ने शिक्षा प्राप्ति के दौरान छात्रवृत्ति, शुल्क मुक्ति, छात्रावास एवं शिक्षण–प्रशिक्षण तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थाओं में आरक्षण कोटे का लाभ प्राप्त किया एवं बाद में उनका वर्तमान पद पर चयन भी दलितों के लिये आरक्षित कोटा के अन्तर्गत ही हुआ है। शत–प्रतिशत राजनैतिक अभिजन दलित जातियों के लिये आरक्षित स्थानों से ही निर्वाचित होकर आये हैं।

3. पारिवारिक ख्याति

पारिवारिक प्रतिष्ठा के सम्बन्ध में लास्की का यह कथन उचित प्रतीत होता है कि "अवसर पैतृक परिस्थितियों पर निर्भर करते हैं। आधुनिक शैक्षणिक व्यवस्था में गरीब अभिभावकों के बच्चे अधिक लाभदायक रहते हैं। जो बच्चे स्कूल में भूखे आते हैं वे शिक्षा का उतना लाभ नहीं उठा सकते, जितना लाभ भरपेट खाकर आने वाला उठा सकता है।[11] दलित वर्ग के 59 अभिजन एकमात्र या अन्य कारकों के साथ पारिवारिक ख्याति को अपने वर्तमान पद प्राप्ति के लिये प्रमुख मानते हैं। इस तथ्य की पुष्टि हेतु इन अभिजनों के पिता के शैक्षणिक स्तर, व्यवसाय एवं आमदनी का अध्ययन करने पर पाया कि अन्य अभिजनों की अपेक्षा इनके पिता अधिक शिक्षित थे एवं स्वच्छ व्यवसाय (जैसे सरकारी सेवा, ठेकेदारी, लकड़ी का काम) में लगे हुए थे।

---

[11] लास्की, एच.जे. ग्रामर ऑफ पालिटिक्स, लंदन, जार्ज एलेन एण्ड अनविन लि., 1950, पृ. 154–157

दलितों के लिये शिक्षा एवं संवैधानिक प्रावधानों पर विशेष ध्यान देना अत्यावश्यक है। देश के साक्षरता प्रतिशत से उत्तर प्रदेश में साक्षरता प्रतिशत बहुत कम है। इसमें भी दलितों का साक्षरता प्रतिषत अभी भी बहुत ही कम है। महिलाओं एवं ग्रामीण क्षेत्रों में जहाँ 81 प्रतिशत दलित जनसंख्या निवास करती है, साक्षरता की स्थिति तो बहुत ही दयनीय है। अतः यह आवश्यक है कि दलितों में साक्षरता प्रतिशत को बढ़ाने के लिये विशेष सुविधाएँ प्रदान की जायें। इसके साथ ही इन जातियों के लिये आरक्षित कोटे को इन्हीं जातियों से भरा जाये, एवं वर्षों से चले आ रहे 'बैकलॉग' को पूरा किया जाये। चूँकि संविधान द्वारा अभीष्ट वर्गविहीन और जातिविहीन समाज की सुनिश्चितता हकीकत नहीं बन पायी और दलितों का इतना विकास नहीं हो सका कि वे अपने पैरों पर खड़े हो सकें, अतः उनको प्रदत्त संवैधानिक विशेषाधिकारों का जारी रखना अनिवार्य है। इस कार्य के लिए राजनीतिक और सामाजिक इच्छा–शक्ति के समन्वय की आवश्यकता है। जब अमेरिकन मिशनरी दलित बच्चों के लिए स्कूल खोलकर प्यार पूर्वक उनकी उचित शिक्षा की बात सोच सकते हैं तो क्यों न भारतीय राजनेता, समाज सुधारक और धार्मिक अगुआ दलितोद्धार एवं शिक्षा की बात सही अर्थों में करें? आवश्यकता इस बात की है कि दलित बच्चों को षिक्षा अनिवार्य कर दी जाये तथा इनके लिए नवोदय विद्यालय की तर्ज पर विद्यालय खोलकर खाने–पीने, रहने तथा अध्ययन की निःशुल्क व्यवस्था की जाये।

3.3 अभिजनों के जीवन पर पुस्तक एवं महापुरूषों का प्रभाव

वर्णित कारकों के अलावा प्रायः महापुरूषों एवं साहित्यिक प्रभाव भी व्यक्ति विशेष को किसी खास व्यवसाय या पद प्राप्ति हेतु प्रेरित करता है। प्रत्येक व्यक्ति, जबसे वह सोचना आरम्भ करता है, किसी न किसी महापुरूष को अपना 'आदर्श' स्वीकार करके उसके अनुसार आचरण करने का प्रयास

करता है। व्यक्ति का यह 'आदर्श' समय, अनुभव एवं वैचारिक परिपक्वता के साथ परिवर्तित होता है।

3.3.1 अभिजन एवं महापुरूष

एक प्रसिद्ध उक्ति है कि राजा का मान अपने राज्य में तथा विद्वानों एवं महापुरूषों का मान सर्वत्र होता है। भारत में अनेक महापुरूषों ने जन्म लिया, जिनमें ईश्वरीय अवतार, धर्मगुरू, समाज सुधारक, स्वतन्त्रता सेनानी, राजनेता एवं प्रशासक शामिल हैं। महापुरूषों की महानता, कर्तव्यनिष्ठा, निःस्वार्थ सेवा, उद्‌देश्यप्रियता, मानवता, राष्ट्रीयता एवं बन्धुत्व भाव जैसे मानवीय गुण जनमानस पर गहरा एवं अमिट प्रभाव डालते हैं। नागरिकों में त्याग, शौर्य एवं बलिदान, स्वाभिमान, सहिष्णुता आदि गुणों का विकास इन महापुरूषों के उपदेशों, साहित्य एवं क्रियाकलापों से ही सम्भव हो पाता है। ऐसे महापुरूषों की याद को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिये उनके साहित्य का प्रकाशन, जन्म–दिवस पर अवकाश, सार्वजनिक स्थलों पर मूर्तियाँ लगाकर उनके संदेश को जनसामान्य तक पहुँचाने का प्रयास किया जाता है।

तालिका संख्या 3.3.1.1 में यह दर्शाया गया है कि हमीरपुर जनपद में दलित अभिजनों के जीवन पर किन–किन महापुरूषों का प्रभाव रहा है। इसकी जानकारी के लिये शोध प्रश्नावली में एक प्रश्न रखा गया– "आपको अपने जीवन में किन–किन महापुरूषों ने प्रभावित किया? प्राथमिकता के आधार पर बताइये।" प्रष्न की प्रकृति खुली होने के कारण अभिजनों ने एक, दो, तीन– संख्या में महापुरूषों के नामों का उल्लेख किया है। यहाँ पर वरीयता क्रम से चार तक महापुरूषों की संख्या प्रदर्शित की गई है।

तालिका संख्या 3.3.1.1

अभिजनों के जीवन पर महापुरूषों का प्रभाव

क्रमांक	महापुरूष	प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ
1.	डा. भीमराव अम्बेडकर	76 (50.67)	31 (20.67)	9 (6.00)	3 (2.00)
2.	महात्मा गाँधी	12 (8.00)	9 (6.00)	12 (8.00)	6 (4.00)
3.	स्वामी विवेकानन्द	8 (5.33)	9 (6.00)	10 (6.67)	2 (1.33)
4.	महात्मा कबीर	8 (5.33)	9 (6.00)	6 (4.00)	1 (0.67)
5.	भगवान बुद्ध	6 (4.00)	5 (3.33)	2 (1.33)	1 (0.67)
6.	जवाहर लाल नेहरू	1 (0.67)	6 (4.00)	6 (4.00)	2 (1.33)
7.	अन्य महापुरूष	30 (20.00)	55 (36.67)	51 (34.00)	1 (20.67)
8.	किसी का प्रभाव नहीं	9 (6.00)	—	—	—
	योग	**150 (100. 00)**	**124 (82.67)**	**96 (64.00)**	**46 (30.67)**

तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि हमीरपुर जनपद में में सर्वाधिक दलित अभिजन अपने जीवन पर डा. भीमराव अम्बेडकर का प्रभाव मानते हैं। इस सत्य में कोई आशंका नहीं हो सकती है क्योंकि डा. अम्बेडकर ने अपना सम्पूर्ण जीवन असहाय, दीन–हीन, उपेक्षित, अस्पृश्य एवं पीड़ित वर्ग के विकास एवं उत्थान में लगाया। प्राथमिकता क्रम के आधार पर डा. अम्बेडकर का अपने जीवन पर प्रभाव मानने वाले अभिजनों मे 50.67 प्रतिशत प्रथम, 20.67 प्रतिशत द्वितीय, 6 प्रतिशत तृतीय एवं 2 प्रतिशत चतुर्थ स्थान मानते हैं।

डा. अम्बेडकर के पश्चात् सर्वाधिक अभिजन अपने जीवन पर महात्मा गाँधी का प्रभाव बताते हैं। 8 प्रतिशत अभिजन प्रथम स्थान पर, 6 प्रतिशत द्वितीय स्थान पर, 8 प्रतिशत तृतीय स्थान पर, 4 प्रतिशत चतुर्थ स्थान पर, गाँधी का प्रभाव अपने जीवन में मानते हैं। यह गाँधी जी द्वारा हरिजनों की सेवा एवं अस्पृश्यता समाप्ति के उनके प्रयासों का परिणाम है। इन महापुरूषों के अलावा प्राथमिकता के क्रम में 5.33 प्रतिशत अभिजन स्वामी विवेकानन्द का, 5.33 प्रतिशत महात्मा कबीर का, 4 प्रतिशत भगवान बुद्ध का एवं 20 प्रतिषत अन्य महापुरूषों का प्रभाव मानते हैं। अन्य महापुरूषों में ज्योति राव फूले, दयानन्द सरस्वती, लाल बहादुर शास्त्री, रविदास, रामकृष्ण मार्क्स आदि प्रमुख हैं।

तालिका के विश्लेषण से तीन बातें उभर कर सामने आती हैं–

प्रथम, सर्वाधिक दलित अभिजन महापुरूष के रूप में अपने जीवन पर डा. अम्बेडकर का प्रभाव मानते हैं। साथ ही कबीर, रविदास, ज्यतिराव फूले एवं भगवान बुद्ध जैसे दलित उद्धारकों का प्रभाव भी उनके जीवन में रहा है।

द्वितीय, दलित अभिजन अपने जीवन में न केवल दलित नेताओं, दलित साहित्यकारों एवं दलित समाज सुधारकों का प्रभाव स्वीकार करते हैं, अपितु सवर्ण महापुरूषों का प्रभाव स्वीकार करते हैं।

तृतीय, अभिजन मात्र अपने देश के महापुरूषों से ही प्रभावित न होकर विदेशी महापुरूषों से भी प्रभावित रहे हैं, यथा– ईसा मसीह, अब्राहम लिंकन, मार्क्स आदि।

3.4 अभिजन एवं पुस्तक प्रभाव

साहित्य एवं पुस्तकों द्वारा महापुरूष मरकर भी अमर हो जाते हैं। इन महापुरूषों का साहित्य जनसामान्य को अपने जीवन में उचित राह दिखाने का कार्य करता है। पुस्तकों के महत्व को स्पष्ट करते हुए एक बार डा. अम्बेडकर ने कहा था "मेरे जैसे व्यक्ति को, जो समाज से बहिष्कृत है, को ये पुस्तकें उनके हृदय तक पहुँचाने मे मदद करती हैं।[12] साहित्य समाज का दर्पण होता है क्योंकि सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों, आचार–व्यवहार एवं सभ्यता का ज्ञान साहित्य का ज्ञान साहित्य द्वारा ही होता है। गोलमेज सम्मेलन में आये प्रतिनिधियों के हाथों में अपने द्वारा लिखित पुस्तक देखकर डा. अम्बेडकर ने अपनी प्रसन्नता एवं साहित्यिक महत्ता इस प्रकार व्यक्त की, "चूँकि मैं अछूत हूँ, इसलिये आपके समकक्ष नहीं बैठ सकता, किन्तु मेरी लेखनी के माध्यम से मैंने अपना स्थान आप लोगों के हृदय में बना लिया है। आपके हाथों में मेरे द्वारा रचित पुस्तक का होना इस बात का प्रमाण है कि कम से कम विचारों के मामले में तो आप मुझसे इक्तफाक रखते ही हैं और आने वाले समय में व्यवहार में भी मेरे विचारों से इक्तफाक करेंगे, ऐसा मेरा सोचना है।"[13]

3.5 साहित्य एवं पुस्तकों का वर्गीकरण

हमीरपुर जनपद में दलित अभिजनों ने अपने जीवन में साहित्य एवं पुस्तक प्रभाव का जो विवरण दिया है, उसमें पुस्तकों की एक लम्बी सूची है। यहाँ अभिजनों द्वारा उल्लिखित साहित्य एवं पुस्तकों को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया गया है–

---

[12] मेहता, चेतन, युगदृष्टा डा. भीमराव अम्बेडकर, जयपुर, मलिक एण्ड कं. (प्रकाशन), 1991, पृ. 11

[13] इबिद, पृ. 14

3.5.1 दलित साहित्य

वर्तमान में 'दलित' शब्द एवं 'दलित साहित्य' का व्यापक प्रचलन है। दलित साहित्य का स्वरूप कुछ ऐसा है जिसमें जाति–व्यवस्था, अस्पृश्यता, पुरोहितवाद की कठोरता, अन्यायपूर्ण परम्परा, ब्राह्मणवाद, सामन्तवाद एवं हिन्दू मनोवृत्ति के प्रति निरन्तर विद्रोह की भावना अन्तर्निहित है। दलित साहित्य चाहे गद्य में हो या पद्य में, वह जीर्ण–शीर्ण भारतीय समाज का नव निर्माण चाहता है, जहाँ मानव–मानव में अनुचित भेदभाव न हो, वर्ण तथा जाति का आतंक न हो, दलितों के प्रति घृणा एवं तिरस्कार न हो और सम्पूर्ण समाज में पारस्परिक प्रेम, स्वतन्त्रता, समानता और भ्रातृत्व भाव हो।[14]

प्रायः सभी युगों में दलित चेतना तो थी और उसका स्वरूप अधिकतर नैतिक एवं आध्यात्मिक था किन्तु सामाजिक तथा राजनैतिक दृष्टि से स्वयं दलित समाज सुषुप्त एंव दिशा–विहीन रहा। दलितों के प्रति संवेदना प्रकट करते हुए, अन्य लोगों ने इन्हें संभालने का प्रयत्न किया।[15] लेकिन इक्कीसवीं सदी के दहलीज पर खड़े भारत में दलित चेतना एवं दलित साहित्य का उभार वर्तमान सदी की सबसे बड़ी घटना है।[16] दलित साहित्य अपने उद्भव एवं प्रकृति की दृष्टि से ब्राह्मणवादी शक्तियों द्वारा दलितों पर समाज व्यवस्था के नाम पर थोपे गये वर्ण–व्यवस्था का निषेध है। दलित साहित्य का अर्थ हमारे लिये एक व्यापक, क्रान्तिकारी एवं मानवीय पक्ष प्रस्तुत करता है, जो सभी तरह की अमानवीय स्थितियों के खिलाफ निरन्तर विद्रोह एवं आक्रमण के साथ मानव समाज के निरन्तर बेहतर से बेहतर प्रगति का अर्थ भी रखती है।

---

[14] देशपांडे, वसन्त, 1978, इबिद, पृ. 225

[15] जाटव, डी.आर., 1993, इबिद, पृ. 262

[16] दलित एशिया टुडे (मासिक), मार्च, 1995, लखनऊ, पृ. 21

दलित साहित्य[17] को लेकर वर्तमान में बहस जारी है। साफ तौर पर बहस दो पक्षों के बीच चल रही है। एक पक्ष वह है जो उथली सहानुभूति के साथ दलित लेखन से जुड़ा है और दूसरे पक्ष में स्वयं दलित खड़ा है। पहले पक्ष के कुछ लोग जहाँ इस स्थापना में जुटे हैं कि दलित साहित्य की चेतना मार्क्सवादी ही रही है वहीं वे दलित आन्दोलन के प्रस्थान बिन्दु के रूप में मार्क्सवाद को ही चिन्हित कर रहे हैं। दूसरा पक्ष दलित साहित्य को अम्बेडकरवादी मान रहा है।[18] दलित साहित्य, चाहे वह किसी भी भाषा में हो, अम्बेडकर साहित्य से प्रभावित अवश्य होता है। व्यवस्था के प्रति विद्रोह, अन्याय एवं अनाचार के प्रति संघर्ष, पीड़ा एवं दुःख का साहसपूर्ण मुकाबला, अपने सम्मान एवं अधिकार की रक्षा करना, जाति, धर्म, वर्ण, परम्परा आदि परम्पराएँ स्थापित करना दलित साहित्य की कुछ मौलिक विशेषताएँ हैं। दलित साहित्य, अन्य साहित्यिक धाराओं से, कुछ हटकर है क्योंकि वह प्रतिबंधित, लक्ष्योन्मुख और दलितोद्धारक है, जबकि अन्य साहित्य, विशेषकर हिन्दू साहित्य विकृत, परम्परावादी, आदर्शवादी और अवसरवादी है।[19] दलित साहित्य में साहित्यिकता से अधिक दलित अस्मिता की चिन्ता है। दलित साहित्यकारों का मानना हे कि दलित समस्याओं पर तो वही प्रामाणिक रूप से लिख सकता है, जिसने दलित होने की पीड़ा को महसूस किया हो।

दलित साहित्य का तात्पर्य उस साहित्य से है, जो सम्पूर्ण भारतीय मानव समाज को बिना किसी भेदभाव, छल–कपट, दुत्कर–फटकार, अत्याचार–अनाचार के आगे बढ़ाता है, सम्पूर्ण मानव समाज और मनुष्य के सर्वांगीण विकास में सहायक होता है। विविध रूपों में आज जो दलित साहित्य प्रकाशित हो रहा है, डा. अम्बेडकर की विचारधारा, शैली एवं सम्प्रेरणा परिलक्षित हो रही है।

---

[17] दलित साहित्य के विस्तृत अध्ययन के लिये देखें– बहुजन संगठक (साप्ताहिक, नई दिल्ली, दलित पैंथर, बैरवा ज्योति (मासिक), नई दिल्ली

[18] दलित एशिया टुडे, मासिक, मार्च, 1995, लखनऊ., पृ. 5

[19] जाटव, डी.आर., 1993, इबिद, पृ. 264

3.5.2 धार्मिक ग्रन्थ एवं सन्तों द्वारा रचित साहित्य

धार्मिक ग्रन्थों में वेद, उपनिषद, स्मृति–ग्रन्थ, महाकाव्य, गीता, रामचरित मानस आदि एवं सन्तों द्वारा रचित साहित्य में कबीर, रविदास, गुरूनानक, स्वामी विद्यानन्द विदेह आदि के साहित्य या उनके जीवन–दर्शन पर लिखित अन्य लेखकों के साहित्य को रखा गया है। इनमें बीजक, कबीर भजनावली, कबीर दर्शन (अभिलाष दास), विवेकानन्द साहित्य (दसों खण्ड), गुरूग्रन्थ साहिब आदि का उल्लेख अभिजनों द्वारा किया गया है।

3.5.3 साहित्यिक उपन्यास

अभिजनों द्वारा उल्लिखित उपन्यासों को इस श्रेणी में शामिल किया गया है जिनमें मुख्यतः गोदान, गबन (प्रेमचन्द), कामायनी, काव्यग्रन्थ (जय शंकर प्रसाद), नाच्यो बहुत गोपाल (अमृत राय नागर), मैला आंचल (फणीश्वर नाथ रेणु) तथा गीताप्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित साहित्य शामिल है।

3.5.4 समाज सुधारकों का साहित्य

18वीं शताब्दी के अन्त एवं 19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में समाज में व्याप्त सामाजिक एवं धार्मिक बुराइयों को दूर करने हेतु जो प्रयास शुरू किये गये, कमोबेश आज भी जारी हैं। कुछ अभिजन महात्मा गाँधी, राजा राममोहन राय, दयानन्द सारस्वती ,द्वारा लिखित साहित्य एवं निर्मित संगठनों के क्रियाकलापों का प्रभाव अपने जीवन में बताते हैं।

3.5.5 अन्य साहित्य

इस वर्ग में कुछ विदेशी लेखकों यथा– अब्राहम लिंकन, मैकियावेली, कार्लमार्क्स एवं साम्यवादी साहित्य, डेल कार्नेगी, रूसो, मैकबेथ

एवं बर्टेंड रसेल की पुस्तकों, कुरान, बाइबिल जैसे धर्मग्रन्थों को रखा गया है। इसके अतिरिक्त बौद्ध साहित्य भी इस श्रेणी में शामिल है।

सर्वाधिक अभिजन दलित साहित्य, दलित सन्तों की रचनाओं, दलितों मे सम्बन्धित उपन्यासों एवं साम्यवादी साहित्य से प्रभावित है। ये तथ्य इस बात की पुष्टि करते हैं कि दलित जातियों में गाँधी या गाँधी साहित्य इसी श्रेणी के साहित्य के प्रति रूझान कम होकर उनका रूझान डा. अम्बेडकर एवं उनके साहित्य की ओर अधिक बढ़ रहा है।

गाँधी एवं गाँधी साहित्य के प्रति दलित अभिजनों के कम होते रूझान के लिए कुछ बातें उत्तरदायी ठहरायी जा सकती हैं।

गाँधी द्वारा लिखित मात्र 3 पुस्तकें हैं।[20] जबकि अम्बेडकर ने लगभग दो दर्जन मौलिक ग्रन्थों की रचना की है।

अम्बेडकर स्वयं अछूत जाति में पैदा हुए एवं अछूतों की समस्याओं को स्वयं देखा एवं भुगता, जबकि गाँधी जी ने अछूतों की समस्याओं को केवल महसूस किया। यही कारण है कि गाँधी जी का ध्यान अस्पृश्यता की ओर उस समय गया, जब अम्बेडकर के गोलमेज में पृथक से अछूतोस्तान की माँग की। दूसरी ओर अम्बेडकर आजीवन निःस्वार्थ भाव से दलितों के लिये संघर्षरत रहे।

दलितोद्धार का समान उद्देश्य होते हुए भी गाँधी जी एवं अम्बेडकर में सैद्धान्तिक मतभेद रहा है। इससे दलित अभिजन वर्ग अम्बेडकर साहित्य की ओर ज्यादा आकर्षित हुए हैं।

---

[20] बाली, एल.आर., अम्बेडकर बनाम गाँधी, अलीगढ़, आनन्द साहित्य सदन, 1994, पृ. 21

गाँधी हिन्दू वर्ण–व्यवस्था एवं जाति–व्यवस्था को कायम रखते हुए अस्पृश्यता के समाप्ति की दिशा में प्रयत्नशील रहे जबकि अम्बेडकर ने अस्पृश्यता निवारणार्थ इसकी जड़ों धर्म, जाति एवं हिन्दू साहित्य पर सीधी चोट की।

दलितों में गाँधी एवं गाँधी द्वारा साहित्य की घटती लोकप्रियता के लिये उनके द्वारा स्थापित संगठन, विशेषकर हरिजन सेवक संघ भी बहुत उत्तरदायी है, जिसने अपने मूल उद्देश्य अस्पृश्यता उन्मूलन एवं हरिजनों का शैक्षणिक, आर्थिक एवं सामाजिक विकास को भुला दिया है तथा इसके पदाधिकारी संघ को मिलने वाले अनुदान से स्वयं तथा अपने कुनबे का ही हित कर रहे हैं।[21]

दलितों में डा. अम्बेडकर की लोकप्रियता में 1990 के बाद अत्यधिक वृद्धि हुई है। राष्ट्रीय मोर्चा सरकार ने डा. अम्बेडकर को उनके निधन के साढ़े तीन दशक के लम्बे अन्तराल के बाद, 14 अप्रैल 1990 को देश के सर्वोच्च असैनिक अलंकरण 'भारत रत्न' से सम्मानित किया गया तथा 14 अप्रैल का सार्वजनिक अवकाश घोषित किया। 14 अप्रैल 1991 तक जन्म शताब्दी वर्ष को सामाजिक न्याय वर्ष के रूप में मनाने की घोषणा की जिसे बाद मे कांग्रेस सरकार ने 14 अप्रैल 1992 तक एक वर्ष के लिये और बढ़ा दिया। इन दो वर्षों की अवधि में केन्द्र सरकार, राज्य सरकारों एवं निजी संस्थाओं ने अनेक कार्यक्रम आयोजित किये, जिनमें शहरों एवं कस्बों में उनकी प्रतिमा लगाना, व्यापक स्तर पर साहित्य का प्रकाशन, संसद के केन्द्रीय कक्ष में उनके चित्र का अनावरण, डा. अम्बेडकर पुरस्कारों की घोषणा, उनकी जन्म स्थली महू (मध्य प्रदेश) में डा. अम्बेडकर समाज विज्ञान शोध संस्थान की स्थापना, मराठवाड़ा विश्वविद्यालय (महाराष्ट्र) का नामकरण डा. अम्बेडकर

---

21 'नवभारत टाइम्स, जयपुर', ''हरिजन संवक संघ हरिजनों का हितैषी नहीं'', 21 सितम्बर, 1987 : जनसत्ता, नई दिल्ली, ''विस्तृत होता हरिजन सेवक संघ'', 29 जनवरी 1995 (रविवारीय जनसत्ता)

विश्वविद्यालय करना, दूरदर्शन एवं आकाशवाणी के माध्यम से उनके जीवन एवं क्रियाकलापों से सम्बन्धित विभिन्न कार्यक्रम दिखाया जाना प्रमुख है।

24 प्रतिशत अभिजनों का किसी भी पुस्तक का या साहित्य के प्रभाव से इनकार करना उनके साहित्य के प्रति उदासीनता को उजागर करता है। सर्वेक्षण के समय कुछ अभिजनों से व्यक्तिगत सम्पर्क करने पर उनकी साहित्यिक उदासीनता स्पष्ट रूप से सामने आई। उन्होंने बताया कि समयाभाव, पाठ्यक्रम की व्यापकता एवं वर्तमान में कार्य की अधिकता के कारण उन्होंने अतिरिक्त पुस्तकों का अध्ययन ही नहीं किया है।

हमीरपुर जनपद में दलित अभिजनों के वर्तमान पद प्राप्ति में सहायक कारकों का विस्तारपूर्वक विवेचन किया गया है। दलित अभिजनों की दृष्टि में तीन कारक प्रमुखतः उनको अभिजन प्रस्थिति तक पहुँचाने में सहायक रहे हैं, जो इस प्रकार हैं –

1. शिक्षा
2. संवैधानिक प्रावधान
3. पारिवारिक ख्याति

सरकार एवं नीति निर्माताओं को चाहिए कि इन वर्गों के लिये शिक्षा, विशेषकर उच्च एवं तकनीकी शिक्षा और महिला शिक्षा के लिये विशेष प्रबन्ध किये जायें। शिक्षा के साथ–साथ संवैधानिक प्रावधानों एवं केन्द्र तथा राज्य सरकार द्वारा निर्मित नीतियों का उचित क्रियान्वयन भी किया जाये।

अभिजन पद प्राप्ति में उच्च कारकों के साथ–साथ साहित्य एवं महापुरूषों का प्रभाव भी व्यक्तिगत महात्वाकांक्षाओं की पूर्ति करता है। हमीरपुर जनपद में दलित अभिजन अपने जीवन में अनेक महापुरूषों का प्रभाव बताते हैं, लेकिन सर्वाधिक अभिजनों के जीवन में डा. अम्बेडकर का प्रभाव रहा है।

महापुरूषों की भाँति अभिजनों का एक बड़ा वर्ग अपने जीवन में दलित साहित्य का प्रभाव मानता है। दलित साहित्य, दलित सन्तों एवं दलितों से सम्बन्धित उपन्यासों का अपने जीवन पर प्रभाव प्राथमिकता क्रम में लगभग साठ प्रतिशत अभिजन स्वीकार करते हैं।

00000————00000

अध्याय - 4

दलित अभिजनों की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि

- अभिजनों का वर्गीकरण
- लैंगिक वितरण
- अभिजन तथा मूल निवास
- अभिजन तथा वैवाहिक स्थिति
- अभिजन तथा आयु
- अभिजन तथा धर्म
- शिक्षा तथा अभिजन
- दलित अभिजन एवं भाषा
- अभिजन तथा समाचार पत्र–पत्रिकाएँ
- अभिजन तथा मासिक आय
- अभिजन तथा भौतिक साधन
- अभिजन तथा भूमि
- अभिजन तथा आवास
- अभिजन तथा पारिवारिक संरचना
- अभिजन तथा जीवनसाथी
- अभिजन तथा बच्चों का शैक्षणिक स्तर

4. दलित अभिजनों की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि

पूर्व अध्याय में दलित अभिजनों के उद्भव एवं कारकों का उल्लेख किया गया है। प्रस्तुत अध्याय में दलित अभिजनों की सामाजिक—आर्थिक पृष्ठभूमि, भौतिक सम्पत्ति, मासिक आमदनी, पारिवारिक संरचना, वैवाहिक स्थिति, जीवन साथियों एवं बच्चों का शैक्षणिक स्तर आदि का विश्लेषण प्रस्तुत किया जा रहा है।

तालिका 4.1 में हमीरपुर जनपद के दलित अभिजनों का श्रेणीवार वर्गीकरण दर्शाया गया है।

तालिका 4.1

अभिजनों का वर्गीकरण

क्रमांक	अभिजन श्रेणी	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	शैक्षणिक	53	35.33
2.	व्यवसायिक	52	34.67
3.	नौकरशाह	33	22.00
4.	राजनैतिक	12	08.00
	योग	**150**	**100.00**

तालिका 4.1 से स्पष्ट है कि प्रस्तुत अध्ययन कुल 150 सूचनादाताओं (अभिजनों) द्वारा प्रदत्त सूचनाओं पर आधारित है। अध्ययन में 35.33 प्रतिशत शैक्षणिक, 34.57 प्रतिशत व्यवसायिक, 22 प्रतिशत नौकरशाह एवं 8 प्रतिशत राजनैतिक अभिजन सम्मिलित हैं।

4.2 लैंगिक वितरण

व्यक्ति के दृष्टिकोण एवं मूल्य उन्मुख्ताओं को विकसित करने में लिंग भेद महत्वपूर्ण स्थान रखता है। विशेषकर भारतीय समाज में जहाँ पारिवारिक एवं सामाजिक मान्यता के रूप में दूसरे दर्जे की नागरिकता या कम से कम पुरूष की तुलना में निम्न माने जाने की अभिशप्त प्रथा स्त्री वर्ग से जुड़ी हुई है। यद्यपि आजाद भारत में संविधान द्वारा स्त्रियों को भी पुरूषों के समान वैधानिक अधिकार प्रदान किये गये हैं, परन्तु वास्तविकता में समानाधिकार की बात करना पूर्णतः सत्य नहीं है। सदियों से हिन्दू समाज में अछूतों के साथ स्त्रियों को भी शिक्षा एवं उच्च पदों से वंचित रखा गया है।[1] संवैधानिक व्यस्थाओं, उदारवादी मूल्यों के प्रचार–प्रसार, ब्राह्मणवादी मूल्यों के पतन तथा अन्य आधुनिक कारकों के प्रभाव से अब स्त्री वर्ग में जागृति एवं प्रबुद्धता आ रही है, किन्तु दलितों में अभी भी महिला शिक्षा का प्रतिशत अत्यधिक निम्न है।

तालिका 4.2.1
अभिजन तथा लैंगिक वितरण

क्रमांक	अभिजन श्रेणी	पुरूष	महिला	योग
1.	शैक्षणिक	48 (90.60)	05 (9.40)	53 (100.00)
2.	व्यावसायिक	51 (98.05)	01 (1.95)	52 (100.00)
3.	नौकरशाह	33 (100.00)	–	33 (100.00)
4.	राजनैतिक	12 (100.00)	–	– (100.00)
	योग	**144 (96.00)**	**06 (4.00)**	**150 (100.00)**

[1] अम्बेडकर, बी.आर., हिन्दुत्व का दर्शन, मोहनदास नैमिसराय (अनुवादक), अलीगढ़, आनन्द साहित्य सदन, 1991, पृ. 67

हमीरपुर जनपद में दलित अभिजनों के लैंगिक वितरण का विश्लेषण करने से पूर्व दलित की सामान्य जनसंख्या में लिंगानुपात देखना आवश्यक है। हमीरपुर जनपद में दलितों में पुरूष–स्त्री अनुपात लगभग 1:1 है जबकि तालिका 4.2.1 में प्रदर्शित दलित अभिजनों के लैंगिक वितरण के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि यह अनुपात 96:4 है। अध्ययन में सम्मिलित कुल 150 अभिजनों में से 96 प्रतिशत पुरूष एवं मात्र 4 प्रतिशत महिलाएँ हैं। पृथक श्रेणीवार विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि नौकरशाह एवं राजनैतिक अभिजनों में महिलाएँ शून्य प्रतिशत, व्यावसायिक अभिजनों में 1.95 प्रतिशत तथा शैक्षणिक अभिजनों में 9.40 प्रतिशत हैं।

अध्ययन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि हमीरपुर जनपद में दलित अभिजनों में स्त्रियों का प्रतिनिधित्व बहुत न्यून है, जो आजादी के 52 वर्षों के बाद भी स्त्री शिक्षा में व्याप्त कमी एवं असमानता को दर्शाता है। आन्ध्र प्रदेश, बिहार एवं उत्तर प्रदेश आदि राज्यों में दलित अभिजनों से सम्बन्धित अध्ययनों में भी पुरूष अभिजनों की तुलना में स्त्रियों का प्रतिशत बहुत कम रहा है। पूरे देश में ही दलित के उच्चाधिकारियों में महिलाओं का प्रतिशत बहुत कम है। यही नहीं दलितों के पुरूषों का भी जनसंख्या के अनुपात में उच्च संस्थाओं में प्रतिनिधित्व बहुत कम है।[2] दलित अभिजनों में स्त्रियों के कम प्रतिशत के लिये सदियों से व्याप्त अस्पृश्यता, बुन्देलखण्ड में जमींदारी एवं साहूकारी प्रथा, समानता का अभाव, बाल–विवाह, शैक्षणिक दृष्टि से प्रदेश का पिछड़ापन, दलितों का आर्थिक पिछड़ापन आदि प्रमुखतः गिनाये जा सकते हैं।

4.3 अभिजन तथा मूल निवास

सामाजिक जीवन में मूल निवास का बहुत प्रभाव पड़ता है क्योंकि आज भी ग्रामीण एवं नगरीय संस्कृति की भिन्नता स्पष्टतः दिखाई देती

[2] प्रेम प्रकाश, अम्बेडकर, पालिटिक्स एण्ड शिड्यूल्ड कास्टस, नई दिल्ली, आशीष पब्लिशिंग हाउस, 1993, पृ. 79

है। अभिजनों का मूल निवास स्थान (ग्रामीण या शहरी) उसके विचारों, मूल्यों एवं महत्वाकांक्षाओं की भिन्नता के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। यद्यपि औद्योगिकीकरण, शहरीकरण एवं परिवर्तन की बदलती प्रवृत्तियों से, सम्प्रेषण एवं संचार साधनों के विकास से ग्रामीण क्षेत्रों पर नगरीय संस्कृति का, खासकर जीवन शैली के सन्दर्भ में काफी प्रभाव पड़ा है। फिर भी निवास स्थान की पृष्ठभूमि से व्यक्ति के संस्कारों, मान्यताओं एवं विचारों का निर्धारण होता है।

तालिका संख्या 4.3.1

अभिजन तथा मूल निवास

क्रमांक	अभिजन श्रेणी	ग्रामीण	शहरी	योग
1.	शैक्षणिक	33 (62.26)	20 (37.74)	53 (100.00)
2.	व्यावसायिक	20 (38.47)	32 (61.53)	52 (100.00)
3.	नौकरशाह	19 (57.58)	14 (42.42)	33 (100.00)
4.	राजनैतिक	6 (50.00)	6 50.00	12 (100.00)
	योग	**78 (52.00)**	**72 (48.00)**	**150 (100.00)**

तालिका के अनुसार यह उपकल्पना सिद्ध होती है कि ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा शहरी क्षेत्रों में अभिजन अधिक मात्रा में आते हैं। यहाँ 81 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या में से केवल 52 प्रतिशत अभिजन आ पाये हैं, जबकि मात्र 19 प्रतिशत शहरी आबादी से 48 प्रतिशत अभिजन आये हैं। इन तथ्यों की पुष्टि राय तथा सिंह[3] द्वारा उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले में किये गये अध्ययन से होती है, जिसमें जिले की 9.2 प्रतिशत शहरी जनसंख्या में से

[3] राय, रामाश्रय तथा सिंह, वी.बी., ए स्टडी ऑफ हरिजन इलिट, देहली, डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, 1987, पृ. 30

अध्ययन में शामिल 50.9 प्रतिशत शहरी तथा 91.8 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या में से मात्र 49.1 प्रतिशत अभिजन ग्रामीण थे।

4.4 अभिजन तथा वैवाहिक स्थिति

तालिका संख्या 4.4.1 में दलित अभिजनों की वैवाहिक स्थिति का उल्लेख किया गया है।

तालिका संख्या 4.4.1

अभिजन तथा वैवाहिक स्थिति

क्रमांक	अभिजन श्रेणी	विवाहित	अविवाहित	योग
1.	शैक्षणिक	52 (98.12)	01 (1.88)	53 (100.00)
2.	व्यावसायिक	51 (98.05)	01 (1.95)	52 (100.00)
3.	नौकरशाह	33 (100.00)	—	33 (100.00)
4.	राजनैतिक	11 (91.67)	01 (8.33)	12 (100.00)
	योग	**147 (98.00)**	**03 (2.00)**	**150 (100.00)**

तालिका में प्रदर्शित आँकड़ों से स्पष्ट होता है कि हमीरपुर में दलित वर्ग के 98 प्रतिशत अभिजन विवाहित हैं मात्र 2.00 प्रतिशत अविवाहित हैं जबकि नौकरशाह अभिजन शत प्रतिशत विवाहित हैं। शैक्षणिक, व्यावसायिक एवं राजनैतिक अभिजनों में क्रमशः 98.12, 98.05, एवं 91.67 प्रतिशत विवाहित एवं 1.88, 1.95, एवं 8.33 प्रतिशत अभिजन अविवाहित हैं।

4.5 अभिजन तथा आयु संरचना

मानव समाज में आयु जैवकीय एवं सामाजिक दोनों दृष्टि से एक महत्वपूर्ण विशेषता है। जैवकीय स्तर पर आयु व्यक्ति के शारीरिक एवं मानसिक विकास का एक मापदण्ड माना गया है तथा सामाजिक सन्दर्भ में यह व्यक्ति के सामाजिक पद, स्थिति और भूमिका की सीमाओं के निर्धारण में एक विशिष्ट कारक है। लगभग सभी समाजों में आयु श्रम विभाजन तथा पद प्राप्ति का एक महत्वपूर्ण आधार है, इसलिए व्यक्ति के प्रदत्त पद के निर्धारण में यह विशेष महत्व रखती है। अभिजनों के मूल्य निर्धारण में भी आयु का विशेष महत्व है क्योंकि उसकी मानसिक प्रौढ़ता, परिपक्वता एवं सामाजिक परिवर्तन से सम्बन्धित है। सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं तथा औद्योगिक प्रतिष्ठानों की सेवाओं में पदोन्नति में एक महत्वपूर्ण आधार आयु (वरिष्ठता) प्रमुख भूमिका अदा करती है। जिससे व्यक्ति उत्तरोत्तर उच्च पदों पर आसीन होता है। अभिजन तथा नेतृत्व के अनेक अध्ययनों में यह पाया गया है कि एक निश्चित आयु–समूह के व्यक्ति नेतृत्व तथा अभिजन स्तर तक आने में अपेक्षाकृत अधिक सफल होते हैं।

तालिका संख्या 4.5.1

अभिजन तथा आयु संरचना

क्रमांक	आयु समूह	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	30 वर्ष तक	14	9.33
2.	31–40	71	47.33
3.	41–50	50	33.34
4.	51 से अधिक	15	10.00
	योग	**150**	**100.00**

प्रदर्शित आँकड़ो से स्पष्ट होता है कि हमीरपुर में दलितों के सर्वाधिक 47.33 प्रतिशत अभिजन 31 से 40 वर्ष के मध्य की आयु के हैं। 30 वर्ष तक की आयु के अभिजन 9.33 प्रतिशत, 41 से 50 वर्ष की आयु समूह के 33.34 प्रतिशत अभिजन तथा मात्र 10 प्रतिशत अभिजन 51 वर्ष या इससे अधिक आयु के हैं। यदि 31 से 50 वर्ष की आयु समूह की गणना करें तो लगभग 80.67 प्रतिशत दलित अभिजन इस आयु समूह में आते हैं। इन तथ्यों की पुष्टि बिहार, आन्ध्र प्रदेश एवं उत्तर प्रदेश आदि राज्यों के दलित अभिजनों पर किये गयो अध्ययनों से भी होती है।

4.6 अभिजन तथा धर्म

धार्मिक दृष्टि से भारत एक बहुधर्मी राष्ट्र है, इसी कारण संविधान निर्माताओं ने भारत को एक पंथ–निरपेक्ष[4] राष्ट्र घोषित करके सार्वजनिक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य तथा इस भाग के अन्य उपबन्धों के अधीन रहते हुए सभी व्यक्तियों को अन्तःकरण की स्वतन्त्रता तथा कोई भी धर्म अंगीकार करने, उसका अनुसरण एवं प्रचार–प्रसार करने का अधिकार प्रदान किया है। हमीरपुर जनपद में अनेक धर्मों के अनुयायी निवास करते हैं, लेकिन दलित वर्ग की बहुसंख्यक जनसंख्या हिन्दू धर्म की ही अनुयायी है। बहुत कम प्रतिशत बौद्ध या सिख धर्म के अनुयायियों का है।

---

[4] 1976 में 42 वें सविधान संशोधन द्वारा भारतीय संविधान की प्रस्तावना में 'पंथ निरपेक्ष' शब्द जोड़ा गया है, लेकिन संविधान में पदत्त मूल अधिकारों में अनुच्छेद 25 सं 28 तक धार्मिक स्वतन्त्रता का अधिकार स्वतः भारत को पंथ निरपेक्ष राष्ट्र सिद्ध करता है।

तालिका संख्या 4.6.1

अभिजन तथा धर्म

क्रमांक	धर्म	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	हिन्दू	138	92.00
2.	बौद्ध	03	02.00
3.	उल्लेख नहीं	03	02.00
4.	अन्य	06	04.00
	योग	**150**	**100.00**

तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि हमीरपुर में दलित वर्ग के सर्वाधिक 92 प्रतिशत अभिजन हिन्दू धर्म के अनुयायी हैं तथा 2 प्रतिशत बौद्ध 12 प्रतिशत अभिजनों ने अपने धर्म का उल्लेख नहीं किया है। उनका कहना है कि हिन्दू धर्म में उनका कोई विश्वास नही है, लेकिन फिलहाल अन्य धर्म ग्रहण भी नहीं किया है। इस प्रकार कुल 8 प्रतिशत अभिजन हिन्दू धर्म को न मानकर अन्य धर्मों में विश्वास करते हैं। इससे हमीरपुर में दलितों में धर्म परिवर्तन की प्रक्रिया के संकेत मिलते हैं। हमीरपुर के दलितों में डा. अम्बेडकर तथा उनके बौद्ध धर्म का रूझान बढ़ा है।

4.7 शिक्षा तथा अभिजन

शिक्षा लोगों को संस्कारित करने का एक आधारभूत तत्व है और यह समाज के कमजोर वर्गों में सामाजिक परिवर्तन तथा उच्च जीवन स्तर का मार्ग प्रशस्त करती है। शिक्षा का बहुमुखी और गहरा प्रभाव व्यक्ति के व्यक्तित्व पर पड़ता है। इससे व्यक्ति में एक तरफ नवीन उन्मेंषों के प्रति जागरूकता पैदा होती है, तों वहीं दूसरी ओर वैचारिक दृढ़ता, प्रखर चिन्तन, महत्वाकांक्षा, परिपक्वता, बुद्धिमत्ता इत्यादि गुणों का समावेश होता है।

दलितों की सामाजिक अयोग्यता, सामाजिक एवं आर्थिक शोषण, सामाजिक पराधीनता आदि का प्रमुख कारण अशिक्षा है। इसी वजह से दलितों के मसीहा डा. भीमराव अम्बेडकर ने अपनी तीन सूत्रीय योजना में शिक्षा को प्रथम स्थान दिया था। इन जातियों के अशिक्षित रहने का मूल कारण सवर्ण हिन्दुओं द्वारा उन पर आरोपित सामाजिक एवं धार्मिक निर्योग्यताएँ थीं। स्मृति तथा धर्मग्रन्थों के अनुसार शूद्रों द्वारा धार्मिक ग्रन्थों का पठन या श्रवण एक अपराध था जिसके लिए कठोर दण्ड का प्रावधान था। कुछ समय पूर्व तक सवर्ण हिन्दुओं के बच्चों के साथ दलितों के बच्चों को पढ़ने नहीं दिया जाता था क्योंकि सवर्ण दलित–शिक्षा के कट्टर विरोधी थे।[5]

शिक्षा अनुभव की सम्पूर्णता है जो किशोर और वयस्क दोनों ही अभिवृत्तियों को प्रभावित करती है तथा उनके व्यवहारों को निर्धारित करती है। संविधान में यह प्रावधान किया गया है कि "किसी भी राजकीय सहायता प्राप्त शिक्षण संस्थान में प्रवेश के सम्बन्ध में मूलवंश, जाति, धर्म, भाषा या इनमें से किसी एक के आधार पर भेदभाव नहीं किया जायेगा।"[6] इसके साथ ही दलितों को लोक सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व हेतु आरक्षण[7] का प्रावधान, विशेष अधिकारी[8] एवं विशेष आयोग[9] की स्थापना, शिक्षा एवं आर्थिक हितों पर विशेष ध्यान देने[10] की व्यवस्था तथा लोकसभा[11] एवं राज्य विधानसभाओं[12] में, इनकी जनसंख्या के अनुपात में स्थान आरक्षित करने जैसे प्रावधानों के कारण दलित जाति के व्यक्ति भी अभिजन स्थिति तक आने में सफल हो रहे हैं। हमीरपुर की साक्षरता दर 2001 के अनुसार 41.7 है।

---

[5] कीर, धनन्जय, महात्मा ज्यातिराव फूले – फादर ऑफ इंडियन सोशियल रिवॉल्यूशन, बॉम्बे पॉपुलर प्रकाशन, द्वितीय संस्करण, 1974, पे. 55–56

[6] भारत का संविधान, अनुच्छेद 29 (2)

[7] इबिद., अनु. 16 (4)

[8] इबिद., अनुच्छेद 338

[9] इबिद, अनुच्छेद 340

[10] इबिद, अनुच्छेद 46

[11] इबिद, अनुच्छेद 330

[12] इबिद, अनुच्छेद 332

तालिका संख्या 4.7.1

अभिजनों में शैक्षणिक स्तर

क्रमांक	शैक्षणिक स्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	पाँचवीं	01	0.67
2.	उच्च माध्यमिक	02	1.33
3.	स्नातक	08	5.33
4.	स्नातकोत्तर/एम.फिल. एम. ए. (38) एम. काम. (15) एम. एस. सी. (5) एम. फिल. (11)	69	46.00
5.	पी. एच. डी.	09	6.00
6.	व्यावसायिक एल.एल. बी. (18) एम. बी. बी. एस. (30) बी. ई/डिप्लोमा (13)	61	40.67
	योग	**150**	**100.00**

तालिका के अवलोकन से ज्ञात होता है कि हमीरपुर जनपद में दलितों के 40.67 प्रतिशत अभिजन व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त हैं जिनमें से 12 विधि स्नातक, 20 प्रतिशत एम.बी.बी.एस. तथा शेष 8.67 प्रतिशत बी.ई. /डिप्लोमाधारी हैं। राजनीति में निर्धारित शैक्षणिक योग्यता नहीं होने के कारण मात्र राजनीति अभिजन प्राइमरी स्तर तक की शिक्षा प्राप्त हैं। 1.33 प्रतिशत अभिजन उच्च माध्यमिक तथा 5.33 प्रतिशत अभिजन एम. फिल., 6 प्रतिशत पी.एच.डी. डिग्रीधारक है, 25.33 प्रतिशत एम.ए., प्रतिशत एम.काम. एवं 3.33 प्रतिशत अभिजन एम.एस.सी. हैं। अतः उक्त तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि लगभग 92.67 प्रतिशत दलित अभिजन स्नातकोत्तर अथवा व्यावसायिक शिक्षा स्तर तक की शिक्षा प्राप्त हैं।

इन आँकड़ो की तुलना अन्य अध्ययनों से करने पर ज्ञात होता है कि हमीरपुर में दलित अभिजनों का शैक्षणिक स्तर उच्च है। सिंह[13] ने उत्तर प्रदेश, बिहार एवं मध्य प्रदेश के दलित अभिजनों के अध्ययन में पाया कि अधिकांश विधायक लगभग 45.29 प्रतिशत स्नातक थे। बिहार में सच्चिदानन्द के अध्ययन में 71 प्रतिशत दलित अभिजन स्नातक स्तर की शिक्षा प्राप्त थे।

4.8 दलित अभिजन तथा भाषा

भाषायी दक्षता एक व्यक्ति को 'अभिजन' प्रस्थिति अर्जित करने में प्रमुख कारक होती है। यदि किसी समुदाय या वर्ग का अभिजन भी केवल उस समुदाय की स्थानीय भाषा, जो सामान्यतः बोली जाती है, काम में लेते हैं, तो इससे अन्य भाषा–भाषी समुदाय के साथ संवादहीनता की समस्या उत्पन्न हो जाती है। भारत एक बहुभाषी राष्ट्र है। अभिजनों का सम्पर्क चूँकि उच्च स्तर के प्रशासनिक अधिकारियों तथा अन्य राज्यों से भी होता है, इस कारण अपनी स्थानीय भाषा के साथ–साथ अन्य विशेषकर अंग्रेजी भाषा की जानकारी बहुत आवश्यक है।

भाषा विचार एवं अभिव्यिक्ति का एक अनोखा संगम है। हमीरपुर में दलित अभिजनों की भाषायी दक्षता की जानकारी करना आवश्यक है। धर्मग्रन्थों द्वारा शूद्रों को संस्कृत भाषा सीखने का अधिकार नहीं दिये जाने के कारण आजादी के पूर्व तक दलित संस्कृत भाषा का अध्ययन नहीं कर सकते थे। एक ब्राह्मण ने डा. अम्बेडकर तथा उनके भाई आनन्द राव को संस्कृत पढ़ाने से साफ इन्कार कर दिया,[14] परिणास्वरूप दूसरी भाषा के रूप में उनको एक विदेशी भाषा 'फारसी' का अध्ययन करना पड़ा। डा. अम्बेडकर ने कहा था "मुझे संस्कृत भाषा पर अत्यधिक अभिमान है और मैं चाहता था

---

[13] सिंह, आर.पी., अनुसूचित जाति के विधानमण्डलीय अभिजन, दिल्ली, मित्तल पब्लिकेशन्स, 1989, पृ. 63

[14] कुबेर, डब्लू एन., 1990, इबिद, पे.11 : जाटव, डी.आर., डा. अम्बेडकर व्यक्तित्व एवं कृतित्व, जयपुर, समता साहित्य सदन, 1991, पृ. 16

कि संस्कृत का अच्छा विद्वान बनूँ, पर ब्राह्मण शिक्षक के संकुचित दृष्टिकोण के कारण मुझे संस्कृत भाषा से वंचित रहना पड़ा।'' महाराष्ट्र के इस शिक्षक के सम्बन्ध में डा. अम्बेडकर का कथन सम्पूर्ण देश की स्थिति को स्पष्ट करता है, जहाँ अछूतों को संस्कृत पढ़ने का अधिकार नहीं था।

तालिका 4.8.1

अभिजनों द्वारा बोली जाने वाली भाषाएँ

क्रमांक	भाषा	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	हिन्दी	21	14.00
2.	हिन्दी, अंग्रेजी	73	48.67
3.	हिन्दी, अंग्रेजी, बुन्देलखण्डी	18	12.00
4.	हिन्दी, अंग्रेजी, खड़ी	10	6.67
5.	हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत	08	5.33
6.	हिन्दी, अंग्रेजी, पंजाबी	04	2.67
7.	हिन्दी, मैथिली	11	7.33
8.	हिन्दी, मेवाड़ी	03	2.00
9.	हिन्दी, पूर्वी	02	1.33
	योग	**150**	**100.00**

हिन्दी भाषी प्रदेश होने के कारण हमीरपुर में दलित शत–प्रतिशत अभिजन बोलने में हिन्दी भाषा का प्रयोग करते हैं। तालिका संख्या 4.8.1 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है। अधिकांश अभिजन बोलने में दो या तीन भाषाओं का प्रयोग करते हैं जिनमें हिन्दी, अंग्रेजी एवं एक स्थानीय भाषा होती है।

सर्वाधिक 48.67 प्रतिशत अभिजन हिन्दी तथा अंग्रेजी बोलते हैं जबकि 14 प्रतिशत मात्र हिन्दी/हिन्दी एवं अंग्रेजी के साथ–साथ बुन्देलखण्डी, खड़ी, संस्कृत भाषा क्रमशः 12, 6.67, 5.33 एवं 2.67 प्रतिशत अभिजन बोलते हैं। हिन्दी तथा मैथिली 7.33 प्रतिशत, हिन्दी एवं मेवाड़ी 2 प्रतिशत तथा हिन्दी एवंपूर्वी 1.33 प्रतिशत अभिजन बोलते हैं।

4.9 अभिजन तथा समाचार पत्र–पत्रिकाएँ

शासन का कोई भी स्वरूप चाहे वह लोकतान्त्रिक 'जनमत' किसी न किसी रूप में अपनी भूमिका अदा करता है तथा अन्तर्राष्ट्रीय शांति, सुरक्षा एवं अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों का समुचित पालन स्वस्थ एवं समुचित जनमत पर ही निर्भर करता है। जनमत की अभिव्यक्ति के महत्वपूर्ण साधनों में रेडियो, सिनेमा, दूरदर्शन, राजनीतिक दल, सार्वजनिक सभाएँ, चुनाव, व्यवस्थापिका, निष्पक्ष प्रेस एवं समाचार पत्र–पत्रिकाएँ स्वस्थ जनमत के सजग प्रहरी तथा प्रजातन्त्र के धर्मग्रन्थ हैं जो प्रेस की स्वतन्त्रता को अभिव्यक्त करते हैं। आज के वैज्ञानिक युग में ज्ञान एवं जानकारी के अनेक आधुनिकतम साधन (रडियो, दूरदर्शन, टेलीफोन एवं कम्प्यूटर) आ चुके हैं, फिर भी इस युग में भी संवाद प्रेषण के अन्य माध्यमों की तुलना में समाचार–पत्र अधिक सस्ता एवं सुलभ साधन है जिसके माध्यम से राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों पर सामाजिक–सांस्कृतिक एवं राजनैतिक सन्दर्भों में हो रहे परिवर्तनों, घटनाक्रमों एवं वैचारिक आयामों का ज्ञान अच्छी तरह होता है।

पारम्परिक व स्थानीय बातों में उलझे रहने की रूढ़िवादी प्रवृत्ति का समाचार–पत्र एवं पत्रिकाओं के माध्यम से निराकरण होता है, जो व्यक्ति के चिन्तन को व्यापक आयाम देने के साथ ही उसकी जानकारी में वृद्धि करते हैं। पत्रिकाओं की खोजपूर्ण रपट, व्यावसायिक जगत से परिचय, नवीनतम ज्ञान–विज्ञान एवं मर्मस्पर्शी विषय–सामग्री व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास के साथ–साथ उसके दृष्टिकोण को भी व्यापक आयाम एवं रचनात्मक बनाती है।

तालिका संख्या 4.9.1

अभिजनों का समाचार–पत्र पढ़ने का विवरण

क्रमांक	समाचार पत्र की भाषा	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	हिन्दी एवं अंग्रेजी	122	81.33
2.	मात्र हिन्दी	28	18.67
3.	मात्र अंग्रेजी	–	–
	योग	**150**	**100.00**

तालिका संख्या 4.9.1 से स्पष्ट होता है कि हमीरपुर जनपद में दलित वर्ग के अभिजन नियमित रूप से समाचार–पत्र पढ़ते हैं और सर्वाधिक 81.33 प्रतिशत अभिजन हिन्दी एवं अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित स्थानीय, प्रादेशिक एवं राष्ट्रीय समाचार–पत्रों का अध्ययन करते हैं, जबकि 18.67 प्रतिशत अभिजन मात्र हिन्दी भाषी समाचार–पत्र ही पढ़ते हैं। केवल अंग्रेजी भाषा के समाचार–पत्र पढ़ने वाले अभिजनों का प्रतिशत शून्य है। अभिजनों द्वारा पढ़े जाने वाले हिन्दी समाचार–पत्रों में अमर उजाला, दैनिक जागरण, दैनिक आज, हिन्दुस्तान, राष्ट्रीय सहारा, जनसत्ता आदि हिन्दी तथा अंग्रेजी समाचार–पत्रों में टाइम्स ऑफ इण्डिया, हिन्दुस्तान टाइम्स, एवं इंडियन एक्सप्रेस (नई दिल्ली) प्रमुख हैं। दलितों के कुछ अभिजन समय एवं उपलब्धता के आधार पर कुछ क्षेत्रीय समाचार–पत्रों को भी पढ़ते हैं।

तालिका संख्या 4.9.2

अभिजनों द्वारा पढ़ी जाने वाली पत्रिकाओं एवं समाचार–पत्रों की संख्या

क्रमांक	पत्र–पत्रिकाओं कीसंख्या	हिन्दी समाचार–पत्र	अंग्रेजी समाचार–पत्र	पत्रिकाएँ हिन्दी–अंग्रेजी
1.	एक	20 (13.33)	86 (57.33)	36 (24.00)
2.	दो	50 (33.33)	23 (15.33)	48 (32.00)
3.	तीन	33 (22.00)	10 (6.67)	35 (23.33)
4.	चर या अधिक	47 (31.34)	03 (2.00)	24 (16.00)
5.	शून्य	– (–)	28 (18.67)	07 (4.67)
	योग	**150 (100.00)**	**150 (100.00)**	**150 (100.00)**

तालिका संख्या 4.9.2 में हमीरपुर जनपद में दलित अभिजनों का उनके द्वारा पढ़ी जाने वाली पत्रिकाओं एवं समाचार–पत्रों की संख्या के आधार पर वर्गीकरण किया है। शत–प्रतिशत अभिजन हिन्दी समाचार–पत्र पढ़ते हैं, जबकि 18.67 प्रतिशत अभिजन अंग्रेजी का एक भी अखबार नहीं पढ़ते हैं। हिन्दी भाषा के एक, दो एवं तीन समाचार–पत्र पढ़ने वाले अभिजन क्रमशः 13.33, 33.33 एवं 22 प्रतिशत हैं, जबकि 31.34 प्रतिशत अभिजन चार या अधिक समाचार–पत्र पढ़ते हैं। इसी प्रकार अंग्रेजी भाषा के एक, दो एवं तीन समाचार–पत्र पढ़ने वाले दलित वर्ग के अभिजनों का प्रतिशत क्रमशः 57. 33, 15.33 एवं 6.67 है जबकि मात्र 2 प्रतिशत अभिजन ही चार या इससे अधिक अंग्रेजी अखबार पढ़ पाते हैं। पत्रिकाओं के पढ़े जाने की आवृत्ति के आधार पर हम कह सकते हैं कि सर्वाधिक 32 प्रतिशत अभिजन दो प्रकार की पत्रिकाएँ पढ़ते हैं। 24 प्रतिशत अभिजन एक प्रकार की, 23.33 प्रतिशत

अभिजन तीन प्रकार की तथा 16 प्रतिशत अभिजन चार या पाँच प्रकार की पत्रिकाएँ पढ़ते हैं। 4.67 प्रतिशत अभिजन किसी प्रकार की पत्रिका नहीं पढ़ते हैं। पत्रिकाओं की संख्या उनके प्रकार के आधार पर है। जैसे– साहित्यिक, धार्मिक, राजनैतिक, व्यावसायिक एवं सिनेमा व खेलकूद सम्बन्धी पत्रिकाओं को एक–एक माना जाता है। अर्थात चाहे एक अभिजन कितनी ही राजनैतिक पत्रिकाएँ पढ़े, उसे प्रकार के आधार पर एक माना जाता है। अभिजनों द्वारा प्रदत्त सूचनाओं से स्पष्ट होता है कि अधिकांश अभिजन राजनैतिक एवं व्यावसायिक पत्रिकाएँ पढ़ते हैं जबकि सिनेमा तथा खेलकूद सम्बन्धी पत्रिकाएँ बहुत कम अभिजनों द्वारा पसन्द की जाती हैं। साथ ही लगभग 81 प्रतिशत अभिजन हिन्दी भाषा की पत्रिकाओं को ज्यादा महत्व देते हैं, लेकिन चिकित्सा, अभियांत्रिकी एवं शिक्षा जगत की व्यावसायिक शोध पत्रिकाएँ अधिकतर अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित होने के कारण कुछ अभिजन इनको भी पढ़ते हैं।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि हमीरपुर जनपद में दलित वर्ग के अधिकांश अभिजन हिन्दी एवं अंग्रेजी दोनों भाषाओं के समाचार–पत्र दैनिक रूप से पढ़ते हैं मात्र 18.67 प्रतिशत अभिजन केवल हिन्दी समाचार–पत्र ही पढ़ते हैं।

4.10 अभिजन तथा मासिक आय

शिक्षा, पारिवारिक स्थिति एवं बुद्धि के साथ–साथ सम्पत्ति भी एक व्यक्ति विशेष को अभिजन या नेतृत्व में सफलता का प्रमुख कारक है। आमदनी सम्मान का प्रतीक है तथा कार्य के लिए प्रेरणा स्त्रोत है। इससे जीवन शैली के साथ ही साथ सामाजिक मूल्यों को दिशा मिलती है, महत्वाकांक्षायें प्रभावित होती हैं एवं जीवन–स्तर में सुधार होता है।

आजादी के पूर्व तक दलित जातियों की आमदनी अत्यल्प थी क्योंकि उनको स्वच्छ एवं सम्मानजनक व्यवसाय का अधिकार नहीं था।[15] उनका मुख्य कार्य उच्च वर्गों की सेवा करना तथा उनके द्वारा प्रदत्त जूठन एवं फटे–पुराने कपड़ों के सहारे जीवनयापन करना था।[16] कुछ हद तक ब्रिटिश शासन में तथा आजादी के बाद जाति बन्धन एवं जातिगत व्यवसाय का नियंत्रण ढ़ीला हुआ है। व्यावसायिक संरचना परिवर्तित होने तथा शहरीकरण, औद्योओीकरण एवं नौकरशाही नियंत्रित शासन से जातिगत व्यवसाय तथा जजमानी प्रथा का कोई महत्व नहीं रहा है। दलितों में शिक्षा की वृद्धि, संचार के नवीन साधनों का विकास तथा शहरी प्रभाव से हिन्दू समाज की परम्परागत संरचना को नष्ट कर दिया है।[17]

तालिका संख्या 4.10.1

अभिजन तथा मासिक आय

क्रमांक	आय–समूह	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	3000 तक	08	5.33
2.	3001—4000	10	6.67
3.	4001—5000	28	18.67
4.	5001—6000	35	23.33
5.	6001—7000	23	15.33
6.	7001—8000	13	8.67
7.	8001—9000	08	5.33
8.	9001—10000	04	2.67
9.	10000 से अधिक	21	14.00
	योग	**150**	**100.00**

अभिजनों की विशेषकर दलित अभिजनों की मासिक आय का पता लगाना अत्यन्त दुष्कर कार्य है, क्योंकि आय का ब्यौरा देते समय उसके मन में अनेक शंकाएँ रहती हैं। तालिका के अवलोकन के पश्चात स्पष्ट होता

[15] श्रीवास्तव, एस.एन., हरिजन्स इन इंडियन सोसायटी, लखनऊ, द अपर इंडिया पब्लिशिंग हाउस प्रा. लि., 1980 पृ. 176
[16] क्षीरसागर, आर.के., अनअचेबिल्टी इन इंडिया, न्यू देहली, दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन्स, 1986 पृ. 31–34
[17] सिंह, योगेन्द्र, कास्ट एण्ड क्लास– सम आस्पैक्ट ऑफ कन्टीनिटी एण्ड चेंज, सोशियोलॉजिकल बुलेटिन, वॉ. 7, नं. 1, 1968, पे. 1968 पृ. 178–79

है कि सर्वाधिक 23.33 प्रतिशत अभिजन 5001 से 6000 रूपये तथा सबसे कम 2.67 प्रतिशत अभिजन 9001–10000 रूपये के मध्य की मासिक आय समूह में हैं। 5.33 प्रतिशत अभिजन 3000 रूपये तक की मासिक आय प्राप्त करते हैं। 3001 से 4000 रूपये तक 15.33 प्रतिशत एवं 7001 से 8000 रूपये तक की मासिक आय 8.67 प्रतिशत प्राप्त करते हैं। 8001 से 9000 रूपये मासिक आय समूह में 5.33 प्रतिशत तथा 14 प्रतिशत अभिजनों को 10 हजार रूपये से अधिक की मासिक आय प्राप्त होती है। यदि 4001 से 7000 रूपये के आय समूह की गणना करें तो लगभग 57.33 प्रतिशत अभिजन इस आय वर्ग में आते हैं।

4.11 अभिजन तथा भौतिक साधन

प्राचीन भारत में अस्पृश्यों को न तो आर्थिक स्वतन्त्रता थी, और न ही आर्थिक सुरक्षा। मनुस्मृति मे कहा गया है कि शूद्र, यदि वह ऐसी स्थिति में हो फिर भी धन संचय न करे, क्योंकि जो शूद्र धन संचय करता है वह ब्राह्मण को कष्ट पहुँचाता है। मिट्टी के बर्तन, लोहे के आभूषण, गाँव के बाहर कच्ची झोपड़ी, मुर्दों के उतरे कपड़े यही शूद्र की सम्पत्ति होगी। अस्पृश्यों की स्थिति और भी दयनीय थी। लेकिन आज के जटिल भौतिक एवं वैज्ञानिक युग में सुख–सुविधा एवं भोग–विलासयुक्त साधनों का विशिष्ट स्थान है। व्यक्ति के जीवन स्तर, उसके वैचारिक एवं व्यावसायिक प्रतिमान, उसकी महत्वाकांक्षा आदि को निर्धारित करने में कुछ हद तक पारिवारिक सम्पन्नता या विपन्नता का योगदान होता है। सुख–सुविधाओं के नवीनतम साधनों के आविष्कार से पूर्व भूमि, पशुधन एवं मकान के स्वामित्व के आधार पर समाज में व्यक्ति विशेष का स्तर निर्धारित होता था, लेकिन आज के युग में, विशेषकर शहरी संस्कृति में उपरोक्त साधनों का स्थान फ्रिज, स्कूटर, मोटर साइकिल, कार, टेलीफोन, टेलीविजन, वी.सी.पी. / वी.सी.आर. जैसे भोग–विलास के साधनों ने ग्रहण कर लिया है।

दलित अभिजनों के पास भौतिक साधनों के स्वामित्व सम्बन्धी आँकड़े प्रदर्शित किये हैं। तालिका के अवलोकन के स्पष्ट होता है कि फ्रिज, स्कूटर/मोटर साइकिल, टेलीविजन एवं कूलर अधिकांश अभिजनों के पास हैं, जबकि कार/जीप, वी.सी.पी./वी.सी.आर. एवं टेलीफोन की सुविधा बहुत कम अभिजनों के पास उपलब्ध हैं। 61.33 प्रतिशत अभिजनों के पास फ्रिज हैं जबकि शेष 38.67 के पास फ्रिज नहीं है। आवगमन के लिये स्कूटर/मोटर साइकिल रखने वाले अभिजनों का प्रतिशत 90 है जबकि कार/जीप केवल 8.67 प्रतिशत अभिजनों के पास ही हैं। 13 (8.67) अभिजनों, जिनके पास कार/जीप हैं, में से लगभग आधे 6 नौकरशाह, 5 राजनैतिक अभिजन, एक वकील तथा एक न्यायाधीश शामिल हैं। रंगीन टी.वी. 51.33 प्रतिशत तथा श्याम–श्वेत 43.33 प्रतिशत अभिजनों के पास हैं एवं शेष 5.34 प्रतिशत के पास टी.वी. नहीं है। यहाँ यह स्पष्ट करना जरूरी है कि टी.वी. आज के युग में एक साधारण सी वस्तु हो गई है क्योंकि आज कच्ची झोंपड़ियों, ग्रामों एवं सामान्य मजदूरों के घरों में भी टी.वी. देखा जा सकता है।

अध्ययन में शामिल दलित अभिजनों में से 47.33 प्रतिशत के पास एक तथा 20 प्रतिशत के पास दो कूलर हैं। शेष 32.67 के पास कूलर नहीं हैं। टेलीफोन स्वामित्व की दृष्टि से स्थिति अत्यन्त निराशाजनक है क्योंकि केवल 30.67 प्रतिशत को ही टेलीफोन सुविधा उपलब्ध है। इनमें भी 10.67 प्रतिशत के पास सरकारी टेलीफोन तथा 20 प्रतिशत के पास ही निजी टेलीफोन है। निजी टेलीफोन धारकों में भी ज्यादातर अभिजन नौकरशाह हैं तथा कुछ व्यावसायिक एवं राजनैतिक अभिजन हैं केवल 12 प्रतिशत अभिजनों के पास ही वी.सी.पी./वी.सी.आर. हैं क्योंकि यह अभी तक सम्पन्न वर्ग की वस्तु मानी जाती है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि भौतिक साधनों के स्वामित्व की दृष्टि से शैक्षणिक अभिजनों की अपेक्षा नौकरशाह एवं व्यावसायिक अभिजनों की स्थिति अच्छी है।

4.12 अभिजन तथा भूमि

किसी भी प्रकार की अचल सम्पत्ति का होना प्रतिष्ठा के साथ ही अच्छी सामाजिक स्थिति का निर्धारक माना जाता है। भूमि स्वामित्व समाज में प्रभुत्व स्थापित करने का एक प्रामाणिक कारक है।[18] विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में भूमि स्वामित्व आर्थिक स्थिति का महत्वपूर्ण निदर्शक तत्व है।[19] परम्परागत रूप से दलितों को जो कि जाति व्यवस्था रूपी पिरामिड के निम्नतम स्तर पर रहे हैं, को भूमि पर मालिकाना हक प्राप्त करने का अधिकार नहीं था।[20]

क्षेत्रीय सर्वेक्षण के दौरान अनेक अभिजनों एवं दलित वर्ग के बुजुर्ग सदस्यों ने इस तथ्य को उजागर किया कि दलित वर्ग के अधिकांश सदस्य भूमिहीन हैं क्योंकि आजादी प्राप्ति तक इन जातियों को भूमि स्वामित्व का कानूनी अधिकार नहीं था। इन जातियों के नाम भूमि का पजीकरण नहीं होता था, केवल भू–स्वामियों के अधीन बंधुआ मजदूर के रूप में कार्य करके अपना जीवनयापन करते थे। आजादी के बाद अपने परम्परागत व्यवसाय के साथ इन जातियों ने भी भूमि के महत्व को पहचान कर भमि–स्वामित्व की ओर ध्यान दिया है। साथ ही सरकार ने भी दलित जातियों के भूमिहीन लोगों को भूमि आवंटन करके इनको कृषि–कार्य की ओर आकर्षित किया है। लेकिन इस भूमि आवंटन ने भी इन जातियों की दशा सुधारने की अपेक्षा जातीय वैमनस्य को बढ़ावा ही दिया है।

हमीरपुर जनपद में दलितों के लगभग 80 प्रतिशत अभिजन भूमिहीन हैं। 12.67 प्रतिशत अभिजनों के पास 10 बीघा तक सिंचित भूमि तथा 13.33 प्रतिशत के पास इतनी ही असिंचित भूमि है। इस समूह में भी अधिकतर अभिजनों के पास 5 बीघा या इससे कम भूमि है, जिन्हें भूमिहीन की

---

[18] श्रीनिवास, एम.एन., सोशियल चेंज इन मार्डन इंडिया, न्यू देहली, ओरियेन्ट लांगमैन, रिप्रिन्टेड–1977, पृ. 11–13 : पामेचा, आर, इलिट इन ए ट्राइबल सोसायटी, जयपुर, प्रिंटवैल पब्लिशर्स, 1985, पृ. 74

[19] राय, रामाश्रय, तथा सिंह, वी.बी., 1987, इबिद, पृ. 34

[20] सच्चिदानन्द, 1977, इबिद, पृ. 38–39

श्रेणी में ही रखा जा सकता है। 11 से 20 बीघा तक जमीन सिंचित 5.33 तथा असिंचित भूमि 6.67 प्रतिशत अभिजनों के पास है। 21 या इससे अधिक बीघा भूमि 2 प्रतिशत के पास सिंचित तथा 3.33 प्रतिशत के पास असिंचित है।

तालिका संख्या 4.12.1

अभिजन तथा भूमि स्वामित्व

क्रमांक	भूमि की मात्रा (बीघा में)	सिंचित	असिंचित
1.	भूमिहीन	120 (80.00)	115 (76.67)
2.	1—10	19 (12.67)	20 (13.33)
3.	11—20	08 (5.33)	10 (6.67)
4.	21—या अधिक	03 (2.00)	05 (3.33)
	योग	**150** **(100.00)**	**150** **(100.00)**

4.13 अभिजन तथा आवास

परम्परागत समाज में इन जातियों को सुन्दर एवं पक्के मकान निर्मित करने एवं उनमें निवास करने का अधिकार नहीं था। लेकिन आज, विशेषकर शहरी क्षेत्रों में दलित अभिजन भी विविध आवासीय कॉलोनियों में उच्च वर्गों के साथ सुन्दर एवं भव्य मकानों में रह रहे हैं। ग्रामीण पृष्ठभूमि के भी अधिकांश अभिजन शहर में पदस्थापित होने के कारण शहरों में ही निवास करने लग गये हैं। ग्रामीण क्षेत्र में भी दलित अभिजन और कुछ हद तक सामान्य व्यक्ति भी पक्के मकानों में गाँव के अन्दर निवास करते हैं।

तालिका संख्या 4.13.1 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि दलित वर्ग के लगभग 48 प्रतिशत अभिजनों के पास स्वयं के पक्के मकान हैं। लगभग 33.33 प्रतिशत अभिजन अभी स्वयं का मकान नहीं होने या संयुक्त परिवार होने के कारण पैतृक मकानों में ही निवास करते हैं। 8.67 प्रतिशत अभिजनों के पास मिश्रित मकान हैं, जिनमें एक या दो कमरे तथा शेष कच्चे घर निर्मित हैं। 5.33 प्रतिशत अभिजन अभी भी ग्रामीण पृष्ठभूमि के कच्चे घरों में ही रहते हैं। जिन अभिजनों के पास स्वयं के पक्के मकान हैं, उन्होंने उल्लेख किया है कि नगर विकास–न्यास, आवासन–मण्डल, विकास प्राधिकरण के द्वारा निर्मित आवासीय कॉलोनियों में सरकारी या गैर सरकारी वित्तीय संस्थाओं से ऋण लेकर मकान प्राप्त किये हैं।

तालिका संख्या 4.13.1

अभिजन एवं आवास

क्रमांक	मकान का प्रकार	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	पक्का मकान–एक	57	38.00
2.	पक्के मकान–दो	04	2.67
3.	पक्का मकान तथा आवासीय भूखण्ड	11	7.33
4.	केवल आवासीय भूखण्ड	07	4.67
5.	कच्चे एवं पक्के मकान	13	8.67
6.	कच्चा मकान	08	5.33
7.	शून्य	50	33.33
	योग	**150**	**100.00**

4.14 अभिजन तथा पारिवारिक संरचना

परिवार सामाजिक संरचना की मूल इकाई है। वह व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति, समाजीकरण, व्यक्तित्व के विकास तथा औद्योगीकरण एवं आधुनिकीकरण के प्रभावों से आज पारिवारिक संरचना एवं कार्यों में परिवर्तन आ रहे हैं लेकिन अनेक परिवर्तनों के बावजूद संयुक्त परिवार की

भावनाएँ अब भी मौजूद हैं, जैसा कि कपाड़िया ने लिखा है कि "हिन्दू मनोवृत्तियाँ आज भी संयुक्त परिवार के पक्ष में हैं। परिवार जब तक जीवित रहेगा, इसका भविष्य अंधकारपूर्ण नहीं है। आने वाली पीढ़ी में संयुक्त परिवार के लिये सुदृढ़ भावनायें विद्यमान हैं।"[21]

प्रायः यह कहा जाता है कि परिवार का कोई सदस्य जब उच्च पद प्राप्त कर लेता है, या 'अभिजन' स्थिति तक पहुँच जाता है तो वह अपने परिवारिक एवं सामाजिक दायित्वों के प्रति उदासीन हो जाता है। वह पद प्राप्ति के बाद परिवार से अपने सम्बन्ध विच्छेद करके एक पृथक समुदाय का सदस्य बन जाता है। यहाँ हम इस धारणा के परीक्षण का प्रयास करेंगे कि क्या दलित अभिजन भी पद प्राप्ति के बाद एकाकी परिवार को अधिक महत्व देते हैं अथवा संयुक्त परिवार में रहते हुए ही अपने परिवारिक दायित्वों को पूर्ववत् निभाते हैं?

पारिवारिक स्वरूप से सम्बन्धित तालिका 4.14.1 के विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि हमीरपुर जनपद में दलित वर्ग के 50.67 प्रतिशत अभिजन संयुक्त परिवार में तथा 49.33 प्रतिशत एकाकी परिवार में रहते हैं। अभिजन श्रेणीवार पृथक से अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि शैक्षणिक, व्यावसायिक, नौकरशाह एवं राजनैतिक अभिजन क्रमशः 60.50, 46.85, 47 एवं 33.33 प्रतिशत संयुक्त परिवारों में तथा 39.50, 53.15, 53 एवं 66.67 प्रतिशत अभिजन एकाकी परिवारों में रहते हैं। सर्वाधिक शैक्षणिक अभिजन 60.50 प्रतिशत संयुक्त परिवारों में रहते हैं तथा सर्वाधिक 66.67 प्रतिशत राजनैतिक अभिजन एकाकी परिवारों मे रहते हैं। अध्ययन में प्राप्त तथ्यों की पुष्टि सिंह तथा सुन्दरम्[22] द्वारा उत्तर प्रदेश में हरजन अभिजनों पर किये गये एक अध्ययन से भी होती है, जिसमें संयुक्त तथा एकाकी परिवारों में रहने वाले

---

[21] कपाड़िया, के.एम., मैरिज एण्ड फैमिली इन इंडिया, बॉम्बे, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सटी, प्रेस, 1958, पृ. 232

[22] सिंह, एस.एस. तथा सुन्दरम्, एस., इमरजिंग हरिजन इलिट, ए स्टडी ऑफ देअर आइडैन्टिटी, न्यू देहली, उप्पल पब्लिशिंग हाउस, पृ. 72–73

हरिजन अभिजनों का प्रतिशत लगभग एक समान था। इस आधार पर यह धारणा कि 'अभिजन' स्थिति तक आने के बाद व्यक्ति अपने परिवार के प्रति उदासीन हो जाता है, असत्य प्रतीत होती है। दलित अभिजन पद प्राप्ति के बाद भी परिवार से लगाव रखते हैं। इस निष्कर्ष से यह उपकल्पना भी सत्य सिद्ध होती है कि एकाकी परिवार की अपेक्षा संयुक्त परिवार के सदस्यों को अभिजन के अधिक अवसर प्राप्त होते हैं।

तालिका संख्या 4.14.1

अभिजनों के परिवार का स्वरूप

क्रमांक	अभिजन श्रेणी	संयुक्त परिवार	एकाकी परिवार	योग
1.	शैक्षणिक	32 (60.50)	21 (39.50)	53 (100.00)
2.	व्यावसायिक	24 (46.85)	28 (53.15)	52 (100.00)
3.	नौकरशाह	16 (47.00)	17 (53.00)	33 (100.00)
4.	राजनैतिक	04 (33.33)	08 (66.67)	12 (100.00)
	योग	**76 (50.67)**	**74 (49.33)**	**150 (100.00)**

4.15 अभिजन तथा जीवन–साथी

यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि जब हम 'जीवन–साथी' की बात करते हैं तो यहाँ पुरूष एवं महिला दोनों ही शामिल हैं। जो अभिजन पुरूष हैं, उनकी जीवन साथी महिला होगी और महिला अभिजनों के जीवन साथी पुरूष। प्रस्तुत अध्ययन में 144 पुरूष अभिजन तथा मात्र 6 महिला अभिजन हैं। अतः जीवन–साथी में 96 प्रतिशत महिलाएँ हैं।

तालिका संख्या 4.15.1

अभिजनों के जीवन–साथियों का शैक्षणिक स्तर

क्रमांक	शैक्षणिक स्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	अविवाहित	03	2.00
2.	निरक्षर	47	31.33
3.	प्राथमिक	31	20.67
4.	मिडिल	11	07.33
5.	सैकेण्डरी	21	14.00
6.	हायर सैकेण्डरी	08	05.33
7.	स्नातक	11	7.33
8.	स्नातकोत्तर	12	08.00
9.	व्यावसायिक	06	04.00
	योग	**150**	**100.00**

लगभग 31.33 प्रतिशत अभिजनों के जीवन–साथी, जो शत–प्रतिशत महिलाएँ हैं, निरक्षर हैं। 20.67 प्रतिशत अभिजनों के जीवन–साथी प्राथमिक, 7.33 प्रतिशत के मिडिल पास, 14 प्रतिशत के सैकेण्डरी एवं मात्र 5.33 प्रतिशत अभिजनों के जीवन–साथी हायर सैकेण्डरी स्तर तक की शिक्षा प्राप्त हैं। स्नातक, स्नातकोत्तर एवं व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त जीवन–साथियों का प्रतिशत क्रमशः 7.33, 8 एवं 4 प्रतिशत है, जिसमें 6 पुरूष जीवन–साथी भी हैं।

अध्ययन में प्राप्त निष्कर्षों की तुलना में आन्ध्र प्रदेश, राजस्थान, बिहार आदि राज्यों के अध्ययनों से करने पर समानता दिखाई देती है, जिनमें भी अधिकांश जीवन–साथी, जिनमें सभी महिलाएँ थीं, अशिक्षित थीं या मात्र साक्षर थीं।

4.16 अभिजन तथा बच्चों का शैक्षणिक स्तर

आज का युग शिक्षा का युग है। शिक्षा सिखाती भी है तथा एकरूपता एवं विविध वर्गों को जोड़ने का कार्य भी करती है। संवैधानिक

व्यवस्थाओं के परिणामस्वरूप देश के सभी भागों में दलितों का शिक्षा के प्रति रुझान बढ़ा है।

तालिका संख्या 4.16.1

अभिजनों के बच्चों का शैक्षणिक स्तर

क्रमांक	अध्ययनरत	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	विश्वविद्यालय / महाविद्यालय	15	10.00
2.	विश्वविद्यालय / महाविद्यालय / स्कूल	19	12.67
3.	स्कूल	75	50.00
4.	व्यवसायरत	03	02.00
5.	छोटे बच्चे	16	10.67
6.	अविवाहित	03	02.00
7.	निःसंन्तान	19	12.67
	योग	**150**	**100.00**

तालिका संख्या 4.16.1 में प्रदर्शित हमीरपुर जनपद में दलितों के अभिजनों के बच्चों के शैक्षणिक स्तर से ज्ञात होता है कि शत प्रतिशत अभिजनों के बच्चे शिक्षण संस्थाओं में शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं या कर चुके हैं। सर्वाधिक 50 प्रतिशत अभिजनों के बच्चे स्कूली शिक्षा में आ चुके हैं, जबकि 10 प्रतिशत के बच्चे विश्वविद्यालय या महाविद्यालयी शिक्षा स्तर तक आ चुके हैं। 12.67 प्रतिशत अभिजन ऐसे हैं जिनके बच्चे महाविद्यालयी एवं स्कूली शिक्षा दोनों स्तरों में अध्ययनरत हैं। 10.67 प्रतिशत अभिजनों के बच्चे अभी स्कूल जाने की अवस्था में नहीं हैं जबकि 2 प्रतिशत अभिजनों की संतानें शिक्षा पूर्ण करके व्यवसाय प्राप्त कर चुकी हैं।

प्रस्तुत अध्याय मे दलितों अभिजनों की सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि का विस्तृत विवेचन किया गया है। अध्ययन में शामिल अभिजनों में से सर्वाधिक शैक्षणिक अभिजन तथा इसके बाद क्रमशः व्यावसायिक, नौकरशाह एवं राजनैतिक अभिजन हैं। अभिजनों में 96 प्रतिशत पुरूष तथा शेष महिलाएँ

हैं। दलित अभिजनों में शहरी पृष्ठभूमि के अभिजनों का प्रभुत्व रहा है क्योंकि मात्र 19 प्रतिशत शहरी जनसंख्या में से 48 प्रतिशत अभिजन शहरी हैं। लगभग 98 प्रतिशत दलित अभिजन विवाहित हैं एवं अधिकांश अभिज़न 31 से 50 वर्ष की आयु समूह के हैं।

विविध अध्ययनों के आधार पर यह प्रतिपादित हुआ है कि सम्पत्ति एक व्यक्ति विशेष को अभिजन स्थिति तक पहुँचाने का प्रमुख कारक है। हमीरपुर जनपद में दलित वर्ग के लगभग 80 प्रतिशत अभिजन भूमिहीन हैं। अधिकांश अभिजनों के पास भौतिक साधनों में स्कूटर/मोटर साइकिल, टेलीविजन, फ्रिज एवं कूलर हैं, तथा कुछ अभिजनों के पास टेलीफोन सुविधा, कार/जीप, वी.सी.पी. एवं वी.सी.आर. भी हैं। अधिकतर दलित अभिजनों के परिवारों की मासिक आमदनी 4000 से 8000 रूपये के मध्य है।

पारिवारिक स्वरूप के आधार पर हमीरपुर जनपद में दलित वर्ग के अभिजना लगभग समान मात्रा में एकाकी एवं संयुक्त परिवारों में निवास करते हैं। दलित अभिजनों के जीवन–साथियों में से ज्यादातर अशिक्षित या मात्र साक्षर हैं तथा 84 प्रतिशत जीवन–साथी गृहिणी का कार्य करती हैं। दलित अभिजन सीमित परिवार के पक्षधर हैं। अधिकांश अभिजनों के एक से चार बच्चे हैं जिनमें लगभग 30 प्रतिशत के एक या दो ही बच्चे हैं। अभिजनों के शत प्रतिशत बच्चे विश्वविद्यालयी, महाविद्यालयी या स्कूलों में अध्ययनरत हैं।

00000———00000

अध्याय - 5

दलित अभिजनों में व्यावसायिक गतिशीलता

- व्यावसायिक गतिशीलता से आशय
- भारत में व्यावसायिक गतिशीलता
- दलित अभिजन एवं व्यावसायिक गतिशीलता
- व्यवसाय
- पीढ़ी दर पीढ़ी व्यावसायिक गतिशीलता
- सम्पत्ति
- बच्चों की शिक्षा एवं व्यवसाय के प्रति अभिजनों की आकांक्षा
- वर्तमान पद एवं आमदनी के प्रति अभिजन दृष्टिकोण
- असन्तुष्ट अभिजनों की आकांक्षा

5. दलित अभिजनों में व्यावसायिक गतिशीलता

पूर्व अध्याय में दलित अभिजनों के सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि का विवेचन किया गया है प्रस्तुत अध्याय में दलित अभिजनों की व्यावसायिक गतिशीलता की विवेचना की गई है।

सामान्य तौर पर प्रत्येक व्यक्ति अपनी विविध आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सम्पत्ति अर्जित करने का प्रयास करता है। सम्पत्ति अर्जित करने की यही प्रक्रिया जो निरन्तर चलती रहे, व्यवसाय कहलाता है। व्यवसाय से व्यक्ति की आय का स्त्रोत एवं मात्रा निर्धारित होती है। इसलिये यह आवश्यक रूप से व्यक्ति के सामाजिक मूल्यों, विचारों, व्यक्तित्व तथा जीवन–शैली को निश्चित करता है। भले ही व्यक्ति सम्पत्ति के लिये, जिसे व्यवसाय से अलग नहीं किया जा सकता, फिर भी आधुनिक समाजों में व्यवसाय केवल जीविकोपार्जन के लिये धन कमाने से अधिक महत्वपूर्ण ही नहीं बल्कि शक्ति, पद और प्रतिष्ठा का भी प्रतीक है।[1] मैक्लैण्ड के अनुसार व्यक्ति की व्यावसायिक महत्वाकांक्षाएँ, उसकी उपलब्धि एवं पूर्वाभिमुखता जो आधुनिकीकरण का एक अंग है, को भी निर्धारित करती है।[2]

5.1 व्यावसायिक गतिशीलता से आशय

व्यवसाय अपेक्षाकृत निरन्तर क्रियाकलापों का वह सामाजिक स्तर है, जो किसी व्यक्ति को जीविकोपार्जन प्रदान करता है, तथा साथ–साथ उसकी सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति को भी स्पष्ट करता है। यहाँ

---

[1] गोयल, एस.के., द स्टडी ऑफ षिड्यूल्ड कास्ट स्टूडैन्ट्स ऑफ कॉलेज इन ईस्टर्न यू.पी., रिसर्च प्रोजेक्ट स्पान्सर्ड बाई आई. सी.एस.एस.आर., न्यू देहली, 1973–74, डिपार्टमैन्ट ऑफ सोशियॉलाजी, बनारस हिन्दू यूनिवर्सटी, पृ.116

[2] मैकलैण्ड, सी.देवी., द एचिविंग सोसायटी, न्यूयार्क, द फ्री प्रेस ऑफ ग्लेन्को, 1961, पृ. 29

व्यावसायिक गतिशीलता से हमारा तात्पर्य है– एक व्यवसाय को छोड़कर दूसरा व्यवसाय ग्रहण करना। एक व्यावसायिक प्रस्थिति को छोड़कर दूसरी उच्च व्यावसायिक प्रस्थिति प्राप्त कर लेना अथवा एक कार्य समूह से दूसरे कार्य समूह समूह में शामिल हो जाना। अतः व्यावसायिक गतिशीलता दो स्तरों पर स्पष्ट की जा सकती है –

1. व्यवसाय के भीतर गतिशीलता, (अंतः व्यवसाय)
2. व्यक्ति की एक व्यवसाय से दूसरे व्यवसाय में गतिशीलता (अंतर व्यवसाय)

इन दोनों प्रकार की गतिशीलता में स्थान परिवर्तन, कार्य, आय, सम्मान, शक्ति, स्वतन्त्रता तथा अन्य गतिमान गुण समाहित रहते हैं। एक गतिशील अर्थव्यवस्था में कार्यात्मक गतिशीलता निरन्तर बढ़ती रहती है, इसका मापन एक व्यक्ति के जीवन समय के कार्यों, जिसमें दो या दो से अधिक पीढ़ियां आती हैं, किया जा सकता है।[3] भारतीय समाज प्राचीन काल से ही अत्यधिक स्थिर, रूढ़ एवं यथा स्थितिवादी रहा है। लेकिन वर्तमान में संचार साधनों के विस्तार, शिक्षा में वृद्धि, यातायात एवं परिवहन साधनों का तेजी से विस्तार जैसे अनेक कारणों से गतिशीलता में वृद्धि हुई है तथा हिन्दू समाज को निम्नतम वर्ग 'दलितों' में भी व्यावसायिक गतिशीलता दिखाई देने लगी है। व्यावसायिक गतिशीलता के अध्ययन के लिए कई दृष्टियों से विचार किया जाता है। अधिकांश समाज वैज्ञानिकों द्वारा सामान्यतया निम्नलिखित तीन पक्षों को स्वीकार किया गया है–

1. समय सापेक्ष धारणा
   (क) अन्तरपीढ़ी गतिशीलता
   (ख) अन्तःपीढ़ी गतिशीलता
2. दिशा सापेक्ष धारणा

---

[3] सिंह, रवि प्रताप, दलित वर्ग के विधानमण्डलीय अभिजन, दिल्ली, मिततल पब्लिकेशन्स, 1989, पृ. 123–124

(क) ऊर्ध्वीय गतिशीलता

(ख) क्षैतिजीय गतिशीलता

3. विषय सापेक्ष धारणा

(क) कार्य की स्थिति में परिवर्तन

सभी अवधारणाओं का आधार भिन्न है किन्तु वास्तव में वे एक–दूसरे से जुड़ी हुई हैं। प्रत्येक अवधारणा अन्तःपीढ़ीय तथा अन्तरपीढ़ीय गतिशीलता में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। संक्षेप में अन्तःपीढ़ीय गतिशीलता का अर्थ व्यवसाय में परिवर्तन तथा सम्पूर्ण जीवन काल में उन्नति अथवा ह्रास, जो कि समुदाय के भीतर होता है, से आंकी जाती है। अन्तरपीढ़ीय गतिशीलता, दो पीढ़ीयों के मध्य होती है। इस प्रकार की गतिशीलता से व्यवसाय की स्तरीकृत प्रकृति का अनुमान लगाना सम्भव है। अन्तरपीढ़ीय गतिशीलता की उच्च दर प्रायः इस प्रकार का संकेत माना जाता है जिससे मुक्त स्तरीकरण की व्यवस्था तथा लोकतान्त्रिक व्यवस्था के उचित संचालन का पता चलता है। अन्तरपीढ़ीय गतिशीलता के मापन का एक सरल तरीका पिता का व्यवसाय है। उत्तरदाताओं से यह पूछा जाता है कि उनका वर्तमान व्यवसाय एवं उनके पिता का भूतकाल में कौन–सा व्यवसाय रहा है? दोनों व्यवसायों के सामाजिक–आर्थिक स्थिति के अन्तर को व्यावसायिक गतिशीलता का सूचकांक मान लिया जाता है। क्षैतिजीय तथा विषयगत गतिशीलता विशिष्ट रूप से ऊर्ध्वीय गतिशीलता से जुड़ी हुई है। ऊर्ध्व गतिशीलता की भूमिका के प्रमुख तत्वों में परिवर्तन है, जबकि विषयगत गतिशीलता स्वयं ऊर्ध्वीय गतिशीलता का एक सम्भव उत्तरदायी तत्व है। हाल के दशकों में स्थान परिवर्तन अधिक प्रभावी हुआ है, जिसके द्वारा गतिशील व्यक्ति उन स्थानों से जुड़े होते हैं, जहाँ उनकी उपयोगिता महसूस की जा जाती है।[4]

---

[4] ब्लाऊ तथा डंकन, द अमेरिकन आक्यूपेशनल स्ट्रेक्चर, 1967, कोटेड बाई रवि प्रतापसिंह, 1989, इबिद, पृ. 124–125

5.2 भारत में व्यावसायिक गतिशीलता

भारत में सामाजिक व्यवस्था पूर्णतः व्यवसाय पर आधारित रही है, जिनमें प्रत्येक जाति का अपना एक पृथक एवं निश्चित व्यवसाय होता है। एक ही जाति के भीतर अनेक उपजातियाँ दिखाई देती हैं लेकिन उनमें बहुत हद तक व्यावसायिक समानता पाई जाती है। दलित वर्ग में भी व्यवसाय एवं जाति के मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध पाया जाता है।[5] आज दलित वर्ग में शामिल जातियाँ वैदिक युग में चारों वर्णों से बाहर पंचमा, अतिशूद्र, अन्त्ज्य, अवर्ण, अस्पृश्य आदि नामों से जानी जाती थीं। इनको सबसे गन्दा एवं घृणित व्यवसाय प्रदान किया गया। जाति एवं व्यवसाय एक ही सिक्के के दो पहलू होने तथा जाति के आधार पर व्यवसाय निश्चित होने के कारण व्यवसाय का त्याग करना या व्यवसाय बदलना आसान कार्य नहीं था।[6] एक रोचक तथ्य यह है कि वेद, उपनिषद, महाकाव्य एवं अन्य धर्मशास्त्रों में जाति व्यवसाय के साथ सम्बद्ध थी तथा व्यवसाय बदलने पर जाति स्वतः ही परिवर्तित हो जाती थी। कालान्तर में जाति–व्यवस्था के बंधन दृढ़ होते गये तथा जाति का निर्धारण व्यवसाय के स्थान पर जन्म के द्वारा होने लगा।[7]

ब्रिटिश शासन के दौरान व्यावसायिक दृढ़ता शिथिल होने लगी तथा दलितों के सदस्य भी अपने परम्परागत एवं जातिगत धंधों को त्यागकर कृषि, सरकारी सेवा, व्यापार, उद्योग जैसे स्वच्छ व्यवसायों में प्रवेश पाने लगे। लेकिन यह परिवर्तन भी जाति बंधनों को, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में, समाप्त करने में असफल रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में दलितों को अभी भी उन्हीं व्यवसायों को करने की इजाजत है जो इनके लिए पूर्व निर्धारित हैं। आज भी इन

---

[5] सच्चिदानन्द, द हरिजन इलिट : ए स्टडी ऑफ देअर स्टेट्स, नेटवर्क मॉबिलिटी एण्ड रोल इन सोशियल ट्रांसफारमेशन, फरीदाबाद, थामसन प्रेस (इंडिया) लि. 1977, पृ. 16

[6] सच्चिदानन्द, 1977, इबिद, पृ. 96

[7] श्रीवास्तव, एस.एन., हरिजन्सइन इंडियन सोसायटी, लखनऊ, द अपर इंडिया पब्लिशिंग हाउस प्रा. लि., 1980, पृ. 178–180

जातियों के सदस्य ग्रामीण इलाकों में चाय, पान एवं खाने योग्य वस्तुओं की दुकाने नहीं लगा सकते हैं।[8]

भारत में गतिशीलता पर जितने भी अध्ययन हुए हैं, उनमें व्यावसायिक गतिशीलता की अपेक्षा सामाजिक गतिशीलता पर अधिक जोर दिया गया है। फिर भी कुछ ऐसे अध्ययन हुए हैं जो व्यावसायिक गतिशीलता पर प्रकाश डालते हैं। एम. एन. श्रीनिवास की संस्कृतिकरण एवं पश्चिमीकरण की अवधारणा भारत में सामाजिक गतिशीलता को प्रकट करती है। श्रीनिवास[9] ने लिखा है कि भारत में निम्न जातियों में ऊर्ध्वीय गतिशीलता मिलती है। इस प्रकार की गतिशीलता प्राचीन व्यवहारों को छोड़ने तथा नवीन सम्मानजनक व्यवहार को अपनाने एवं पुराने नामों को छोड़ने से प्राप्त होती है। विगत समय में अनेक निम्न जातियों ने संस्कृतिकरण के माध्यम से उच्च सामाजिक सीढ़ी पर चढ़ने का प्रयास किया है। बेली[10] का सामाजिक गतिशीलता का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि किस प्रकार से दो जातियाँ अपनी–अपनी प्रारम्भिक जातियों से आगे बढ़ी हैं। यह अध्ययन उड़ीसा के एक गाँव के ऐसे वर्ग से सम्बन्धित है, जो कि अस्पृश्य है तथा जिसने न केवल गाँव के भीतर आगे बढ़ने का प्रयास किया, बल्कि राज्य की राजनीति में भी एक विशिष्ट स्थान बनाया है। उनका यह प्रयत्न सामाजिक एवं व्यावसायिक गतिशीलता के लिये इसलिये सफल हो पाया, क्योंकि ब्रिटिश सरकार ने शिक्षा, कृषि, राजकीय सेवा तथा आगे बढ़ने के अन्य क्षेत्रों में अवसर उपलब्ध कराये थे। इन नीतियों एवं कार्यक्रमों के परिणामस्वरूप, बेली का कहना है कि, कुछ स्कूलों में अध्यापक हो गये, कुछ अन्य सरकारी सेवा में सफल रहे तथा कुछ व्यक्तियों ने व्यापार द्वारा अपनी सम्पत्ति बढ़ाई।

---

[8] रिपोर्ट ऑफ बैकवर्ड क्लासेज कमीशन, न्यू देहली, गवर्नमेन्ट ऑफ इंडिया प्रेस, 1981, पृ. 12

[9] श्रीनिवास, एम.एन., सोशियल स्ट्रक्चर, द नेशनल गजेटियर्स, 1 जनवरी 1977, श्रीनिवास, एम.एन., सोशियल चेंज इन मार्डन इंडिया, न्यू देहली, ओरियेंट लॉगमैन, रिप्रिन्टेड – 1977, पृ. 28–30

[10] बेली, एफ.जी., कास्ट एण्ड इकानामिक फ्रन्टियर : ए विपेज ऑफ हाईलैण्ड ओरिसा, मेनचेस्टर, मेनचेस्टर प्रेस 1957, पृ. 221–227

मैण्डेलबोम[11] ने भारत में सामाजिक गतिशीलता पर हुए विभिन्न अध्ययनों का निष्कर्ष देते हुए लिखा है कि "सामाजिक गतिशीलता सभी सामाजिक स्तरों पर सम्भव है, यह कुछ जातियों के लिये अधिक उपयुक्त, कुछ के लिये कम, कुछ विशेष दशाओं में अधिक सुविधाजनक तथा कुछ दशाओं में कठिन होती है। एक उच्च इच्छा–सम्पन्न व्यक्ति प्रायः अपनी सामाजिक इच्छाओं के विभिन्न स्तरों में कोई अन्तर नहीं करता, वह केवल अपने परिवार, अपने वंश तथा अपनी जाति को एक मानता है।" लांच[12] ने आगरा के अध्ययन (1968) में पाया कि आगरा शहर की जाटव जाति भली प्रकार संगठित रूप से अपनी सामाजिक गतिशीलता के लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल रही है। जाटवों ने उपलब्ध राजनीतिक साधनों के द्वारा अपनी उपस्थिति का एहसास कराया था, लोगों ने समय बीतने के साथ उनकी गतिशीलता को स्वीकार कर लिया है। उत्तर प्रदेश के विधान मण्डल में अब जाटव जाति का एक निश्चित प्रतिनिधित्व है तथा उसके पास अत्यधिक राजनैतिक शक्ति केन्द्रित हो गई है।

असम के एक गाँव के अध्ययन (1966) में गोस्वामी[13] ने यह निष्कर्ष निकाला है कि विभिन्न जातियों के सदस्य बाहरी दुनिया के प्रभाव से अपने जातिगत (परम्परागत) व्यवसायों को त्यागकर अन्य व्यवसाय अपना रहे हैं। इसी प्रकार के अन्य अध्ययन (1967) में सहाय ने लिखा है कि कुछ दलित सदस्यों ने अपने जातिगत व्यवसायों को, जो परम्परागत होने के कारण अधिक लाभदायक नहीं थे, छोड़कर अधिक आमदनी एवं प्रतिष्ठासूचक व्यवसाय अपना लिये हैं।[14] पंजाब से सम्बन्धित एक अन्य अध्ययन (1972) में सब्बरवाल[15] ने उल्लेख किया है कि " अपनी स्थिति सुधारने हेतु बाल्मिकी

---

[11] मैण्डेलबोम, डी.जी., सोसाइटी इन इंडिया : चेंज एण्ड कन्टिनिटी केलीफोर्निया, यूनिवर्सिटी ऑफ कैलीफोर्निया प्रेस, 1970, पृ. 439

[12] लांच, ओ.एम., द पालिटिक्स ऑफ अन्टचेबिल्टी, इन स्ट्रक्चर एण्ड चेन्ज इन इंडियन सोसायटी, मिल्टन सिंगर तथा बर्नाड (एडी.), शिकागो, एल्डाइन, 1968, पृ. 214–216

[13] गोस्वामी, एम.सी., कास्ट एण्ड ऑक्यूपेशन इन एन आसामीज विलेज, मैन इन इंडिया, वॉ–46, नं. 3, 1966, पृ. 168

[14] सहाय, के.एन., कास्ट एण्ड ऑक्यूपेशन इन ए विलेज, मैन इन इंडिया, वॉ–47, नं. 3, 1967

[15] सब्बरवाल, एस., स्टेटस, मॉबिलिटी एण्ड नेटवर्क, इन इंडिया, वॉ–47, न. 3, 1967

समाज ने सफाई के कार्य को नहीं करने का निश्चय किया।" उत्तर प्रदेश के एक ग्रामीण अध्ययन (1970) में एल्डर[16] ने लिखा है कि "चमारों ने यह निश्चय किया है कि यदि वे सामाजिक एवं जातीय पदसोपान में उच्च स्तर पर आना चाहते हैं, तो उन्हें स्वयं को चमडे के दूषित व्यवसाय से पृथक करना होगा।"

स्थान–सूचक या भौगोलिक गतिशीलता भी सामाजिक गतिशीलता का एक महत्वपूर्ण पहलू है। परम्परागत रूप से बड़ी संख्या में दलित गाँवों में निवास करते हैं। लेकिन आजादी के बाद शिक्षा के विस्तार, बाहरी दुनिया से सम्पर्क और राज्य की संरक्षणात्मक नीतियों के कारण इन जातियों में भी शहरीकरण की प्रवृत्ति दिखाई देने लगी है। प्राचीन भारत में अस्पृश्यों की पृथक बस्तियां होती थीं तथा इन अस्पृश्यों को गाँव में प्रवेश करते समय एक विशिष्ट प्रकार की आवाज तथा विशेष चिन्ह धारण करना पड़ता था।[17] लेकिन अब दलितों के अभिजन और सामान्य सदस्य भी शहरों की ओर अग्रसर होकर नव विकसित आवासीय कालोनियों में उच्च जातियों के साथ रह रहे हैं। स्थान–सूचक गतिशीलता सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन की दिशा में पथ–प्रदर्शक का कार्य करती है।

भारत में दलितों में व्यावसायिक गतिशीलता से सम्बन्धी अध्ययन बहुत कम हुए हैं।[18] आन्ध्र प्रदेश के दलितों से सम्बन्धित अपने एक अध्ययन (1978) में अब्बासायूलू[19] ने पाया कि अभिजनों मे अन्तः एवं अन्तरपीढ़ीय गतिशीलता में निरन्तर वृद्धि हुई है। यह गतिशीलता शिक्षा, व्यवसाय एवं सम्पत्ति तीनों स्तरों पर दिखाई देती है। पितामह से पिता तथा पिता से अभिजन की तीन पीढ़ियों में शिक्षा, व्यवसाय तथा सम्पत्ति में निरन्तर

---

[16] एल्डर, जे. डब्लू., राजपुर : चेंज ऑफ द जजमानी सिस्टम ऑफ इन उत्तर प्रदेश विलेज, इन के. ईश्वरन (एडी.) चेंज एण्ड कन्टिनिटी इन इंडियाज विलेज, लंदन, कोलम्बिया, यूनिवर्सटी प्रेस, 1970, पृ. 125

[17] श्रीवास्तव, एस.एन., 1980, इबिद, पृ. 130–135

[18] अब्बासायूलू, वाई.बी., ए सोशियालॉजिकल स्टडी ऑफ द शिड्यूल्ड कास्ट लेजिस्लेचर्स ऑफ आन्ध्र प्रदेश (अन–पब्लिशड, एम. लिट्. थीसिस), हैदराबाद, उस्मानिया यूनिवर्सटी, 1974

[19] अब्बासायूलू, वाई.बी., ए साशियालाजिकल स्टडी ऑफ द शिड्यूल्ड कास्ट लेजिस्लेचर्स ऑफ आन्ध्र प्रदेश (अन–पब्लिशड, एम.लिट्., थीसिस), हैदराबाद, उस्मानिया यूनिवर्सटी, 1978, पृ. 96–97

बढ़ोत्तरी आंकी गई है। उत्तर प्रदेश के 'हरिजन–इलिट' नामक अपने अध्ययन (1987) में राय तथा सिंह[20] ने पाया कि पितामह, पिता एवं स्वयं अभिजन की तीन पीढियों में क्रमशः व्यावसायिक परिवर्तन का क्रम दिखाई देता है। यह क्रम परम्परागत, घृणित एवं गन्दे व्यवसायों को त्यागकर कृषि, व्यापार, सरकारी सेवा, तकनीकी व्यवसायों को अपनाने के रूप में दिखाई देता है। दलितों में व्यावसायिक गतिशीलता से सम्बन्धित एक अन्य अध्ययन में शेल्वानाथन[21] ने लिखा है कि दलितों की पितामह से अपने बच्चों तक की तीन पीढ़ियों में व्यवसायिक गतिशीलता निरन्तर अन्तरपीढ़ीय गतिशीलता के रूप में दिखाई देती है। पिता से बच्चों के व्यवसाय में यह देखा जाता है कि प्रायः बच्चे कृषि से भिन्न व्यवसायों की ओर ज्यादा अग्रसर हैं। बंधुआ मजदूर ज्यादा गतिशील पाये गये हैं। 'अनुसूचित जाति के विधानमण्डलीय अभिजन' नामक एक अध्ययन में सिंह[22] ने निष्कर्ष देते हुये लिखा है कि "व्यावसायिक गतिशीलता एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में परिलक्षित हो रही है। अभिजनों ने पूर्णतः परम्परागत व्यवसाय छोड़ दिये हैं जबकि शिष्ट व्यवसाय, प्राविधिक एवं पेशेवर व्यवसाय अपनाने का प्रतिशत क्रमशः एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में बढ़ता जा रहा है। इसी प्रकार पितामह, पिता एवं अभिजनों में क्रमशः शिक्षा का स्तर एवं सम्पत्ति में वृद्धि आंकी गई है।"

5.3 दलित अभिजन तथा व्यावसायिक गतिशीलता

प्रस्तुत अध्याय में उन तत्वों का विश्लेषण किया गया है, जो व्यावसायिक गतिशीलता को समझने में सहायक हैं। इन तत्वों में अभिजनों के पितामह एवं पिता का व्यवसाय, शिक्षा तथा सम्पत्ति की तुलनात्मक विवेचना के साथ–साथ अभिजनों की अपने बच्चों के व्यवसाय एवं शिक्षा से सम्बधी आकांक्षाओं की जानकारी भी प्रस्तुत की गई है। इस सम्पूर्ण विश्लेषण से यह पता लगाने का प्रयास किया है कि दलित अभिजनों में अन्तरपीढ़ीय

[20] राय, रामाश्रय तथा सिंह, वी.बी., 1987, इबिद, पृ. 41–42
[21] शेल्वानाथन, एस., 1989, इबिद, पृ. 228–229
[22] सिंह, रविप्रताप, 1989, इबिद, पृ. 247

व्यावसायिक गतिशीलता किस प्रकार की है? इससे यह भी स्पष्ट होगा कि अभिजनों में भविष्य के प्रति किस प्रकार की आशा विद्यमान है? अभिजन जिस पद पर कार्यरत है, उस पद से एवं उसकी आमदनी से संतुष्ट हैं या नहीं? यदि नहीं तो भविष्य में वे किस प्रकार के व्यवसाय (पद) में कार्य करना चाहते हैं?

5.3.1 शिक्षा

शिक्षा व्यावसायिक गतिशीलता में प्रमुख भूमिका अदा करती है। शिक्षा सामाजिक गतिशीलता को बढ़ाने का महत्वपूर्ण कारक है। यह व्यावसायिक गतिशीलता में अभिवृद्धि का भी एक प्रमुख कारक है। शिक्षा से दलितों के सदस्य भी कृषि में आधुनिक तकनीकें अपनाने योग्य हो जाते हैं एवं प्रभावी राजनैतिक सहभागिता भी शिक्षा से ही सम्भव है।[23] शिक्षा दलितों तथा हिन्दू जातियों के मध्य सामाजिक दूरी को भी समाप्त करने पारस्परिक सम्बन्धों में वृद्धि करती है।[24] शिक्षित व्यक्ति ही उच्च पद प्राप्त करने में सफल होता है तथा वह अपने बच्चों को उच्च शिक्षा दिला सकता है।

5.3.2 पिता की शिक्षा

पिता की शिक्षा व्यक्ति के प्रदत्त प्रस्थिति, पद एवं उसके सामाजीकरण के लिये विशेष महत्व रखती है। अधिकांश अध्ययनों के आधार पर ज्ञात हुआ है कि जिस पिता की शिक्षा उच्च होती है, अपने बच्चों को निम्न शैक्षणिक स्तर वाले पिता की अपेक्षा उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिये अधिक प्रोत्साहन देता है। जो पिता स्वयं की शिक्षा से संतुष्ट होते वे अपने बच्चों को जरूर उच्च शिक्षा हेतु प्रेरित करते हैं।[25]

---

[23] मेशर, ए.टी., गैंटिंग एग्रीकल्चर मूविंग, न्यूयार्क, फ्रेडरिक ए प्रेगर पब्लिशर्स, 1966, पृ. 125–12

[24] अलैक्जेंडर, के.सी., चेजिंग स्टेटस ऑफ पुलायस हरिजन्स ऑफ केरला, इकोनामिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली, वॉ. 3, न. 26, जुलाई 1968, पृ. 1073

[25] खान, मुमताज अली, 1980, इबिद, पृ. 20

तालिका संख्या 5.3.2

अभिजनों के पिता की शिक्षा

क्रमांक	शिक्षा	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	अशिक्षित	49	28.00
2.	साक्षर	53	35.33
3.	प्राथमिक	15	10.00
4.	मिडिल	15	10.00
5.	माध्यमिक	08	5.33
6.	उच्च माध्यमिक	02	1.33
7.	स्नातक	04	2.67
8.	स्नातकोत्तर	01	0.67
9.	व्यावसायिक	04	2.67
10.	जानकारी नहीं	06	4.00
	योग	**150**	**100.00**

तालिका में दिये गये आँकड़े स्पष्ट करते हैं कि 28 प्रतिशत अभिजनों के पिता निरक्षर रहे हैं, जबकि 35.33 प्रतिशत के पिता मात्र साक्षर। प्राइमरी एवं मिडिल स्तर तक की शिक्षा प्राप्त अभिजनों के पिता का प्रतिशत क्रमशः 10–10 रहा है। 5.33 प्रतिशत अभिजनों के पिता माध्यमिक, 1.33 प्रतिशत के पिता उच्च माध्यमिक, 2.67 प्रतिशत के स्नातक तथा मात्र 0.67 प्रतिशत अभिजनों के पिता स्नातकोत्तर शिक्षा प्राप्त हैं। व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त केवल 2.67 प्रतिशत अभिजनों के पिता हैं। इन तथ्यों से स्पष्ट होता है कि ज्यादातर अभिजनों के पिता मात्र साक्षर हैं या मिडिल स्तर तक की शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

5.3.3 शिक्षा में पीढ़ी दर पीढ़ी गतिशीलता

दलित वर्ग के लोगों को शिक्षा द्वारा आधुनिकीकरण की प्रक्रिया के अन्तर्गत लाने की निरन्तर चेष्टाएँ की गई हैं, परन्तु परम्परागत रूढ़ियाँ, सामाजिक–आर्थिक असमानताएँ तथा जातिगत–सांस्कृतिक पूर्वाग्रह कुछ ऐसे तथ्य हैं जो इन जातियों की शैक्षणिक प्रगति एवं उपलब्धियों में बाधक हैं।

प्रायः उच्च जातियों के लोगों का शैक्षणिक संस्थानों पर नियंत्रण तथा उनमें उच्च जाति के बालकों एवं शिक्षकों का प्रभुत्व होने के कारण भी इन लोगों को शिक्षा का पूर्ण लाभ नहीं मिल पाया है। इतने अधिक संवैधानिक एवं सरकारी प्रावधानों के बावजूद अनेक ग्रामीण क्षेत्रों में इन जातियों के छात्रों को आज भी अध्यापन कक्ष के बाहर बैठाया जाता है।[26]

विगत वर्षों में दलितों की शिक्षा को लेकर देश के विभिन्न भागों में अनेक प्रकार के समाजशास्त्रीय अध्ययन हुये हैं। इन अध्ययनों में रिपोर्ट ऑफ द एजूकेशन कमीशन (1964–66), रिपोर्ट ऑफ द कमेटी ऑफ वर्क्स ऑफ पार्लियामैन्ट ऑफ एजूकेशन (1967), सच्चिदानन्द (1968), के.सी. अलैक्जेंडर (1968), श्याम लाल (1970), पी.सी. अग्रवाल, जे.पी. नायक (1971), एस.के गोयल (1973–74), के.के. प्रेमी (1974), ए.आर. कामत (1981), कृष्ण कुमार (1983) आदि अध्ययन प्रमुख हैं। इस सन्दर्भ में सर्वाधिक महत्वपूर्ण अध्ययन 1972–73 में इंडियन कौंसिल ऑफ सोशियल साइन्स रिसर्च सेंन्टर द्वारा राष्ट्रव्यापी अनुसंधान परियोजना के अन्तर्गत किया गया। इस अध्ययन के प्रमुख निष्कर्ष निम्नांकित हैं–

1. सरकारी प्रयासों, विशेषकर आरक्षण एवं शैक्षणिक संविधाओं के परिणामस्वरूप दलितों में शिक्षा का प्रसार हो रहा है।
2. सामान्यतः इन प्रयासों का अधिकांश लाभ उन दलितों को अधिक मिला है, जो पहले से आर्थिक व संख्यात्मक दृष्टि से अधिक समृद्ध हैं।
3. उच्च जातियों के शैक्षणिक संस्थानों पर नियंत्रण होने तथा उनमें उच्च जातियों के शिक्षकों एवं विद्यार्थियों का प्रभुत्व होने के कारण दलितों के बच्चे शैक्षणिक स्तर पर और सामाजिक अन्तःक्रियाओं में उनसे

---

[26] मेयर, ए.सी. कास्ट एण्ड किनशिप इन सैन्ट्रल इंडिया, लंदन, रूटलेज एण्ड केगन पाल, 1960, पृ. 53

सामंजस्य नहीं कर पाये हैं और बहुत सी सुविधाओं से वंचित रह जाते हैं।

4. आर्थिक पिछड़ेपन के कारण दलित जातियों के बच्चे छोटी आयु में ही जीविकोपार्जन के लिये कार्य करना आरम्भ कर देते हैं और प्रदत्त सुविधाओं का पूरा लाभ नहीं उठा पाते।
5. प्रशासकीय जटिलताओं, भ्रष्टाचार एवं लालफीताशाही के कारण दलित जातियों के बच्चों को सुविधाओं का समुचित लाभ नहीं मिल पाता है।[27]

अभिजनों के परिवारों में विभिन्न पीढ़ियों में शैक्षणिक गतिशीलता का अध्ययन करने के लिये अभिजनों के पितामह, पिता एवं स्वयं (अभिजन) की शिक्षा का विश्लेषण किया है। प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि 62.67 प्रतिशत अभिजनों के पितामह अशिक्षित, 14.67 प्रतिशत अभिजनों के पितामह साक्षर, 6 प्रतिशत अभिजनों के पितामह प्राथमिक एवं मात्र 1.33 प्रतिशत अभिजनों के पितामह माध्यमिक शिक्षा प्राप्त थे। पिता की शैक्षणिक स्थिति से सम्बन्धित आँकड़े स्पष्ट करते हैं कि 28 प्रतिशत अभिजनों के पिता अशिक्षित, 35.33 प्रतिशत अभिजनों के पिता साक्षर, 10–10 प्रतिशत अभिजनों के पिता क्रमशः प्राथमिक एवं मिडिल, 5.33 प्रतिशत अभिजनों के पिता माध्यमिक एवं 1. 33 प्रतिशत अभिजनों के पिता उच्च माध्यमिक एवं क्रमशः 2.67 प्रतिशत अभिजनों के पिता स्नातक एवं व्यवसायिक स्तर की शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। स्वयं अभिजनों में 40.67 प्रतिशत व्यावसायिक, 38.67 प्रतिशत स्नातकोत्तर, 13.33 प्रतिशत एम.फिल/पीएच.डी. उपाधि धारक एवं 5.33 प्रतिशत प्रशिक्षित स्नातक हैं। अभिजनों के शत–प्रतिशत बच्चे शिक्षित हैं। अतः अध्ययन से स्पष्ट होता है कि पितामह से पिता, पिता से अभिजन एवं अभिजन से उनके बच्चों की चार पीढ़ियों में शिक्षा का प्रतिशत बढ़ने का क्रम है।

---

[27] विस्तृत अध्ययन के लिये देखें – शांता कुमारी, आर, इबिदः सिंह, एस.एस. तथा सुन्दरम्, एस., इमरजिंग हरिजन इलिटः ए स्टडी ऑफ देअर आइडेन्टिटी, न्यू देहली, उप्पल पब्लिशिंग हाउस, 1987

तालिका संख्या 5.3.3

शिक्षा में पीढ़ी दर गतिशीलता

क्रमांक	शिक्षा	पिता	अभिजन
1.	अशिक्षित	42 (28.00)	–
2.	साक्षर	53 (35.33)	–
3.	प्राथमिक	15 (10.00)	01 (0.67)
4.	मिडिल	15 (10.00)	–
5.	माध्यमिक	08 (5.33)	–
6.	उच्च माध्यमिक	02 (1.33)	02 (1.33)
7.	स्नातक	04 (2.67)	08 (5.33)
8.	स्नातकोत्तर (एम.ए./एम.काम./एम.एस.सी.)	01 (0.67)	58 (38.67)
9.	स्नातकोत्तर (एम.फिल/पी.एच.डी.)	–	20 (13.33)
10.	व्यावसायिक (एल.एल.बी./एम.बी.बी.एस./बी.ई.)	04 (2.67)	61 (40.67)
11.	जानकारी नहीं	06 (4.00)	–
	योग	**150 (100.00)**	**150 (100.00)**

यद्यपि दलित अभिजनों के शत–प्रतिशत बच्चे शिक्षित हैं, लेकिन शिक्षा की दृष्टि से दलितों की सामान्य जनसंख्या की स्थिति अत्यधिक निराशाजनक है। ग्रामीण स्तर की महिला साक्षरता दर तो अत्यधिक कम है। प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि इतनी कम दर के लिये कौन से कारक उत्तरदायी हैं?

दलितों के निम्न साक्षरता दर के प्रमुख कारणों में सर्वप्रथम अभिप्रेरण की कमी हैं। दलित वर्ग के लोग आज भी शिक्षा पर समुचित ध्यान नहीं देते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी यह धारणा व्याप्त है कि शिक्षा का महत्व केवल बड़ी एवं उच्च जातियों के लिये ही अधिक है।

द्वितीय, आर्थिक पिछड़ेपन के कारण छोटे–छोटे बच्चों को ही खासकर, बालिकाओं को कृषि कार्य, पशुपालन एवं छोटे भाई–बहनों की देखभाल में लगा दिया जाता है।

तृतीय, प्रायः यह देखा गया है कि बच्चे नटखट स्वभाव के होते हैं, चूँकि माता–पिता दोनों को कृषि कार्य, मजदूरी या अन्य रोजगार की तलाश में घर से बाहर जाना पड़ता है, अतः बच्चों के स्कूल जाने पर निगरानी रखने वाला कोई नहीं होता है। दलितों के सम्बन्ध में एक आम समस्या यह है कि लगभग 88.68 प्रतिशत बच्चे हाईस्कूल आते–आते पढ़ाई छोड़ देते हैं, जिसके लिये पारिवारिक, आर्थिक एवं सामाजिक कारण उत्तरदायी हैं।

5.4 व्यवसाय

भारतीय समाज में परम्परागत रूप से जाति एवं व्यवसाय में घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। चारों वर्णों के अनुसार पृथक–पृथक व्यवसायों का निर्धारण किया गया है एवं आगे चलकर व्यावसायिक भिन्नता के कारण अनेक जातियों एवं उपजातियों का जन्म हुआ।[28] लेकिन बाद में जिन गन्दे, अस्वच्छ एवं घृणित व्यवसायों को अस्पृश्यों के लिये अनिवार्य बना दिया, प्रारम्भ में ऐसी अनिवार्यता नहीं थी।[29] अर्थात जाति अपने उद्गम से व्यावसायिक नहीं है।[30]

[28] श्रीवास्तव, एस.एन., 1980, इबिद, पृ. 53
[29] अम्बेडकर, बी.आर., अछूत कौन और कैसे? भदन्त आनन्द कौसल्यान (अनुवादक), लखनऊ, कल्चरल पब्लिशर्स, 1990, पृ. 82
[30] धूर्ये, जी.एस., कास्ट, क्लास एण्ड आक्यूपेशन, बॉम्बे पापुलर प्रकाशन, 1961, पृ. 215

इतिहास में अनेक ऐसे उदाहरण मिलते हैं जिसमें अनेक जातियों के सदस्य एक ही व्यवसाय करते थे। बहुसंख्यक जातियों में से प्रत्येक का अपना परम्परागत व्यवसाय था और इसलिये वही उस जाति के सदस्यों का वंशानुगत एवं जन्म–जात व्यवसाय निर्धारित हो गया। इस व्यवसाय को दूसरे व्यवसाय की खोज में त्याग देना यदि पापपूर्ण नही तो कम से कम अनुचित अवश्य समझा जाता था।

दलितों में व्यावसायिक गतिशीलता के अध्ययन हेतु अभिजन एवं उनके पिता की आर्थिक एवं व्यावसायिक पृष्ठभूमि की जानकारी महत्वपूर्ण है। व्यवसाय के साथ आय, प्रतिष्ठा, शक्ति, अधिकार, सुरक्षा, भूमिका आदि कई ऐसे कारक जुड़े हुए हैं जिनसे अभिजनों की मूल्य उन्मुखता एवं व्यावसायिक महत्वाकांक्षायें निर्धारित होती हैं। व्यवसाय से ही व्यक्ति के आचार–विचार, रहन–सहन, जीवन–शैली एवं कार्य–प्रणाली का भी निर्धारण होता है।

व्यवसाय का वर्गीकरण करना अत्यन्त कठिन कार्य है, क्योंकि व्यवसायों की प्रकृति भिन्न–भिन्न होती है तथा कभी–कभी एक व्यक्ति एक साथ कई व्यवसाय करता है। उदाहरण के लिये एक कृषक कृषि के साथ–साथ व्यापार भी करे अथवा अपने परम्परागत व्यवसाय के साथ–साथ कोई शिष्ट व्यवसाय भी। इसके अलावा व्यवसाय की प्रकृति परिवर्तनशील नहीं होती है, अर्थात व्यक्ति समय, स्थान एवं परिस्थितियों के अनुरूप व्यवसाय परिवर्तित करता रहता है। यहाँ व्यवसायों को निम्न चार श्रेणियों में वर्गीकृत करके व्यावसायिक गतिशीलता का अध्ययन किया गया है।

5.4.1 पिता का व्यवसाय

एक प्रसिद्ध कहावत है कि “वैद्य का बेटा वैद्य ही होता है।” पिता का व्यवसाय व्यक्ति के पद और प्रस्थिति में एक महत्वपूर्ण कारक है,

क्योंकि बच्चे सर्वप्रथम एवं सर्वाधिक समय अपने पिता के व्यवसाय के सम्पर्क में ही रहते हैं। यह व्यवसायिक समाजीकरण तथा मूल्यों के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देता है। पारिवारिक अर्थव्यवस्था एवं व्यावसायिक उन्नति के आधार पर अभिजनों के विचारों, मनोवृत्तियों एवं शैक्षणिक स्तर का अर्थपूर्ण मूल्यांकन किया जा सकता है।

(1) परम्परागत व्यवसाय

दलितों से सम्बन्धित व्यवसाय से तात्पर्य उन व्यवसायों से है जिन्हें प्रायः घृणित, अस्वच्छ एवं हीन माना जाता है तथा इन व्यवसायों में लगे व्यक्तियों को अस्पृश्य समझा जाता है। इन व्यवसायों में चर्मकार, सफाईकर्मी या मेहतर, बंधुआ मजदूर या श्रमिक, चौकीदार आदि शामिल हैं।

(2) शिष्ट व्यवसाय

शिष्ट व्यवसाय से तात्पर्य ऐसे व्यवसायों से है जो कि परम्परागत एवं घृणित व्यवसायों से अलग हैं तथा जिन्हें समाज में सम्मान–सूचक दृष्टि से देखा जाता है, यथा– प्रशासक, राजनेता, लिपिक, ठेकेदार, कृषक, शिक्षक व चपरासी आदि।

(3) पेशेवर व्यवसाय

पेशेवर व्यवसाय में चिकित्सक एवं अभियन्ता स्तर के अधिकारियों को शामिल किया गया है।

(4) बौद्धिक व्यवसाय

कुछ व्यवसायों को बौद्धिक वर्ग में रखा गया है, जिनमें विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय शिक्षक, न्यायाधीश, वकील, लेखक, कवि, एवं पत्रकार शामिल हैं।

तालिका संख्या 5.4.1

अभिजनों के पिता का व्यवसाय

क्रमांक	व्यवसाय	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	परम्परागत व्यवसाय	62	41.33
2.	शिष्ट व्यवसाय	77	51.33
3.	पेशेवर व्यवसाय	–	–
4.	बौद्धिक व्यवसाय	–	–
5.	उल्लेख नहीं	11	7.34
	योग	**150**	**100.00**

तालिका में दिये गये आँकडों से स्पष्ट होता है कि 41.33 प्रतिशत अभिजनों के पिता परम्परागत तथा 51.33 प्रतिशत अभिजनों के पिता शिष्ट व्यवसाय में रहे हैं। पिता की पीढ़ी में परम्परागत व्यवसाय के प्रतिशत में कमी तथा शिष्ट व्यवसाय में वृद्धि दिखाई देती है। लेकिन पिता के स्तर पर भी एक भी अभिजन के पिता पेशेवर या बौद्धिक व्यवसाय में नहीं आ सके हैं। शिष्ट व्यवसाय में भी ज्यादातर अभिजनों के पिता कृषि, अध्यापक, लिपिक, चपरासी, ठेकेदारी, व्यापार आदि से जुड़े थे एवं प्रशासनिक अधिकारी एक भी नहीं था।

5.5 पीढ़ी दर पीढ़ी व्यावसायिक गतिशीलता

व्यक्ति द्वारा किसी एक व्यवसाय को छोड़कर दूसरे व्यवसाय में जाने की प्रक्रिया व्यावसायिक गतिशीलता को सूचित करती है। यह व्यावसायिक परिवर्तनशीलता वर्तमान व्यवसाय से निम्न अथवा उच्च दोनों प्रकार की हो सकती है। यदि एक ब्राह्मण 'अध्ययन–अध्यापन' के व्यवसाय को त्यागकर कृषि या व्यापार करता है तो यह 'क्षैतिजीय गतिशीलता' को इंगित करती है, दूसरी ओर यदि एक दलित वर्ग का सदस्य सफाई, चर्मकार आदि के व्यवसाय को त्यागकर कृषि, शिक्षक या ठेकेदारी का व्यवसाय करता है, तो यह 'ऊर्ध्वीय गतिशीलता' कहलाती है। अपनी जाति के लिये निर्धारित

व्यवसाय से उच्च व्यवसाय में प्रविष्ट होना व्यक्ति की ऊर्ध्व व्यावसायिक एवं सामाजिक गतिशीलता का मापदण्ड है।[31] डा. राधाकमल मुखर्जी (1965), एस. सी. दूबे (1967), एम.एन. श्रीनिवास (1972) आदि ने अपने अध्ययनों के आधार पर इस बात का संकेत दिया है कि निम्न जातियों में परम्परागत व्यवसाय त्यागने की प्रवृत्ति बढ़ी है। कुछ अन्य अध्ययनों, यथा– सच्चिदानन्द (1977), अब्बासायूलू (1978), राय तथा सिंह (1987), एस. शेल्वानाथन (1989), रवि प्रताप सिंह (1989) आदि से भी यह स्पष्ट हुआ है कि दलितों में ऊर्ध्वीय गतिशीलता दिखाई दे रही है तथा यह अन्तरपीढ़ीय एवं अन्तःपीढ़ीय गतिशीलता दोनों रूपों में दिखाई दे रही है।

तालिका संख्या 5.5.1

व्यवसाय में पीढ़ी दर पीढ़ी गतिशीलता

क्रमांक	व्यवसाय	पिता	अभिजन
1.	परम्परागत व्यवसाय	62 (41.33)	–
2.	शिष्ट व्यवसाय	77 (51.33)	45 (30.00)
3.	पेशेवर व्यवसाय	–	43 (28.67)
4.	बौद्धिक व्यवसाय	–	62 (41.33)
5.	उल्लेख नहीं	11 (7.34)	–
	योग	150 (100.00)	150 (100.00)

तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट है कि हमीरपुर में अभिजनों की तीन पीढ़ियों में परम्परागत व्यवसाय को त्यागने तथा शिष्ट व्यवसाय अपनाने की प्रवृत्ति दिखलाई पड़ती है। अभिजन स्तर पर परम्परागत व्यवसाय का

[31] गोयल, एस.के., 1973–74, इबिद, पृ. 116

प्रतिशत शून्य है जबकि शिष्ट व्यवसाय में 30 प्रतिशत पेशेवर व्यवसाय में 28.67 प्रतिशत एवं दलित 41.33 प्रतिशत अभिजन बौद्धिक व्यवसाय में हैं। अतः आंकड़ो से स्पष्ट है कि पीढ़ी दर पीढ़ी व्यावसायिक गतिशीलता परिलक्षित हो रही है।

5.6 सम्पत्ति

अधिकांश समाजशास्त्रियों, यथा– सच्चिदानन्द (1977), सिंह तथा सुन्दरम(1987), राय तथा सिंह (1987), वेंकटेश्वरलू (1990) आदि ने अपने अध्ययन में पाया कि अन्य कारकों के साथ सम्पत्ति भी एक व्यक्ति विशेष को नेतृत्व या 'अभिजन' प्रस्थिति तक पहुँचने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। सम्पत्ति से जीवन–शैली के निर्धारण के साथ ही साथ सामाजिक मूल्यों को दिशा मिलती है, महत्वाकांक्षायें भी इससे प्रभावित होती हैं एवं जीवन–स्तर में सुधार होता है। इसी वजह से भारतीय संविधान में समस्त नागरिकों को सामाजिक आर्थिक एवं राजनैतिक न्याय प्रदान करने का लक्ष्य रखा गया है। आर्थिक न्याय का अभिप्राय है, "सम्पत्ति सम्बन्धी भेदभाव इतना अधिक नहीं हो कि धन–सम्पदा के आधार पर व्यक्ति–व्यक्ति के मध्य विभेद की दीवार खड़ी हो जाये और कुछ धनी व्यक्तियों द्वारा गरीबों एवं असहायों के श्रम का शोषण किया जाये या उनके जीवन पर अनुचित अधिकार स्थापित कर लिया जावे।" एक निर्धन व्यक्ति का धर्म, ईमान और नैतिकता सभी कुछ रोटी तक सीमित हो जाती है। पंडित नेहरू के शब्दों में "भूखे एवं निर्धन व्यक्ति के लिये मत का कोई मूल्य नहीं होता है।" इसलिए डा. अम्बेडकर कहते थे कि "यदि प्रजातन्त्रीय आर्थिक ढ़ाँचा बनाना है और सबका कल्याण करना है तो जाति, वर्ण एवं अस्पृश्यता की भावनाओं का अन्त करना जरूरी है। यदि विवेकयुक्त समाज बनाना है तो परम्परागत मूल्यों की समीक्षा कर उन्हीं मूल्यों को अपनाना चाहिये जो आज उपयुक्त एवं लाभप्रद हैं।"[32]

---

[32] जाटव, डी.आर., द सोशियल फिलासफी ऑफ बी.आर. अम्बेडकर, आगरा, फोनिक्स पब्लिशिंग हाउस, 1965, पृ. 91

5.6.1 पिता की सम्पत्ति

पिता की आर्थिक स्थिति बच्चों के अभिजन स्तर तक आने तथा ऊर्ध्व गतिशीलता का एक प्रमुख कारक है। लास्की के शब्दों में "आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में गरीब अभिभावकों की अपेक्षा धनी अभिभावकों के बच्चे ज्यादा लाभदायक रहते हैं।"[33] बिहार के अध्ययन में सच्चिदानन्द (1977)[34] आन्ध्र प्रदेश के अध्ययन में अब्बासायूलू (1978)[35] एवं उत्तर प्रदेश के एक अध्ययन में राय था सिंह (1987)[36] ने पाया कि पिता की अच्छी आर्थिक स्थिति बच्चों को उच्च शिक्षा एवं पद प्राप्त करने में प्रमुख भूमिका अदा करती है।

तालिका संख्या 5.6.1

अभिजनों के पिता की सम्पत्ति

क्रमांक	सम्पत्ति	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	सम्पत्तिहीन	19	12.67
2.	10 बीघा भूमि या कम भूमि	24	16.00
3.	मकान	39	26.00
4.	मकान एवं 10 बीघा तक भूमि	28	18.67
5.	मकान एवं 20 बीघा तक भूमि	20	13.33
6.	मकान एवं 21 बीघा से अधिक भूमि	18	12.00
7.	उल्लेख नहीं	02	1.33
	योग	150	100.00

तालिका में अभिजनों के पिता की सम्पत्ति के आँकड़े दर्शाये गये हैं। तथ्यों से स्पष्ट है कि 12.67 प्रतिशत अभिजनों के पिता सम्पत्तिहीन हैं तथा 16 प्रतिशत अभिजनों के पिता के पास 10 बीघा से कम भूमि रही है। 26 प्रतिशत अभिजनों के पिता के पास मकान, 18.67 प्रतिशत अभिजनों के पिता के पास मकान के साथ 10 बीघा से कम भूमि, 13.33 प्रतिशत अभिजनों

---

[33] लास्की, हैराल्ड जे., ग्रामर ऑफ पालिटिक्स, लंदन, जार्ज एलेन एण्ड अनविन लि. 1950, पृ. 154–157

[34] सच्चिदानन्द, 1977, इबिद, पृ. 4

[35] अब्बासायूलू, वाई.बी., 1978, इबिद, पृ. 96

[36] राय, रामाश्रय तथा सिंह, वी.बी., 1987, इबिद., पृ. 124–126

के पास मकान एवं 20 बीघा तक भूमि तथा 12 प्रतिशत अभिजनों के पिता के पास मकान एवं 20 बीघा से अधिक भूमि रही है। इन तथ्यों से स्पष्ट है कि पितामह से पिता की पीढ़ी में सम्पत्ति बढ़ने का क्रम है।

5.7 बच्चों की शिक्षा एवं व्यवसाय के प्रति अभिजनों की आकांक्षा

उच्च पद (अभिजन) प्राप्त करने के बाद लगभग सभी व्यक्ति यह सोचते हैं कि उनके बच्चे भी उच्च पद प्राप्त करने में सफल हों। कोई भी अभिजन यह नहीं चाहता है कि उनके बच्चे अशिक्षित रहें या परम्परागत व्यवसाय को ही अपनायें। हम एक उपकल्पना लेकर चल रहे हैं कि हमीरपुर में दलित अभिजन अपने बच्चों को उच्च शिक्षा दिलाकर अच्छे व्यवसाय दिलाने के आकांक्षी हैं। इसी उपकल्पना के परीक्षण के लिये अभिजनों से अपने बच्चों की शिक्षा एवं व्यवसाय के प्रति आकांक्षा की जानकारी की गई है। शिक्षा, व्यवसाय और आर्थिक स्थिति तीन ऐसे महत्वपूर्ण चर हैं जिन पर व्यक्ति विशेष का जीवन अवसर निर्भर करता है। उच्च एवं अच्छी शिक्षा उच्च पद दिलाने में सहायक है तथा अच्छे व्यवसाय की आमदनी से आर्थिक स्थिति में सुधार आता है। सामान्य दलित जातियों के बच्चों को जीवन में आगे बढ़ने के अधिक अवसर प्राप्त होते हैं।

तालिका संख्या 5.7.1

बच्चों की शिक्षा के प्रति अभिजनों की आकांक्षा

क्रमांक	शिक्षा	लड़कों के लिये	लड़कियों के लिये
1.	स्नातक	6 (4.00)	21 (14.00)
2.	स्नातकोत्तर	48 (32.00)	55 (36.67)
3.	व्यावसायिक	37 (24.67)	25 (16.67)
4.	स्नातकोत्तर एवं व्यावसायिक	46 (30.67)	19 (12.66)
5.	अन्य	02 (1.33)	06 (4.00)
6.	बच्चे नहीं हैं	11 (7.33)	24 (16.00)
	योग	**150 (100.00)**	**150 (100.00)**

तालिका में शिक्षा सम्बन्धी आँकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि 32 प्रतिशत अभिजन लड़कों के लिए एवं 36.67 प्रतिशत लड़कियों के लिए स्नातकोत्तर स्तर तक की शिक्षा दिलाने के आकांक्षी हैं। लड़कों के लिए 4 प्रतिशत तथा लड़कियों के लिए 14 प्रतिशत अभिजन स्नातक स्तर तक की शिक्षा दिलाने के पक्ष में हैं। 24.67 प्रतिशत अभिजन लड़कों को एवं 16.67 प्रतिशत लड़कियों को व्यावसायिक शिक्षा दिलाने के आकांक्षी हैं जबकि लड़के एवं लड़कियों के लिए क्रमशः 30.67 प्रतिशत एवं 12.66 प्रतिशत अभिजन स्नातकोत्तर के साथ–साथ व्यावसायिक शिक्षा दिलाना चाहते हैं। 7. 33 प्रतिशत अभिजनों के लड़के तथा 16 प्रतिशत अभिजनों के लड़कियाँ नहीं हैं। अतः इन तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि शत प्रतिशत अभिजन अपने बच्चों को उच्च स्तर की शिक्षा दिलाने के आकांक्षी हैं। साथ

ही अभिजन लड़के एवं लड़कियों को समान स्तर की शिक्षा दिलाने के पक्ष में हैं।

तालिका 5.7.2

बच्चों के व्यवसाय के प्रति अभिजनों की आकांक्षा

क्रमांक	व्यवसाय	लड़कों के लिए	लड़कियों के लिए
1.	परम्परागत व्यवसाय	—	05 (3.33)
2.	शिष्ट व्यवसाय	36 (24.00)	22 (14.67)
3.	पेशेवर व्यवसाय	32 (21.33)	32 (21.33)
4.	बौद्धिक व्यवसाय	07 (4.67)	10 (6.67)
5.	शिष्ट एवं पेशेवर व्यवसाय	37 (24.67)	19 (12.67)
6.	शिष्ट एवं पेशेवर एवं बौद्धिक व्यवसाय	17 (11.33)	15 (10.00)
7.	कह नहीं सकते	10 (6.67)	23 (15.33)
8.	बच्चे नहीं हैं	11 (7.33)	24 (16.00)
	योग	**150 (100.00)**	**150 (100.00)**

तालिका में प्रदर्शित तथ्यों से स्पष्ट है कि अभिजन परम्परागत व्यवसायों को पूर्णतः त्यागने के पक्ष में हैं तथा कोई भी अभिजन अपने लड़कों को परम्परागत व्यवसाय में नहीं लगाना चाहता, क्योंकि 3.33 प्रतिशत अभिजन लड़कियों को परम्परागत व्यवसाय को सौंपने के पक्ष में हैं। 24 प्रतिशत अभिजन अपने लड़कों को तथा 14.67 प्रतिशत लड़कियों को शिष्ट

व्यावसायिक (प्रशासनिक अधिकारी) दिलाना चाहते हैं। लड़के एवं लड़कियों को क्रमशः 21.33 प्रतिशत अभिजन पेशेवर व्यवसाय एवं 4.67 तथा 6.67 प्रतिशत अभिजन बौद्धिक व्यवसाय में लाने के आकांक्षी हैं। शिष्ट एवं पेशेवर दोनों प्रकार के व्यवसाय की आकांक्षा लड़कों के लिए 24.67 प्रतिशत एवं लड़कियों के लिए 12.67 प्रतिशत अभिजन रखते हैं। इसी प्रकार से 11.33 प्रतिशत अभिजन लड़कों के लिए तथा 10 प्रतिशत लड़कियों के लिए शिष्ट, पेशेवर एवं बौद्धिक तीनों प्रकार के व्यवसायों में से जो आसानी से उपल्ब्ध हो जाये, के आकांक्षी हैं। बच्चों की शिक्षा एवं रूचि को ध्यान में रखते हुए 6.67 प्रतिशत अभिजन लड़कों के एवं 15.33 प्रतिशत अभिजन अपनी लड़कियों के व्यवसाय के सम्बन्ध में कुछ भी कहने की स्थिति में नहीं हैं।

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि ज्यादातर अभिजन अपने बच्चों को पेशेवर एवं प्रशासनिक स्तर के पदों पर लगाने के आकांक्षी हैं, जिसके सामान्यतः कारण निम्न हैं–

1. प्रशासनिक सेवा के अधिकारियों को बहुत अधिक अधिकार प्राप्त होते हैं। इन पदों पर पदस्थापित दलित वर्ग के सदस्य अपनी जातियों के लाभार्थ अधिक सहयोग कर सकते हैं।
2. आज समाज में बौद्धिक वर्ग की अपेक्षा पेशेवर एवं प्रशासनिक अधिकारियों को ज्यादा सम्मान प्राप्त होता है।
3. पेशेवर व्यवसाय, विशेषकर चिकित्सक निजी प्रैक्टिस करके अच्छी आमदनी प्राप्त कर सकते हैं।

अब्बासायूलू (1978) एवं सिंह (1989) के अध्ययन में भी दलित के अभिजनों की इसी प्रकार की आकांक्षा थी कि उनके बच्चे पेशेवर एवं शिष्ट व्यवसायों को ही अपनायें।[37]

---

[37] अब्बासायूलू, वाई.बी., 1978, इबिद, पे. 89–90: सिंह, रवि प्रताप, 1989 इबिद, पृ. 143

5.8 वर्तमान पद व्यवसाय एवं आमदनी के प्रति अभिजन दृष्टिकोण

पद व्यवसाय की प्रकृति प्रमुख रूप से व्यक्ति के सामाजिक मूल्यों, व्यक्तित्व, विचारों एवं जीवन शैली को निर्धारित करती है। व्यक्ति का अधिकांश समय व्यावसायिक क्रियाकलापों में ही व्यतीत होता है। दलित अभिजनों का परम्परागत व्यवसायों के प्रति पूर्णतः नकारात्मक रूख रहा है। उत्तर प्रदेश, बिहार एवं मध्य प्रदेश के विधानमण्डलीय अभिजनों से सम्बन्धित सिंह[38] के अध्ययन में विधायकों ने स्वीकार किया है कि "आदर्श व्यवसाय वह है जो प्रतिष्ठा में वृद्धि करे एवं जो व्यवसाय पैसा कमाने की दृष्टि से भी अच्छा हो।" व्यवसाय के प्रति संतुष्टि व्यावसायिक गतिशीलता को प्रभावित करती है। मनोवैज्ञानिकों तथा श्रम अर्थशास्त्रियों ने कार्य पसन्दगी में सन्तुष्टि के आर्थिक तत्वों पर विशेष बल दिया है। वाटसन (1939) तथा हाउजर (1940) ने अपने अध्ययनों मं आर्थिक साधनों द्वारा प्राप्त सन्तुष्टि का अनुभव किया है और पाया है कि निम्न आय वालों की अपेक्षा अधिक आय वाले व्यक्ति ज्यादा संतुष्ट रहते हैं।

[38] सिंह, रवि प्रताप, 1989, इबिद, पृ. 149

तालिका 5.8.1

वर्तमान पद के प्रति अभिजनों का दृष्टिकोण

क्रमांक	अभिजन श्रेणी	पूर्णतः संतुष्ट	संतुष्ट	असंतुष्ट	योग.
1.	शैक्षणिक	11 (20.82)	33 (62.26)	09 (16.92)	53 (100.00)
2.	व्यावसायिक	17 (32.69)	30 (57.69)	05 (9.62)	52 (100.00)
3.	नौकरशाह	14 (42.43)	18 (54.54)	01 (3.03)	33 (100.00)
4.	राजनैतिक	06 (50.00)	05 (41.67)	01 (8.33)	12 (100.00)
	योग	**48 (32.00)**	**86 (57.33)**	**16 (10.67)**	**150 (100.00)**

तालिका में प्रदर्शित तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 32 प्रतिशत अभिजन अपने वर्तमान पद से पूर्णतः संतुष्ट, 57.33 प्रतिशत असंतुष्ट हैं। पृथक श्रेणीवार विश्लेषण से स्पष्ट होती है कि 20.82 प्रतिशत शैक्षणिक अभिजन पूर्णतः संतुष्ट, 62.26 प्रतिशत संतुष्ट एवं 16.92 प्रतिशत असंतुष्ट हैं। दूसरी ओर व्यावसायिक अभिजनों में क्रमशः 32.69, 57.62 एवं 9. 62 प्रतिशत अभिजन पूर्णतः संतुष्ट, संतुष्ट एवं असंतुष्ट हैं। नौकरशाह अभिजनों में से 42.43 प्रतिशत पूर्णतः संतुष्ट, 54.54 प्रतिशत संतुष्ट एवं मात्र 3.03 प्रतिशत असंतुष्ट हैं पूर्णतः राजनैतिक अभिजनों का प्रतिशत 50, सतुष्टों का प्रतिशत 41.67 तथा असंतुष्टों का प्रतिशत 8.33 है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि सर्वाधिक असंतुष्ट शैक्षणिक अभिजन हैं एवं सबसे कम असंतुष्ट नौकरशाह एवं राजनैतिक अभिजन हैं।

तालिका 5.8.2

वर्तमान पद की आमदनी के प्रति अभिजनों का दृष्टिकोण

क्रमांक	अभिजन श्रेणी	पूर्णतः संतुष्ट	संतुष्ट	असंतुष्ट	योग
1.	शैक्षणिक	13 (24.50)	30 (56.60)	10 (18.00)	53 (100.00)
2.	व्यावसायिक	11 (21.15)	37 (71.15)	01 (7.70)	52 (100.00)
3.	नौकरशाह	10 (30.30)	22 (66.67)	01 (3.03)	33 (100.00)
4.	राजनैतिक	05 (41.68)	04 (33.32)	03 (25.00)	12 (100.00)
	योग	**39 (26.00)**	**93 (62.00)**	**18 (12.00)**	**150 (100.00)**

तालिका में दलित अभिजनों का अपने वर्तमान पद की आमदनी के प्रति दृष्टिकोण सम्बन्धी तथ्यों का उल्लेख किया गया है। प्रदर्शित आँकड़ों से स्पष्ट होता है कि 26 प्रतिशत अभिजन अपने वर्तमान पद की आमदनी से पूर्णतः संतुष्ट, 62 प्रतिशत संतुष्ट एवं 12 प्रतिशत असंतुष्ट हैं। अभिजन श्रेणीवार तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि आमदनी से पूर्णतः संतुष्ट अभिजनों में शैक्षणिक 24.50 प्रतिशत, व्यावसायिक 21.15 प्रतिशत, नौकरशाह 30.30 प्रतिशत एवं राजनैतिक अभिजन 41.68 प्रतिशत हैं। 56.60 प्रतिशत अभिजन शैक्षणिक, 81.15 व्यावसायिक, 66.67 प्रतिशत नौकरशाह एवं 33.32 प्रतिशत राजनैतिक अपनी वर्तमान आमदनी से संतुष्ट हैं। असंतुष्ट अभिजनों में 18.90 प्रतिशत शैक्षणिक, 7.70 प्रतिशत व्यावसायिक 3.03 प्रतिशत नौकरशाह एवं 25.00 प्रतिशत राजनैतिक अभिजन हैं।

तालिका संख्या 5.8.3 में अभिजनों के वर्तमान पद एवं उनकी आमदनी से संतुष्टि सम्बन्धी विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। प्रदर्शित तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 32 प्रतिशत अभिजन अपने वर्तमान पद से एवं 26 प्रतिशत आमदनी से पूर्णतः संतुष्ट हैं। 57.33 प्रतिशत अभिजन अपने एवं 62 प्रतिशत आमदनी से संतुष्ट हैं जबकि 10.67 प्रतिशत अभिजन पद एवं 12 प्रतिशत पद की आमदनी से संतुष्ट हैं।

तालिका 5.8.3

पद एवं आमदनी सम्बन्धी दृष्टिकोण का तुलनात्मक विश्लेषण

क्रमांक	अभिजनों की राय	पद	आय
1.	पूर्णतः संतुष्ट	48 (32.00)	39 (26.00)
2.	संतुष्ट	86 (57.33)	93 (62.00)
3.	असंतुष्ट	16 (10.67)	18 (12.00)
	योग	**150 (100.00)**	**150 (100.00)**

5.9 असंतुष्ट अभिजनों की आकांक्षा

कुल 150 अभिजनों में से 16 अपने वर्तमान पद एवं 18 पद की आमदनी से असंतुष्ट हैं। इसी वजह से यहाँ यह उल्लेख किया जा रहा है कि उक्त असंतुष्ट अभिजनों की क्या आकांक्षा है?

5.9.1 शैक्षणिक अभिजन

पद एवं आय से सर्वाधिक असंतुष्ट अभिजन 53 में से 10 शैक्षणिक श्रेणी के हैं। 10 में से 4 महाविद्यालयी व्याख्याता प्रशासनिक सेवा में

जाने के इच्छुक हैं। दो अभिजनों में समाज सेवा की अपनी इच्छा व्यक्त की है लेकिन वर्तमान पद को समाज सेवा में बाधक मानते हैं। इसी प्रकार से दो अन्य अभिजन राजनीति में प्रवेश कर सांसद या विधायक निर्वाचित होना चाहते हैं। एक महाविद्यालय प्राध्यापक ने अपने इसी व्यवसाय में रहते हुए विश्वविद्यालय शिक्षक बनने की इच्छा प्रकट की है तथा एक विज्ञान प्राध्यापक चिकित्सक बनना चाहते थे, लेकिन सफलता नहीं मिल सकी जिससे वे वर्तमान पद एवं आय से असंतुष्ट हैं।

5.9.2 व्यावसायिक अभिजन

कुल 52 व्यावसायिक अभिजनों में से 5 वर्तमान पद से एवं 4 पद की आमदनी से स्वयं को असंतुष्ट मानते हैं। इनमें से दो प्रशासनिक पदों पर जाना चाहते हैं तथा एक समाज सेवा के इच्छुक हैं। तीन व्यावसायिक अभिजन स्वयं का व्यवसाय आरम्भ करने के आकांक्षी हैं। तीन अभिजन अपने वर्तमान व्यवसाय में ही पदोन्नत होकर उच्च स्तर के पद प्राप्त करने के आकांक्षी हैं।

5.9.3 नौकरशाह अभिजन

नौकरशाही अभिजनों की श्रेणी में 33 में से केवल 2 अभिजन ही स्वयं को पद या आमदनी से असंतुष्ट बताते हैं। इनमें से एक राजस्थान प्रशासनिक सेवा से भारतीय प्रशासनिक सेवा में जाना चाहते हैं तथा एक अन्य ने स्वयं के व्यवसाय की या व्यापार की इच्छा व्यक्त की है।

5.9.4 राजनैतिक अभिजन

12 राजनैतिक अभिजनों में से 4 स्वयं को असंतुष्ट बताया है जिनमें से एक अपने पद से एवं तीन पद की आमदनी से असंतुष्ट हैं। रोचक

तथ्य यह है कि चारों ही राजनेता असंतुष्ट होते हुए भी राजनीति को छोड़कर अन्य व्यवसायों में जाने के आकांक्षी नहीं है।

दलित अभिजनों में व्यावसायिक गतिशीलता सम्बन्धी इस अध्याय में समय सापेक्ष व्यावसायिक गतिशीलता का विश्लेषण किया गया है। साथ ही अन्तः एवं अन्तर पीढ़ीय गतिशीलता की जानकारी के लिए पिता एवं अभिजनों की तीन पीढ़ियों के व्यवसाय, शिक्षा एवं सम्पत्ति का तुलनात्मक विवेचन भी किया गया है। शिक्षा सम्बन्धी तथ्यों से स्पष्ट है कि 28 प्रतिशत के पिता निरक्षर थे। स्वयं अभिजन एवं उनके बच्चे शत प्रतिशत शिक्षित हैं या शिक्षण संस्थाओं में अध्ययनरत हैं। व्यवसाय में पीढ़ी दर पीढ़ी गतिशीलता सम्बन्धी आँकड़ो से ज्ञात होता है कि 41.33 प्रतिशत अभिजनों के पिता परम्परागत व्यवसाय से सम्बद्ध रह हैं, जबकि अभिजन एवं उनके बच्चों की पीढ़ी में यह प्रतिशत शून्य है। इसी प्रकार से स्पत्ति सम्बन्धी तीन पीढ़ियों के तथ्यों से भी ज्ञात होता है कि पिता से आभेजन की पीढ़ी में सम्पत्ति में बढोत्तरी का क्रम रहा है।

00000————00000

अध्याय - 6

दलितों के विकास में दलित अभिजनों की भूमिका

- जातीय संगठन
- अभिजन तथा संगठनात्मक जानकारी
- संगठनात्मक वर्गीकरण तथा अभिजन सदस्यता
- दलितोत्थान में जातीय संगठनों की भूमिका
- अभिजनों की दृष्टि में जातीय संगठनों की प्रमुख समस्याएँ
- समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव
- दलितों के विकास में प्रमुख बाधाएँ
- अभिजन एवं अस्पृश्यता
- अभिजन तथा सरकारी नीतियाँ

6. दलितों के विकास में दलित अभिजनों की भूमिका

पूर्व अध्याय में दलितों की व्यावसायिक गतिशीलता का उल्लेख किया गया है। प्रस्तुत अध्याय में हमीरपुर जनपद में दलितों की भूमिका एवं दलितों की समस्याओं के प्रति दृष्टिकोण की जानकारी प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

दलित अभिजनों के सम्बन्ध में प्रायः एक आम धारणा व्याप्त है कि "अभिजन श्रेणी में आने के बाद व्यक्ति 'परकीकृत' हो जाता है तथा अपने उद्भव स्थल के प्रति सचेत होकर दायित्व की चिन्ता नहीं करता है।[1] हरिजन अभिजनों के सम्बन्ध में सच्चिदानन्द लिखते हैं, "हरिजनों में से एक शिक्षित अभिजन उभर कर आता है। यह शेष समुदाय के लिये एक 'सन्दर्भ समूह' तथा भावी परिवर्तनों का अभिकर्ता बन सकता है। दुर्भाग्यवश ऐसा हो नहीं पाता। अभिजन पद प्राप्ति के बाद वह अपने भूतकाल, निम्न उत्पत्ति एवं जाति के सम्बन्धी सभी बातों को भूलना चाहता है। हरिजन अभिजन अपने समुदाय के लोगों की अपेक्षा हिन्दू जातियों के अधिक निकट आना चाहता है।[2] इसी प्रकार का उल्लेख करते हुए खान ने अपने अध्ययन "शिड्यूल्ड कास्ट एण्ड देअर स्टेटस इन इंडिया" में स्पष्ट किया है कि दलित मंत्री, विधायक, अधिकारी एवं अन्य अभिजन शहरी क्षेत्रों में रहने लगे हैं। ये अभिजन महसूस करते हैं कि यदि वे ग्रामीण क्षेत्रों के अपनी जाति के सदस्यों से मेलजोल रखेंगे या ग्रामीण परिवेश, जो उनका पैतृक जन्म–स्थान है, में ही रहेंगे, तो हिन्दू जातियों की नजरों में अपनी प्रस्थिति खो देंगे। संवैधानिक

[1] सिंह, एस.एस. तथा सुन्दरम्, एस., इमरजिंग हरिजन इलिट : ए स्टडी ऑफ देयर आइडेन्टिटी, न्यू देहली, उप्पल पब्लिशिंग हाउस, 1987, पृ. 166

[2] सच्चिदानन्द, एजूकेशन एण्ड सोशियल वैल्यूज, मैन इन इंडिया

विशेषाधिकारों का लाभार्थी दलित वर्ग का होने के कारण उससे अपेक्षा की जाती है कि वह अपने वर्ग का नुमाइन्दा बनकर उसके लिए न्याय की लड़ाई लड़ेगा। लेकिन यह महसूस किया जाता है कि दलित जाति के आरक्षण लाभार्थियों में एक नवीन ब्राह्मणवाद पनप रहा है। हैराल्ड आर. इसाक ने इस सम्बन्ध में लिखा है कि " जब कोई दलित व्यक्ति सरकारी नौकरी प्राप्त कर लेता है, तो वह दूसरे वर्ग का सदस्य बन जाता है। वह दलित वर्ग के लागों के साथ घुल–मिलकर रहना ही बन्द कर देता है। प्रस्तुत विवेचन में इस धारणा के परीक्षण का भी प्रयास किया गया है।

6.1 जातीय संगठन

किसी समस्या को प्रभावी तरीके से उठाने या किसी क्षेत्र में लाभ प्राप्त करने में व्यक्तिगत प्रयास बहुत कम सफल हो पाते हैं, क्योंकि व्यक्तिगत प्रयासों में सामूहिक शक्ति एवं सौदेबाजी की क्षमता का अभाव होता है। व्यक्तिगत प्रयासों की अपेक्षा संगठित प्रयासों की सफलता के अवसर अधिक होते हैं। इसलिए विभिन्न जातियों एवं वर्गों ने स्वयं के संगठन निर्मित किये हैं, ताकि शैक्षणिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक समस्याओं के उचित निराकरण के प्रयास किये जा सकें। एक ऐसे देश में जहाँ सामाजिक उथल–पुथल एक आम बात है और जहाँ प्रत्येक समुदाय की प्रतिष्ठा और जीवन स्थितियों की स्थापना महत्वपूर्ण है, जातीय संगठनों की आवश्यकता और भी बढ़ जाती है। हजारों वर्षों से जिस भारतीय श्रमजीवी जनसाधारण को वर्णाश्रम धर्म ने शूद्र, अतिशूद्र, चाण्डाल, अवर्ण आदि अपमानजनक नाम देकर न केवल शोषित–उत्पीड़ित किया बल्कि अपमानित, लांछित एवं पददलित भी किया। उनकी सामूहिक एवं व्यक्तिगत वेदना की दबी–कुचली चेतना के प्रस्फुटन के प्रमुख साधन जातीय संगठन ही हो सकते हैं।

जातीय संगठन राजनैतिक क्षेत्र में भी व्यापक भूमिका अदा करते हैं। उड़ीसा के एक अध्ययन में बेली ने लिखा है कि जातिगत संगठनों

की प्रतिष्ठा इस कदर है कि यदि हम यह निर्णय करना चाहें कि कुछ अन्य राज्यों में क्या घटित हो रहा है, तो जातिगत संगठन जनसंख्या के एक भाग से घनिष्ठता एवं राजनैतिक लगाव के कारण भीतर तक की खबर लाने में सक्षम होते हैं।[3] लांच[4] ने भी उत्तर प्रदेश की एक निम्न जाटव जाति का विधानमण्डल में निश्चित प्रतिनिधित्व प्राप्त करने में 'जाटव वीर महासभा' की प्रभावी भूमिका का उल्लेख किया है। जाटव वीर महासभा ने अपनी पहली सफलता हासिल की जब इसके एक नेता खेमचन्द, आगरा और अवध संयुक्त प्रान्त की विधानसभा के चुनाव जीत गये। उन्होंने अपने कार्यकाल में दो प्रस्ताव पेश किये। प्रथम, संयुक्त प्रान्त के सभी जिला योजना परिषदों में एक जाटव प्रतिनिधि होना चाहिए। द्वितीय, हर जाटव छात्र को राज्य की ओर से छात्रवृत्ति मिलनी चाहिए। ये विशुद्ध संकीर्णतावादी प्रस्ताव यद्यपि पारित नहीं हो पाये, लेकिन इससे उत्तर प्रदेश की राजनीति में जाटव जाति का वर्चस्व बढ़ता चला गया।

जातीय संगठन राजनीतिक क्षेत्र में प्रभावी दबाव समूह की भूमिका अदा करते हैं। अपनी जाति के सदस्यों को संसद एवं राज्य विधान मण्डलों में उचित प्रतिनिधित्व दिलाने, मंत्री परिषद में स्थान दिलावाने एवं अन्य महत्वपूर्ण नियुक्तियों में जातीय संगठनों की अहम भूमिका होती है। पिछड़े वर्गों एवं जातियों को ऊपर उठाने में जातीय संगठन व्यापक भूमिका अदा करते हैं।

19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान शोषण एवं अस्पृश्यता के विरूद्ध जनमत तैयार किया गया एवं सदियों से पीड़ित, शोषित एवं उपेक्षित दलितों के भी जातीय संगठन निर्मित होने लगे। महात्मा ज्योतिबा फूले, श्री नारायण गुरु, डा. भीमराव अम्बेडकर, महात्मा गाँधी,

---

[3] बेली, ओ.एम., द पालिटिकल एण्ड सोशियल चेंज इन ओड़िसा, 1959, बर्कले, यूनिवर्सटी ऑफ केलीफोर्निया प्रेस, 1963, पृ. 134

[4] लांच, ओ.एम., द पालिटिक्स ऑफ अनटचेबल्टी, इन मिल्टन सिंगर तथा एस. बर्नाड (एडी.), स्ट्रेचर इन इंडियन सोसाइटी, शिकागो, एल्डाइन, 1968, पृ. 216

घासीदास आदि दलितोद्धारकों ने इन जातियों के उत्थान एवं कल्याणार्थ अनेक संगठनों की स्थापना करके चेतना पैदा की। 1927 में डा. अम्बेडकर के नेतृत्व में एक दलित जातीय संगठन 'अछूत सभा' ने दो प्रस्ताव पारित किये—

प्रथम, सभी हिन्दू जन्म से समान सामाजिक स्तर रखते हैं। इसलिये सभी हिन्दुओं के समान स्तर को बनाये रखने के उद्देश्य से राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन होने चाहिए।

द्वितीय, मनुस्मृति के कानून दलितों के लिए अपमानजनक हैं तथा ये कानून उन्हें मानवोचित अधिकारों से वंचित करते हैं। अतः यह सभा मनुस्मृति को जलाने का प्रस्ताव पारित करती है। 1927 में पारित प्रस्तावों के बावजूद सवर्ण हिन्दुओं के लिए मनुस्मृति आज भी पूजनीय ग्रन्थ है एवं असमानता, अस्पृश्यता तथा शोषण बरकरार है। अतः प्रतिस्पर्धा के इस दौर में देश के वर्तमान राजनैतिक एवं सामाजिक माहौल को ध्यान में रखते हुए जातीय संगठनों की प्रासंगिकता और भी अधिक बढ़ गई है।

6.2 अभिजन तथा संगठनात्मक जानकारी

जातीय संगठन जातिगत समस्याओं की दिशा में प्रयत्नशील रहते हैं। यदि इन जातिगत संगठनों से अभिजन वर्ग भी सम्बद्ध हो जाएँ, तो इन समस्याओं का समाधान आसान हो जाता है। दलित अभिजन दलितों तथा बाह्य परिवेश के मध्य एक सेतु का कार्य कर सकते हैं। निःसन्देह जनसाधारण के लिए अभिजन की भूमिका 'मित्र, दार्शनिक तथा निर्देशक के रूप में होनी चाहिए।[5]

---

[5] राय, रामाश्रय तथा सिंह, वी.बी., ए स्टडी ऑफ हरिजन इलिट, देहली, डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, 1987, पृ. 59

तालिका संख्या 6.2

अभिजन एवं संगठनात्मक जानकारी

क्रमांक	संगठन संख्या	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	1	40	26.67
2.	2	44	29.33
3.	3	13	8.67
4.	4	08	5.33
5.	5	04	2.67
6.	शून्य	41	27.33
	योग	**150**	**100.00**

तालिका के अवलोकन के स्पष्ट होता है कि 27.33 प्रतिशत दलित अभिजनों ने अपने आपको जातीय संगठनों की जानकारी से अनभिज्ञ बताया है, जो खेद का विषय है। इससे अभिजनों की अपने दायित्वों के प्रति उदासीनता सिद्ध होती है। उत्तर प्रदेश में दलितों से सम्बन्धित एक लम्बी सूची है, जिनमें से 27.33 प्रतिशत अभिजनों द्वारा एक भी संगठन के नाम का उल्लेख नहीं करना समाज के प्रति उनके उत्तरदायित्व की भावना पर प्रश्नचिन्ह लगाता है। 26.67 प्रतिशत अभिजनों ने एक संगठन, 29.33 प्रतिशत ने दो, 8.67 प्रतिशत ने तीन, 5.33 प्रतिशत ने चार तथा 2.67 प्रतिशत ने एक या दो संगठनों के नाम का उल्लेख किया है। यह भी अभिजन वर्ग की उदासीनता का ही प्रतीक है।

6.3 अभिजन तथा संगठनात्मक सम्बद्धता

तालिका में दलित अभिजनों की संगठनात्मक सम्बद्धता का उल्लेख किया गया है।

तालिका संख्या 6.3.1

अभिजन तथा संगठनात्मक सम्बद्धता

क्रमांक	अभिजन श्रेणी	संगठनों के सदस्य	सदस्य नहीं हैं	योग
1.	शैक्षणिक	28 (52.83)	25 (47.17)	53 (100.00)
2.	व्यावसायिक	27 (51.92)	25 (48.08)	52 (100.00)
3.	नौकरशाह	16 (48.48)	17 (51.52)	33 (100.00)
4.	राजनैतिक	09 (75.00)	03 (25.00)	12 (100.00)
	योग	**80** **(53.33)**	**70** **(46.67)**	**150** **(100.00)**

तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता हे कि 46.67 प्रतिशत अभिजन किसी भी जातिगत संगठन के सदस्य नहीं है। इनमें 47.17 प्रतिशत शैक्षिक, 48.08 प्रतिशत व्यावसायिक, 51.52 प्रतिशत नौकरशाह एवं 25.00 प्रतिशत राजनैतिक अभिजन हैं। कुल 53.33 प्रतिशत दलित अभिजन, जो अपने जातीय संगठनों से सम्बद्ध हैं, उनमें शैक्षणिक अभिजन 52.83 प्रतिशत, व्यावसायिक 51.92 प्रतिशत, नौकरशाह 48.48 प्रतिशत तथा राजनैतिक अभिजन 75.00 प्रतिशत हैं। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि लगभग आधे अभिजन किसी भी संगठन के सदस्य या पदाधिकारी नहीं है। इन तथ्यों की तुलना अन्य अध्ययनों से करने पर समानता दिखाई देती है। राजोरा[6] के अध्ययन में सम्मिलित अभिजनों में से 52 प्रतिशत तथा अब्बासायूलू[7] के अध्ययन में शामिल 51.27 प्रतिशत अभिजन किसी न किसी जातीय संगठन के सदस्य थे।

---

[6] राजोरा, एस.सी., सोशियल स्ट्रेक्चर एवं ट्राइबल इलिट, उदयपुर, हिमांशु पब्लिकेशन्स, 1987, पृ. 74

[7] अब्बासायूलू, वाई.बी., शिड्यूल्ड कास्ट इलिट, हैदराबाद, उस्मानिया यूनिवर्सटी, 1978, पृ. 115

6.4 संगठनात्मक वर्गीकरण तथा अभिजन सदस्यता

दलित अभिजनों द्वारा उल्लिखित दलितों से सम्बन्धित लगभग 46 संगठन मोटे तौर पर कल्याणकारी, व्यावसायिक, राजनैतिक, साहित्यिक व सांस्कृतिक और सरकारी संगठनों में वर्गीकृत किया गया है। तालिका में यह दर्शाया गया है कि 53.33 प्रतिशत दलित अभिजन, जो संगठनों के सदस्य हैं, वे किस–किस प्रकार के संगठनों के सदस्य हैं। अर्थात अभिजन सदस्यता का संगठन की प्रकृति के अनुसार वर्गीकरण किया गया है।

तालिका संख्या 6.4.1

संगठनात्मक वर्गीकरण तथा अभिजन सदस्यता

क्रमांक	संगठन का प्रकार	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	'क'	07	4.67
2.	'ख'	02	1.33
3.	'ग'	05	3.33
4.	'घ'	44	29.33
5.	'क' + 'ग' + 'घ'	05	3.33
6.	'क' + 'घ'	04	2.67
7.	'ख' + 'घ'	05	3.33
8.	'ग' + 'घ'	07	4.67
9.	उल्लेख नहीं	01	0.67
10.	संगठन के सदस्य नहीं	70	46.67
	योग	**150**	**100.00**

+ संकेत– 'क'– राजनैतिक संगठन

'ख'– व्यावसायिक संगठन

'ग'– सांस्कृतिक / साहित्यिक संगठन

'घ'– कल्याणकारी संगठन

तालिका में संगठनों के प्रकार के आधार पर अभिजनों की सदस्यता का उल्लेख किया गया है। कुल 53.33 प्रतिशत अभिजन जो जातीय

संगठनों के सदस्य हैं, उनमें से सर्वाधिक लगभग 81.25 प्रतिशत एकमात्र अथवा अन्य प्रकार के संगठनों के साथ कल्याणकारी संगठनों से जुड़े हुए हैं। सबसे कम केवल 8.75 प्रतिशत अभिजन अकेले या अन्य संगठनों के साथ व्यावसायिक संगठनों के सदस्य हैं। इसके अलावा तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि कुल 150 अभिजनों में से 38.67 प्रतिशत एक संगठन के, 10.67 प्रतिशत दो संगठनों के तथा 3.33 प्रतिशत अभिजन तीन संगठनों के सदस्य हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि दलित के सर्वाधिक अभिजन कल्याणकारी संगठनों के सदस्य हैं तथा मात्र एक ही संगठन की सदस्यता वाले अभिजनों का प्रतिशत अधिक है।

6.5 दलितोत्थान में जातीय संगठनों की भूमिका

वर्तमान दौर में जातीय संगठनों की आवश्यकता एवं प्रासंगकिता का उल्लेख पूर्व में कर चुके हैं।

6.5.1 समाज सुधार

भारतीय समाज मे सदियों से अनेक रीति–रिवाजों के साथ कई प्रकार की कुप्रथाएँ भी प्रचलित रही हैं। विशेषकर दलितों में अनेक ऐसी सामाजिक कुप्रथाएँ मौजूद रही हैं जिससे समाज का शैक्षणिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास अवरूद्ध हुआ है। उदाहरणार्थ मृत्युभोज, बाल–विवाह, पर्दा–प्रथा, शराबवृत्ति, मूर्ति–पूजा, जादू–टोने में विश्वास, पशु बलि (नर बलि भी) आदि अनेक ऐसी कुरीतियाँ हैं जिनसे समाज का समुचित विकास अवरूद्ध हो जाता है।

समाज सुधार के क्षेत्र में जातीय संगठन प्रायः असफल ही रहे हैं। विभिन्न जातीय संगठनों द्वारा समाज हित में समय–समय पर अनेक नियम एवं प्रस्ताव पारित किये गये हैं। लेकिन अब तक का अनुभव यह सिद्ध

करता है कि संगठनों एवं संस्थाओं मे नीति–निर्माता ही सर्वप्रथम इनका उल्लंघन करते हैं। आज पूरी तरह से एक भी नियम लागू नहीं हैं। समाज का कमज़ोर व्यक्ति यदि नियमों का उल्लंघन करता है तो उसे आर्थिक दण्ड या जाति बहिष्कार की सजा दी जाती है जबकि सम्पन्न एवं प्रभावशाली व्यक्ति आये दिन सामाजिक नियमों की अनदेखी करते हैं लेकिन उनको दण्डित करने की हिम्मत नहीं होती है। इस क्षेत्र में अभिजन वर्ग का सक्रिय सहयोग नहीं रहा है। प्रायः अभिजन ही नियमों की अनदेखी अधिक करते हैं।

6.5.2 शिक्षा

शिक्षा व्यावसायिक एवं सामाजिक गतिशलता में प्रमुख भूमिका अदा करती है। दलितों की वर्तमान दशा एवं शोषण के पीछे अन्य के साथ–साथ अशिक्षा भी एक महत्वपूर्ण कारक रही है। शिक्षा से संस्कार पैदा होते हैं। व्यक्ति समाज में अन्य सदस्यों के साथ प्रतिस्पर्धा कर सकता है, उच्च आमदनी का रोजगार प्राप्त कर सकता है एवं देश एवं समाज के विकास में योगदान दे सकता है। शिक्षा से दलित जातियों के सदस्य भी कृषि में आधुनिक तकनीकें अपनाने योग्य हो जाते हैं एवं प्रभावी राजनैतिक सहभागिता भी शिक्षा से ही संभव है।[8] शिक्षा दलितों तथा सवर्ण जातियों के मध्य सामाजिक दूरी को भी समाप्त करके पारस्परिक सम्बन्धों की मधुरता में वृद्धि करती है।[9]

स्वतन्त्र भारत में दलितों को शिक्षा द्वारा आधुनिकीकरण की प्रक्रिया के अन्तर्गत लाने की निरन्तर चेष्टाएँ की गई हैं, परन्तु परम्परागत रूढ़ियाँ, सामाजिक–आर्थिक असमानताएँ तथा जातिगत–सांस्कृतिक पूर्वाग्रह कुछ ऐसे तथ्य हैं जो इन जातियों की शैक्षणिक प्रगति एवं उपलब्धियों में बाधक हैं। प्रायः उच्च जातियों के सदस्यों का शिक्षण संस्थानों पर नियन्त्रण

---

[8] मोशर, ए.टी., मैटिंग एग्रीकल्चर मूविंग, न्यूयार्क, फ्रेडरिक ए पब्लिशर्स, 1966
[9] अलेक्जेंडर, के.सी., चेंजिंग स्टेट्स ऑफ पुलायस हरिजन्स ऑफ केरला इकॉनामिक एण्ड पॉलिटिल वीकली, वॉ. 3 नं. 26, 1968

तथा उनमें उच्च जातियों के बालकों एवं शिक्षकों का प्रभुत्व होने के कारण इन लोगों को शिक्षा का पूर्ण लाभ नहीं मिल पाया है।[10]

6.5.3 रोजगार

व्यक्ति के क्रियात्मक क्षणों का अधिकतम भाग इसकी व्यावसायिक गतिविधियों में व्यतीत होता है। सामान्य तौर पर प्रत्येक व्यक्ति अपनी विविध आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सम्पत्ति अर्जित करने का प्रयास करता है। व्यवसाय आवश्यक रूप से व्यक्ति के सामाजिक मूल्यों, विचारों, व्यक्तित्व तथा जीवनशैली को निश्चित करता है। आधुनिक समाज में व्यवसाय केवल जीविकोपार्जन के लिए धन कमाने से अधिक महत्वपूर्ण ही नहीं, अपितु शक्ति, पद और प्रतिष्ठा का भी प्रतीक है। व्यवसाय की प्रकृति तथा उसका स्तर व्यक्ति के वर्ग तादात्म्य तथा राजनैतिक मूल्यों को प्रभावित करता है।

आज विश्व के सभी देशों में खासकर भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देश में रोजगार और भी अच्छा रोजगार मिलना अत्यन्त मुश्किल है। अच्छे रोजगार के लिए उच्च शिक्षा जरूरी है। लेकिन दलितों में साक्षरता के कम प्रतिशत के कारण इन जातियों के सदस्य अच्छा पद प्राप्त करने में पिछड़ जाते हैं। खेद का विषय है कि लोकसभा एवं विधानसभा में इन जातियों के लिए आरक्षित स्थानों के अलावा एक भी विभाग में इनका निर्धारित कोटा पूरा नहीं है। कुछ सेवाओं में तो स्थिति अत्यन्त निराशाजनक है। इसके बावजूद शायद ही कभी किसी संगठन ने इस समस्या पर ध्यान देने हेतु व्यापक आन्दोलन चलाया हो या अभियान चलाकर जनजागृति लाने का प्रयास किया हो। कुछ छात्र संगठन अवश्य ही इस प्रकार के बैकलॉग को पूरा करवाने की माँग समय–समय पर जातीय संगठन अवश्य उठाते रहे हैं। विचार गोष्ठियों एवं सम्मेलनों के माध्यम से प्रस्ताव पारित कर सरकार से

---

[10] मेयर, ए.सी., कास्ट एण्ड किनशिप इन सैंट्रल इंडिया, लंदन, रूटलेज एण्ड केगनपाल, 1960

अपील करते रहे हैं लेकिन सरकार पर व्यापक दबाव बनाने में जातीय संगठन प्रायः असमर्थ ही रहे हैं।

परम्परागत व्यवसाय करना बुरा नहीं है, लेकिन दलितों के साथ अस्पृश्यता की भावना के लिए अस्वच्छ एवं गंदे व्यवसाय ही प्रमुख रूप से उत्तरदायी हैं। इसलिए परम्परागत अस्वच्छ धंधों को त्यागकर स्वच्छ एवं सम्मानजनक व्यवसाय अपनाकर समाज में अपनी प्रतिष्ठा स्थापित की जा सकती है। इस क्षेत्र में कुछेक जातियाँ अभी भी बहुत पीछे हैं। जातीय संगठन इन जातियों के लिए रोजगार के अवसर पैदा करते। इन जातियों के सदस्यों को उच्च एवं प्रतिष्ठित पद प्राप्त करने हेतु आर्थिक सहायता, कोचिंग, मार्गदर्शन आदि कार्यक्रम चलाते। लेकिन इस दिशा में संगठनों की भूमिका निराशाजनक रही है। इसी प्रकार इन जातियों को जातिगत धंधों में कई प्रकार की अमानवीय परिस्थितियों में रहकर कार्य करना पड़ता है लेकिन जातीय संगठन इस दिशा में विशेष प्रयास नहीं कर पाये हैं। इस कार्य में स्वयं सरकारी संस्थाएँ भी नकारा साबित हुई हैं। मानव संसाधन मंत्रालय, समाज कल्याण मंत्रालय एवं स्वास्थ्य मंत्रालय में दलितों के लिए स्वीकृत राशि बेकार पड़ी है तथा इसे खर्च करने की कोई नियमित व्यवस्था नहीं बनाई जा सकी है। एक विडम्बना यह है कि इन जातियों के उत्थान के लिये ये सरकारी संस्थाएँ बाहरी तौर पर निरन्तर आव्हान की मुद्रा में दिखाई देती हैं। लेकिन जब सचमुच योजनाओं को लागू करने की बात आती है वहाँ उनकी लापरवाह शैली उनकी वास्तविकता की पोल खोल देती है।

6.5.4 उत्पीड़न एवं शोषण से मुक्ति

राष्ट्रीय अनुसूचित जाति/जनजाति आयोग के एक दल ने सात राज्यों का दौरा कर पाया कि इन राज्यों के दलित बहुल इलाकों में आज भी अस्पृश्यता है एवं कुओं से पानी नहीं भरने दिया जाता है। इनके झोंपड़ों को जलाना, घरों को उजाड़ना, उन्हें जिंदा जलाना या गोलियों से भून देना,

इनकी माता, बहनों एवं स्त्रियों को उनके समक्ष नंगा करके बेइज्जत करना, सामूहिक बलात्कार तथा सार्वजनिक सेवाओं से वंचित करना जैसी घटनाएँ आम बात है। 15 अगस्त, 1998 को 51वें स्वतन्त्रता दिवस के अवसर पर संसद के केन्द्रीय कक्ष से राष्ट्र के नाम अपने संबोधन में राष्ट्रपति श्री के.आर. नारायणन ने इस बात को दुःख के साथ स्वीकार किया है कि दलितों का शोषण दूर करने तथा उनकी उन्नति के लिए प्रगतिशील कानून तो बने लेकिन क्रियान्वयन के स्तर पर प्रतिक्रियावादी ताकतों ने इन कानूनों के उद्देश्यों को ही नकार दिया है।

इस प्रकार के अत्याचारों को रोकने एवं शोषण का अन्त करने में जातीय संगठन प्रभावशाली भूमिका अदा करते हैं। इन घटनाओं के विरोध में सम्बन्धित अधिकारियों को ज्ञापन देकर, विधायक विधानसभा में प्रश्न उठाकर, धरना एवं बन्द का आयोजन करके पीड़ित पक्ष को राहत दिलवाने एवं अपराधियों के शीघ्र गिरफ्तार करने की माँग करते रहे हैं। कई अत्याचार की घटनाओं में जातीय संगठनों की ओर से पीड़ित परिवारों को आर्थिक एवं कानूनी सहायता भी उपलब्ध कराई गई है।

इन सब के बावजूद जबकि राज्य में इन जातियों के संगठनों की भरमार है, दलित अत्याचारों में वृद्धि संगठनों की भूमिका पर प्रश्नचिन्ह लगाती है। यद्यपि संगठन की अपनी सीमाएँ होती हैं, लेकिन इन जातियों के साथ मारपीट, बलात्कार, लूटपाट, प्रताड़ित करने जैसी घटनाएँ प्रतिदिन समाचार–पत्र एवं अन्य माध्यमों से प्रकाश में आती रहती हैं। उत्पीड़न के शिकार न केवल दलित वर्ग के साधारण व्यक्ति अपितु कर्मचारी, अधिकारी, राजनेता आदि भी होते रहे हैं। अपराध करने के बाद अपराधी खुले आम घूमकर, पुलिस एवं प्रशासन का मजाक उड़ाते हैं तथा पीड़ित पक्ष में और भय पैदा करते हैं। हमारी न्याय व्यवस्था भी चीटीं की चाल से चलती है। न्यायालयों में हजारों की संख्या में मामले लंबित पड़े हैं। सवर्ण पत्रकारिता

दलित अत्याचार की खबरों को मजे ले–लेकर प्रकाशित करती है। इन सब के बावजूद संगठन जो प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं वह नाकाफी है। स्वयं एक अभिजन के अनुसार "दलितों से सम्बद्ध समस्त संगठन, 'वन–डे' कार्यक्रम तक सीमित हैं। दलितों पर आये दिन अत्याचार की घटनाएँ होती हैं। आज भी इन जातियों का शोषण येन–केन प्रकारेण हो रहा है, लेकिन राज्य के दलित संगठनों के पदाधिकारी, इस वर्ग के अधिकारी, राजनेता एवं बुद्धिजीवी एक शब्द तक नहीं बोलते। विपक्षी दलों के सदस्य भी अपना वोट बैंक कायम रखने के उद्देश्य से ही बयानबाजी करते रहते हैं।" यदि एक उच्च जाति की लड़की एक दलित युवक के साथ विवाह कर लेती है तो इसके विरोध में सैकड़ों महिला संगठन खड़े हो जाते हैं। लेकिन जब सरेआम एक दलित महिला की इज्जत लूट ली जाती है तो एक भी संगठन सामने आकर विरोध नहीं करता। इसलिए ऐसी स्थिति में जबकि अत्याचारों में वृद्धि हो रही है एवं दलित शोषण तथा अन्याय के शिकार हो रहे हैं, इन जातीय संगठनों को समाज के प्रति अपने दायित्व का निर्वाह प्रभावी तरीके से करना होगा।

6.5.5 साहित्य सृजन एवं प्रकाशन

दलित संगठन साहित्य के क्षेत्र में भी अन्य राज्यों की अपेक्षा पीछे है। महाराष्ट्र, पंजाब जैसे राज्यों में दलित साहित्य ज्यादा प्रकाश में आया है। इन राज्यों में पत्र–पत्रिका प्रकाशन, सेमीनार, संगोष्ठियाँ, कार्य गोष्ठी, सम्मेलन आदि का आयोजन संगठनों द्वारा होता रहा है, लेकिन राज्य के संगठन इस क्षेत्र में भी लगभग निष्क्रिय हैं। यहाँ तो साहित्य से सम्बन्धित संगठनों की भरमार है लेकिन इन संगठनों द्वारा कोई साहित्य प्रकाशित नहीं कराया जाना उदासीनता प्रकट करता है। भारतीय दलित साहित्य अकादमी ने कुछ प्रयास अवश्य किया है। जो पदाधिकारी, कार्यकाल समाप्ति या अन्य कारणों से पद त्याग देता है, अपने कार्यकाल का समस्त साहित्य स्वयं के पास ही पड़ा रहता है तथा पदाधिकारी नये सिरे से इस दिशा में प्रयास

करता है। नई दिल्ली से प्रकाशित बैरवा ज्योति इस दिशा में अच्छा प्रयास माना जा सकता है।

6.6 अभिजनों की दृष्टि में जातीय संगठनों की प्रमुख समस्याएँ

दलित अभिजनों द्वारा प्रदत्त तथ्यों के अनुसार वर्तमान में हमीरपुर में लगभग 3 दर्जन संगठन एवं सरकारी संस्थान दलितों से सम्बन्धित क्रियाशील हैं। वास्तव में इनकी संख्या सैकड़ों है क्योंकि आये दिन तहसील, जिला एवं प्रादेशिक स्तर पर दलितों से सम्बन्ध रखने वाले संगठनों के निर्माण के समाचार पत्र–पत्रिकाओं में पढ़ने को मिलते हैं। इन संगठनों में कुछ समस्त दलितों से तथा कुछ दलितों के साथ–साथ जनजातियो एवं पिछड़ी जातियों से भी सम्बन्धित हैं। ऐसा नहीं है कि इन संगठनों से दलितों को लाभ नहीं मिला है, लेकिन संगठनों की बहुलता के बावजूद दलित जातियों की वर्तमान दशा देखकर ऐसा महसूस होता है कि जातीय संगठन वांछित परिणाम प्राप्त करने में असफल सिद्ध हुए हैं।[11] स्वयं सरकारी संस्थान एवं आयोग इस दृष्टि से कितने असफल सिद्ध हुए हैं इस बात का अंदाजा इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि राष्ट्रीय अनुसूचित जाति/जनजाति आयोग का 1990 का वार्षिक प्रतिवेदन कुछ समय पूर्व ही संसद में प्रस्तुत किया गया है। इसी सिफारिशों को लागू करने में अभी और कितना वक्त लगेगा, यह विचारणीय है। आयोग में 105 पदों में से 65 पद रिक्त हैं। राज्य के कई विभागों में इन जातियों के लिए स्वीकृत धनराशि या केन्द्रीय सहायता राशि का समय पर उपभोग नहीं हो पाता है।

हमीरपुर जनपद में दलित जातियों के संगठन समस्याग्रस्त होने के कारण उचित परिणाम देने में असफल रहे हैं। हमारा अनुभव यह बताता है कि कुछेक दलित संगठनों ने 1950 से 1970 तक के दशकों में समाज सुधार एवं अन्य क्षेत्रों में अच्छे एवं सार्थक प्रयास किये थे एवं उनको व्यापक

---

[11] दलित एशिया टुडे, जनवरी, 1995, लखनऊ, पृ. 7

सफलता भी प्राप्त हुई थी, लेकिन बाद के वर्षों में संगठन पथभ्रष्ट हो गये लगते हैं। जातीय संगठनों का इस्तेमाल राजनीति में आकर उच्च पद प्राप्त करने में किया जाने लगा है। इस सम्बन्ध में शोधार्थिनी ने स्वयं दलित अभिजनों से जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया है कि आखिर वे कौनसी समस्याएँ/बाधाएँ हैं जो संगठनों को वांछित दिशा में सफल नहीं होने दे रही हैं। अभिजन वर्ग द्वारा उल्लिखित कुछ प्रमुख समस्याएँ इस प्रकार हैं –

6.6.1 पारस्परिक फूट एवं आन्तरिक जातिवाद

30 नवम्बर, 1956 को 'शिड्यूल्ड कास्ट फैडरेशन' की अपनी अन्तिम सभा में दिल्ली में डा. भीमराव अम्बेडकर ने कहा था, "ऐसी किसी भी राजनीति में भाग लेना सिद्धान्तहीन और अशोभनीय है जिसका आधार जातिवाद हो।"[12] कांग्रेस द्वारा अम्बेडकर के विरूद्ध लोकसभा चुनावों में काजरोलकर को उम्मीदवार बनाकर महार तथा चमारों के मध्य जातिभेद की दीवार खड़ी करने की जो शुरूआत की गई, वह आज तक बदस्तूर जारी है। जगजीवन राम ने इसी आंतरिक जातिवाद का सहारा लेते हुए 1988 के बिजनौर लोकसभा उपचुनावों में स्पष्टतः कहा था, "यू.पी. के चमारों, मेरी बेटी को तुम्हें जिताना है। रामविलास पासवान चमार या जाटव जाति से नहीं है। तुम्हारी जाति से मींरा कुमार है।[13]

दलित जातियों के संगठनों की असफलता के लिए आन्तरिक जातिवाद एवं पारस्परिक फूट मूल कारण है। एक अभिजन के अनुसार "संगठनों में आन्तरिक जातिवाद फैल रहा है। लोगों की संगठनों से लड़ने की इच्छा नहीं है क्योंकि उनमें जातिवाद का जहर व्याप्त है।" लगभग 30 प्रतिशत अभिजन आन्तरिक जातिवाद की भावना एवं एकरूपता के अभाव को संगठनों की असफलता का प्रमुख कारण मानते हैं। एक अन्य अभिजन

---

[12] नवभारत टाइम्स, जयपुर, 4 फरवरी, 1988

[13] इबिद.

संगठनों की कमियां बताते हुए लिखते हैं, "दलितों के ज्यादातर जातीय संगठनों का प्रमुख उद्देश्य मात्र अपनी जाति के लिए अधिकाधिक अधिकार एवं सुविधाओं की मांग करना है, सम्पूर्ण दलितों के लिए नहीं। मंत्री परिषद के गठन या चुनावों के टिकट वितरण के समय यह नहीं देखते हैं कि योग्य दलित को चुना गया है या नहीं।

6.6.2 स्वार्थपरता एवं पदलिप्सा

लगभग 19.33 प्रतिशत अभिजन मानते हैं कि पदलिप्सा, स्वार्थपरता एवं समुचित नेतृत्व का अभाव संगठनात्मक असफलता के प्रमुख कारण हैं। इस सम्बन्ध में एक अभिजन कहते हैं, "दलित जातियों के संगठनों में पदलोलुपता एवं पद प्राप्ति हेतु जोड़तोड़, नकारात्मक सोच और करनी एवं कथनी में अन्तर प्रमुख समस्याएँ व्याप्त हैं।" लगभग इसी प्रकार के विचार व्यक्त करते हुए एक अन्य अभिजन लिखते हैं, "कुछ लोगों में पदलोलुपता है तथा कुछ अपनी महत्ता स्थापित करना चाहते हैं। संगठन के सदस्यों में समर्पित भावना का अभाव है। केवल औपचारिकता निभाने के लिए ही संगठन में सम्मिलित होते हैं क्योंकि ऐसा पाया गया है कि पद से अलग करने पर सदस्य संगठन की गतिविधियों से बिल्कुल पृथक हो जाते हैं।"

एक अन्य अभिजन ने संगठनों के पदाधिकारियों की स्वार्थी मनोवृत्ति का उल्लेख करते हुए लिखा है कि "चुनावों के समय संगठनों के पदाधिकारी संगठनात्मक शक्तियों का प्रयोग राजनैतिक दलों से टिकट प्राप्त करने के लिए तथा अपना नाम प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री या मंत्रियों तक प्रचारित करने में करते हैं।"

6.6.3 आर्थिक साधनों का अभाव

दलित संगठनों की महत्वपूर्ण समस्या आर्थिक साधनों का अभाव तथा जनसामान्य की निम्न आर्थिक दशा है। 24.67 प्रतिशत दलित अभिजनों

ने इस समस्या का उल्लेख करते हुए लिखा है कि आर्थिक साधनों के अभाव से न तो संगठन एवं समाज का समुचित साहित्य ही तैयार हो पाता है और न ही सक्रिय एवं समर्पित कार्यकर्ता। बिना धन के ज्यादातर संगठन अपने वार्षिक चुनाव, जिला या राज्यव्यापी सम्मेलन या अन्य जलसा करने में स्वयं को असमर्थ पाते हैं। परिणामस्वरूप संगठन मात्र पदाधिकारियों तक सीमित होकर रह जाते हैं।

6.6.4 इच्छा–शक्ति का अभाव

अभिजनों के अनुसार एक महत्वपूर्ण समस्या जो प्रायः वर्तमान में अधिकांश संगठनों की है, वह है दृढ़ इच्छा–शक्ति का अभाव। प्रशासनिक प्रक्रिया की जटिलता, कानूनी पेचीदगियों एवं लालफीताशाही के चलते संगठनों के पदाधिकारी अपने समुदाय की समस्याओं के सम्बन्ध में व्यापक कार्यक्रम तैयार करने में असमर्थ रहे हैं। संगठनों के पदाधिकारी अपनी समस्याओं के सम्बन्ध में एक–दो बार सम्बन्धित अधिकारियों से मिलते हैं एवं आश्वासन मिलने के बाद शांत हो जाते हैं। निरन्तर प्रयत्नशील रहकर वांछित परिणाम प्राप्त करने का प्रयास नहीं करते हैं।

6.6.5 अभिजन वर्ग की संगठनों से पृथकता

कोई भी संगठन उस समय तक सफलतापूर्वक कार्य नहीं कर सकता जब तक समाज के प्रतिष्ठित, बुद्धिजीवी, आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न एवं उच्च पदाधिकारियों का समर्थन उसे नहीं मिले। दलित संगठनों की यह भी एक प्रमुख समस्या है जिसकी ओर स्वयं अभिजन एवं समाज का सामान्य वर्ग भी इशारा करता है। संगठनात्मक सदस्यता सम्बन्धी तथ्यों में हम देख चुके हैं कि 47 प्रतिशत अभिजन जातीय संगठनों के सदस्य नहीं है। जो अभिजन संगठनों से सम्बद्ध हैं, उनमें भी ज्यादातर एकाध संगठन के साधारण सदस्य है। सक्रिय सदस्य या पदाधिकारी बहुत ही कम अभिजन हैं। दूसरी ओर समाज के निम्न स्तर के कर्मचारी, अध्यापक, छोटे व्यापारी आदि संगठनों के

पदाधिकारी एवं सक्रिय कार्यकर्ता हैं। ऐसी स्थिति में संगठन अभिजनों के नेतृत्व से वंचित रहते हुए प्रायः समस्या समाधान की दिशा में सफलता प्राप्त नहीं कर पाते हैं।

इन प्रमुख समस्याओं एवं कमियों के अलावा अन्य समस्याओं में समुचित एवं कुशल नेतृत्व का अभाव, दलितों में शिक्षा एवं जानकारी का अभाव, योग्य एवं कुशल व्यक्तियों का संगठन से अलग रहना, उच्चाधिकारियों एवं नौकरशाहों में अहं की भावना, सामाजिक कुरीतियाँ, व्यापक जनाधार का अभाव, संगठन सम्बन्धी समुचित साहित्य की कमी, पृथक–पृथक जातीय संगठनों की भरमार एवं विभिन्न जातीय संगठनों के समन्वय का नितान्त अभाव आदि प्रमुख हैं।

6.7 समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव

दलित संगठनों की प्रमुख समस्याओं को दूर करने सम्बन्धी अभिजनों ने जो सुझाव दिये हैं, सार रूप में उनको निम्नानुसार वर्णित किया जा सकता है–

1. समस्त दलितों के विभिन्न वर्गों से सम्बद्ध प्रतिनिधियों के माध्यम से राज्य स्तर पर एक केन्द्रीय संगठन का निर्माण किया जाये एवं दलित वर्ग के विविध संगठनों में परस्पर तालमेल स्थापित किया जाये।
2. समर्पित, निष्ठावान एवं योग्य कार्यकर्ताओं को संगठन में उचित एवं सम्मानजनक पद प्रदान किये जायें। संगठनों के माध्यम से त्याग, सेवा, दया परोपकार, चरित्र निर्माण आदि की शिक्षा दी जाए।
3. दलितों में शिक्षा का व्यापक प्रचार–प्रसार किया जाए। संगठन के माध्यम से समाज के आर्थिक दृष्टि से कमजोर एवं प्रतिभावन छात्रों को पुरूस्कार एवं छात्रवृत्ति प्रदान करके आगे बढ़ने के अवसर प्रदान किये जावें, ताकि संगठन जनसाधारण में लोकप्रिय बन सके।

4. जातीय संगठनों के पदाधिकारी के रूप में, जहाँ तक संभव हो सके, राजनेताओं को न चुनकर बुद्धिजीवी एवं निष्ठावान लागों का चयन किया जाये।
5. संगठन का पंजीकरण ही आवश्यक नहीं है, अपितु उसका एक निश्चित एवं ठोस कार्यक्रम, उद्देश्य, एक दिशा होना जरूरी है। नियमित चुनाव, संगठन में आन्तरिक लोकतन्त्र, सदस्यता अभियान, ट्रस्ट की भावना से कार्य, बंधुत्व तथा व्यक्तिगत प्रभाव का अन्त संगठनों की सफलता के प्रमुख लक्षण हैं।
6. जातीय एवं कल्याणकारी संगठनों को पारिवारिक आयोजनों से जोड़ा जाए, ताकि परिवार के सदस्यों में भी संगठन के प्रति रूचि जागृत हो सके। समय–समय पर मेल–जोल के सामाजिक आयोजन मय परिवार के हों जिससे भाईचारा बढ़े, संगठन के प्रति सम्मान की भावना का विकास हो एवं दलित जातियाँ एक–दूसरे के नजदीक आ सकें।
7. संगठनों का पंजीकरण इतना आसान न हो कि आये दिन संगठन निर्मित होते रहें एवं व्यक्ति विशेष के अहं के कारण उनका अन्त हो जाये। संगठनों से एकाधिकारवाद एवं परिवारवाद की धारणा का अन्त करके संगठनों का स्वरूप व्यापक बनाया जाए।
8. संगठन एवं समाज का समुचित साहित्य तैयार करवाया जाए एवं संगठन के उद्देश्य एवं कार्यक्रमों से जनसाधारण को अवगत करवाया जाए। संगठन के पदाधिकारियों को चाहिए कि वे केवल वर्ष भर में एक बार महापुरूषों की जयन्ती या पुण्यतिथि आदि मनाकर अपने उद्देश्य की इतिश्री न मानें, अपितु यह प्रक्रिया निरन्तर जारी रहनी चाहिए।
9. जातीय संगठनों को समाज सुधार के कार्यक्रमों पर विशेष ध्यान देना चाहिए क्योंकि आज भी इन जातियों में अनेक समाजिक कुरीतियाँ व्याप्त है जो विकास को अवरूद्ध करती हैं।

10. दलितों पर होने वाले अत्याचारों के विरूद्ध इन दलित संगठनों को दृढ़ इच्छा–शक्ति का परिचय देते हुए एकजुटता के प्रयास करने होंगे। साथ ही संगठन के प्रयास समस्या के वास्तविक समाधान तक अनवरत जारी रहने चाहिए।
11. इन जातीय संगठनों को यथासंभव विद्यालय खोलकर, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्र में बालिका शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक जन–आन्दोलन खड़ा करना चाहिए।
12. यदि संभव हो सके तो इन जातीय संगठनों द्वारा कुछ रोजगार के साधन भी इन जातियों के सदस्यों को उपलब्ध करवाने चाहिए ताकि संगठन की लोकप्रियता में वृद्धि हो सके।

6.8 दलितों के विकास में प्रमुख बाधाएँ

विकास एक सामाजिक प्रक्रिया हैं इसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध समाज के आर्थिक पहलुओं से होता है। समाज वैज्ञानिकों का मत है कि विभिन्न सामाजिक उद्देश्यों और प्रगति की प्राप्ति तभी संभव हो सकती है जब समाज का अर्थिक विकास होगा। दलितों के लिए स्वतन्त्रता के पश्चात सरकार ने अनेक कदम उठाये हैं।[14] भारत में दलितों के लिए चलाये जा रहे विशेष काग्रक्रमों के सम्बन्ध में रजनी कोठारी ने कहा है कि "सम्भवतः विश्व में कहीं भी निम्न वर्ग को इतनी सुविधाएँ प्रदान नहीं की गई हैं, जितनी वर्तमान में भारत सरकार द्वारा दलित वर्ग के लिए प्रदान की जा रही हैं।"[15] लेकिन जनतन्त्र की सबसे बड़ी दुर्बलता सामाजिक अनैतिकता एवं राष्ट्रीय चरित्र का अभाव है, और दुर्भाग्यवश भारत में अनैतिकता, चरित्रहीनता और भ्रष्टाचार अपनी चरम सीमा पर हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि मानों आज देशभक्त एवं सत्यनिष्ठ राजनीतिज्ञ तथा ईमानदार एवं कर्तव्यनिष्ठ राज्य कर्मचारियों का पूर्ण अकाल पड़ गया है। भ्रष्टाचार के मकड़जाल में जब न

[14] दैनिक भास्कर, भ्रष्टाचार : अब गंगोत्री ही हो गई दूषित, जयपुर, 9 अक्टूबर, 1997
[15] शांताकुमारी, आर., शिड्यूल्ड कास्ट एण्ड वेलफेयर मीजर्स, न्यू देहली, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, 1983, पृ. 189

प्रधानमंत्री बचे, न मुख्यमंत्री, तब मुख्य सचिव एवं अन्य शीर्षस्थ अधिकारी भी कैसे बच सकते हैं? तमिड़नाडु के पूर्व मुख्य सचिव एन. हरिभास्कर, कर्नाटक के पूर्व मुख्य सचिव एलेक्जेंडर, केरल के पूर्व मुख्य सचिव आर. रामचन्द्र नायर, पंजाब के मुख्यमंत्री के पूर्व सचिव विक्रमजीत सिंह, आई. एस. बिन्द्रा, आर.एस. मान, पूर्व रक्षा सचिव एस.के. भटनागर एवं गोपी अरोड़ा, हरियाणा के पुलिस महानिदेशक लक्ष्मण दास, आयकर अधिकारी आर.सी. बख्शी, उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्य सचिव ए.पी. सिंह आदि अनेक उच्चाधिकारियों की एक लम्बी श्रृंखला है जिनके ऊपर या तो अभियोग दर्ज किये गये अथवा भ्रष्टाचार के आरोप में पद छोड़ना पड़ा। यह गहन चिंता का विषय है कि इस सर्वग्राही भ्रष्टाचार की छूत से राज्यों के भ्रष्टाचार निरोधक एवं केन्द्रीय जाँच ब्यूरो भी अछूते नहीं नहीं रहें हैं।[16] भ्रष्टाचार प्रशासन के समस्त अंगों तथा समाज के हर स्तर पर प्रवेश कर जनतन्त्र की जड़ों पर प्रहार करके दलितों के विकास को अवरूद्ध कर रहा है।[17]

6.8 अभिजन एवं अस्पृश्यता

अस्पृश्यता क्या है? यह एक संवेदनशील प्रश्न है। किसी व्यक्ति को स्पर्श न करना, न देखना, उसे दूर रखना अस्पृश्यता का व्यवहार है। कुछ समुदायों को अपवित्र, कहना ही पर्याप्त नहीं है। इसकी वास्तविकता अनुभूति एक अस्पृश्य ही कर सकता है। यह अनुभूति वैयक्तिक दृष्टि से बड़ी कष्टदायक, बेचैन करने वाली, मन को व्यथित करने वाली तथा सामाजिक रूप से मान–सम्मान, प्रतिष्ठा–गरिमा समाप्त करने वाली होती है। इस रोग ने अस्पृश्य को अस्तित्वहीन बना दिया, ढेर सारी अयोग्यताएँ उस पर थोप दी गईं, अनेक सीमाओं में उसे जकड़ दिया गया और अनेक प्रतिबन्धों से उसे दबाने का प्रयास किया। अस्पृश्यता के सम्बन्ध में भगवान दास के ये शब्द उचित प्रतीत होते हैं कि "अस्पृश्यता हिन्दूवाद का एक अभिन्न अंग है। यह

---

[16] कोठारी, रजनी, कास्ट इन इंडियन पॉलिटिक्स, देहली, ओरिएन्ट लान्गमैन, 1970, पृ. 55

[17] सिंह, आर.पी., अनुसूचित जाति के विधानमण्डलीय अभिजन, दिल्ली मित्तल पब्लिकेशन्स, 1989, पृ. 227

एक हिन्दू के लिए उसकी माँ द्वारा पालने में सिखाया गया प्रथम पाठ है, जिसका अनुसरण वह जीवनपर्यन्त पूर्ण विश्वास के साथ करने का प्रयास करता है।[18]

डा. भीमराव अम्बेडकर ने अस्पृश्यता को परिभाषित करते हुए लिखा है, "अस्पृश्यता का आधार गन्दगी अपवित्रता तथा छूत लग जाने की कल्पना तथा उससे मुक्त होने का तरीका तथा साधन है। यह एक स्थायी वंशानुगत कलंक है जो किसी प्रकार धुल नहीं सकता है।[19] इसी प्रकार मुखर्जी ने अपने अध्ययन "बेयोंड द फोर वर्णाज, द अनटचेबल्स इन इंडिया" में अस्पृश्यता की परिभाषा देते हुए लिखा है कि "स्पष्ट रूप से अस्पृश्यता का प्रथम लक्षण है कि वे हिन्दू जातियों के लिए अस्पृश्य हैं तथा द्वितीय हिन्दू आबादी से पृथक आवास, हिन्दू जातियों के साथ सहभोज एवं वैवाहिक सम्बन्धों का निषेध सामयिक लक्षण हैं।"[20]

कानूनी प्रावधानों एवं सरकारी प्रयासों के परिणामस्वरूप अस्पृश्यता का स्वरूप अब यद्यपि पहले जैसा नहीं है, लेकिन यह समझना कि अस्पृश्यता निवारणार्थ किये गये प्रयास उत्साहवर्धक एवं आशाजनक रहे हैं, एक भारी भूल होगी। शहरी क्षेत्रों यद्यपि इसमें कमी दिखलाई देती है, लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी अस्पृश्यता उसी रूप में व्याप्त है।[21] एक दुःखद पहलू यह है कि दलितों में ही आन्तरिक आन्तरिक अस्पृश्यता न केवल जारी है, अपितु इसमें वृद्धि हो रही है। दलित जातियों में से ही सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से कुछ सम्पन्न जातियाँ अपेक्षाकृत अस्पृश्य दलित जातियों को घृणा व

---

[18] भगवानदास, अनटचेबल्स एण्ड बुद्धिज्म, इन एल.आर., बाली (एडी.), थाट्स ऑन अम्बेडकर, जालंधर, भीम पत्रिका प्रकाशन, 1975, पृ. 23

[19] अम्बेडकर, बी.आर., अछूत कौन और कैसे? भदन्त आनंद कौसल्यायन (अनु.) लखनऊ, कल्चरल पब्लिशर्स, 1990, पृ. 15 व 38

[20] मुखर्जी, प्रभाती, बेयोंड द फोर वर्णाज : द अनटचेबल्स इन इंडिया, शिमला, इंडियन इंन्स्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडी, 1988, पृ. 14

[21] राय, रामाश्रय तथा सिंह, वी.बी., 1987, इबिद, पृ. 66–70, खान, मुमताज अली, 1989, इबिद, पृ. 213

हीनता की दृष्टि से देखतीं हैं।[22] आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि संविधान लागू होने के वर्षों बाद भी शंकराचार्य एक लेख में वेदों का हवाला देकर लिखते हैं कि "निम्न जातियों के व्यक्तियों को मन्दिर प्रवेश का अधिकार नहीं दिया जा सकता क्योंकि उनके प्रवेश से मन्दिर अपवित्र हो जाते हैं।[23] एक दलित नेता द्वारा किसी सवर्ण नेता की प्रतिमा का अनावरण करवाने के पश्चात उसे पुनः गंगाजल से साफ करना आखिर हिन्दुओं की किस मानसिकता को प्रकट करता है?[24] 1998 में उत्तर प्रदेश के एक जिले में स्थानान्तरित होकर आया सवर्ण जज अपनी कुर्सी और कार्यालय को गंगाजल से धुलवाता है क्योंकि उससे पहले का जज दलित था। 1999 में तमिलनाडु के पुडुक्कोटाई जिले के कुलाथुर गाँव में तीन दलित युवाओं के सिर जबरदस्ती मूँड दिये जाते हैं क्योंकि उन्होंने अन्य जातियों में विवाह करने की हिमाकत की थी। दलित दूल्हे द्वारा सवर्ण वधू से विवाह करने पर नवदंपति की नृशंस हत्या की घटनाएँ भी हुई हैं।

---

[22] शांताकुमारी, आर., 1983, इबिद, पृ. 29, : मेहता, चेतन, युग दृष्टा डा. भीमराव अम्बेडकर, जयपुर, मालिक एण्ड कं., 1991, पृ. 69

[23] राम, जगजीवन, कास्ट चैलेंज इन इंडिया, दिल्ली, विजन बुक्स प्रा. लि., 1980, पृ. 24

[24] दिनमान, 12–18 फरवरी, 1978, दिल्ली, पृ. 11

तालिका संख्या 6.8.1

क्या आप महसूस करते हैं कि अस्पृश्यता स्थायी रूप से वंशानुगत है जो कभी समाप्त नहीं हो सकती?

क्रमांक	अभिजन श्रेणी	हाँ	नहीं	योग
1.	शैक्षणिक	08 (15.09)	45 (84.91)	53 (100.00)
2.	व्यावसायिक	09 (17.31)	43 (82.69)	52 (100.00)
3.	नौकरशाह	06 (18.18)	27 (81.82)	33 (100.00)
4.	राजनैतिक	06 (50.00)	06 (50.00)	12 (100.00)
	योग	**29 (19.33)**	**121 (80.67)**	**150 (100.00)**

तालिका में अस्पृश्यता के प्रति हमीरपुर के दलित अभिजनों के दृष्टिकोण सम्बन्धी तथ्यों को प्रदर्शित किया गया है। इन तथ्यों से स्पष्ट होता है कि 80.67 प्रतिशत अभिजन अस्पृश्यता को स्थायी रूप से वंशानुगत नहीं मानते हैं जबकि 19.33 प्रतिशत अभिजनों की मान्यता है कि अस्पृश्यता स्थायी रूप से वंशानुगत है जो कभी समाप्त नहीं हो सकती है। पृथक–पृथक अभिजन श्रेणीवार अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि 84.91 प्रतिशत शैक्षणिक, 82.69 प्रतिशत व्यावसायिक, 81.82 प्रतिशत नौकरशाह एवं 50 प्रतिशत राजनैतिक अभिजन अस्पृश्यता को अस्थायी मानते हुए आशा करते हैं कि यह कलंक एक दिन अवश्य समाप्त हो जायेगा। दूसरी ओर 15.09 प्रतिशत शैक्षणिक, 17.31 प्रतिशत व्यावसायिक, 18.18 प्रतिशत नौकरशाह एवं 50 प्रतिशत राजनैतिक अभिजन अस्पृश्यता को स्थायी वंशानुगत मानते हैं।

इस प्रकार हमीरपुर जनपद में अधिकांश दलित अभिजन 'अस्पृश्यता' की समाप्ति के प्रति आशावान हैं। लगभग इसी प्रकार के निष्कर्ष

सिंह[25] के अध्ययन से प्राप्त हुए हैं जिसमें 62.94 प्रतिशत विधानमण्डलीय अभिजन यह महसूस करते हैं कि उच्च जातियों द्वारा अस्पृश्यता पहले की अपेक्षा कम हो गई है तथा आधुनिक समाज में अस्पृश्यता की प्रथा समाप्त हो रही है।

'हरिजन इलिट' पर बिहार में एक अध्ययन सच्चिदानन्द द्वारा किया गया, जिसमें शामिल अभिजनों में से कुछ के अनुभवों को पढ़ने के बाद अस्पृश्यता की समाप्ति की बात मिथ्या प्रतीत होती है। इस अध्ययन में शामिल एक हरिजन विधायक का कहना है, "एक बार मैं अपने उच्च जाति के दोस्त के घर पर भोजन पर आमंत्रित किया गया। मुझे भोजन चाँदी के बर्तनों में खिलाया गया। मैंने जब मेजबान से कहा कि मुझ जैसे गरीब व्यक्ति को इतने महंगे बर्तनों में भोजन खिलाने की क्या आवश्यकता है? बाद में मेरे मित्र ने मुझे बताया कि ऐसा विश्वास किया जाता है कि चाँदी के बर्तन कभी अपवित्र नहीं होते, इस कारण आपको भोजन चाँदी के बर्तनों में कराया गया। यह वास्तविकता जानकर मुझे गहरा धक्का लगा।"[26]

अस्पृश्यता सम्बन्धी व्यवहार में सामूहिक खान–पान (सहभोज) का अत्यधिक महत्व है। यह तो स्पष्ट है कि साधारण दलित के साथ उच्च जाति का व्यक्ति खान–पान के सम्बन्ध नहीं रखेगा।

---

[25] सिंह, रवि प्रताप, 1989, इबिद, पृ. 121

[26] सच्चिदानन्द, 1977, इबिद, पृ. 46

तालिका संख्या 6.8.2

क्या आप अनुभव करते हैं कि उच्च जाति के सदस्य अपने समकक्ष दलित के साथ खान–पान के सम्बन्ध रखते हैं?

क्रमांक	अभिजन श्रेणी	हाँ	नहीं	योग
1.	शैक्षणिक	38 (71.70)	15 (28.30)	53 (100.00)
2.	व्यावसायिक	45 (86.54)	07 (13.46)	52 (100.00)
3.	नौकरशाह	25 (75.76)	08 (24.24)	33 (100.00)
4.	राजनैतिक	11 (91.67)	01 (8.33)	12 (100.00)
	योग	**119 (79.33)**	**31 (20.67)**	**150 (100.00)**

तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 79.33 प्रतिशत अभिजनों की मान्यता है कि उच्च जाति के लोग अपने समकक्ष दलित लोगों के साथ खान–पान के सम्बन्ध रखते हैं जबकि शेष 20.67 प्रतिशत अभिजनों की दृष्टि में खान–पान सम्बन्धी सम्पर्क नहीं रखा जाता है। पृथक से अभिजन श्रेणीवार अवलोकन से स्पष्ट होता है कि 71.70 प्रतिशत शैक्षणिक, 86.54 प्रतिशत व्यावसायिक, 75.76 प्रतिशत नौकरशाह एवं 91.67 प्रतिशत राजनैतिक अभिजन खान–पान के सम्पर्क होने की तथा 28.30 प्रतिशत शैक्षणिक, 13.46 प्रतिशत व्यावसायिक, 24.24 प्रतिशत नौकरशाह एवं 8.33 प्रतिशत राजनैतिक अभिजन ऐसा सम्पर्क नहीं रखने का अनुभव करते हैं।

अधिकांश अभिजन यह स्वीकार करते हैं कि अपने समकक्ष के साथ खान–पान का सम्बन्ध उच्च स्तर के पदों, यथा– प्रशासनिक अधिकारी, चिकित्सक, व्याख्याता, न्यायाधीश, अभियन्ता आदि पर अधिक पाया जाता है। लेकिन आज भी एक ब्राह्मण या राजपूत चपरासी अपने समकक्ष एक हरिजन

चपरासी के साथ खान—पान के सम्बन्ध नहीं रखता है। इसी प्रकार से एक अन्य तथ्य की ओर इशारा करते हैं कि ऐसे सहभोज के सम्बन्ध भी शहरी क्षेत्रों में ही अधिक दिखाई देते हैं, ग्रामीण क्षेत्रों में नहीं, जहाँ दलित 82 प्रतिशत दलित आबादी निवास करती है।

6.9 अभिजन तथा सरकारी नीतियाँ

स्वतन्त्रता के पश्चात सरकार ने सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक न्याय तथा प्रतिष्ठा एवं अवसर की समानता के संवैधानिक आदर्शों की प्राप्ति हेतु दलितों के लिए अनेक लाभदायक योजनाओं एवं नीतियों का निर्माण किया है। शैक्षणिक दृष्टि से इन जातियों के सदस्यों को छात्रवृत्तियाँ, शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश में आरक्षण, निःशुल्क पाठ्यपुस्तकें एवं पोशाक वितरण, शुल्क मुक्ति व छात्रावास जैसी अनेक सुविधाएँ मुहैया कराई जा रही हैं। आर्थिक समृद्धि के उद्देश्य से दलित जातियों के भूमिहीन सदस्यों को भूमि का आवंटन, भूमि सुधार हेतु सहायता, लघु उद्योगों की स्थापना हेतु ऋण, विशेष प्रशिक्षण अभियान, बेरोजगारी भत्ता, प्रशासनिक सेवा पूर्ण प्रशिक्षण, स्व रोजगार हेतु ऋण सुविधा उपलब्ध कराई जाती है। इसी प्रकार से सरकारी सेवाओं में इन जातियों की जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण तथा लोकसभा, विधानसभा एवं पंचायती राज तथा स्वायत्त शासन संस्थाओं में स्थान आरक्षित किये गये हैं।

केन्द्र एवं राज्य सरकार द्वारा निर्मित अनेक नीतियों एवं लागू किये गये कार्यक्रमों के सम्बन्ध में उत्तर प्रदेश के दलित अभिजनों की संतुष्टि सम्बन्धी विचार तालिका में प्रदर्शित किये गये हैं।

तालिका संख्या 6.9.1

क्या आप सरकार द्वारा दलितों के लिए चलाए जा रहे कार्यक्रमों / नीतियों से संतुष्ट हैं?

क्रमांक	अभिजन श्रेणी	हाँ	नहीं	योग
1.	शैक्षणिक	16 (30.19)	37 (69.81)	53 (100.00)
2.	व्यावसायिक	16 (30.77)	36 (69.23)	52 (100.00)
3.	नौकरशाह	14 (42.42)	19 (57.58)	33 (100.00)
4.	राजनैतिक	03 (25.00)	09 (75.00)	12 (100.00)
	योग	49 (32.67)	101 (67.33)	150 (100.00)

तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 69.81 प्रतिशत शैक्षणिक, 69.23 प्रतिशत व्यावसायिक, 57.58 प्रतिशत नौकरशाह एवं 75.00 प्रतिशत राजनैतिक अभिजन तथा संयुक्त रूप से 67.33 प्रतिशत अभिजन इस समय सरकार के द्वारा दलितों के कल्याण हेतु चलाये जा रहे कार्यक्रमों से संतुष्ट नहीं है। शैक्षणिक अभिजन 30.19 प्रतिशत, व्यावसायिक 30.77 प्रतिशत, नौकरशाह 42.42 प्रतिशत एवं राजनैतिक 25.00 प्रतिशत तथा कुल 32.67 प्रतिशत अभिजन ही ऐसे कार्यक्रमों से संतुष्ट हैं।

इन तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि अधिकांश दलित अभिजन दलितों के कल्याणार्थ संचालित कार्यक्रमों एवं नीतियों से संतुष्ट नही हैं उनका विचार है कि नीतियाँ एवं कार्यक्रम तो उचित हैं, लेकिन उनका क्रियान्वयन सही तरीके से नहीं हो रहा है। कानूनों के क्रियान्विति करने वाली मशीनरी अर्थात नौकरशाही में अभी तक सवर्णों का प्रभुत्व है, इस

कारण से कानून एवं योजनाओं को ईमानदारी एवं निष्ठापूर्वक लागू नहीं किया जा रहा है।

इसके अलावा अधिकतर अभिजन यह भी चाहते हैं कि निश्चित समयान्तराल पर इन योजनाओं एवं कार्यक्रमों की समीक्षा निष्पक्ष रूप से अवश्य करायी जाये एवं अपने निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति में असफल रहे अधिकारियों को दण्डित किया जाये।

हमीरपुर में दलितों से सम्बन्धित लगभग तीन दर्जन जातीय संगठन तथा सरकारी एवं स्वयंसेवी संस्थाएँ विकास हेतु प्रयत्नशील हैं। करीब 72.67 प्रतिशत इस प्रकार के जातीय संगठनों की जानकारी रखते हैं एवं लगभग 53.33 प्रतिशत अभिजन इन संगठनों से सम्बद्ध हैं। अभिजन यह महसूस करते हैं कि आर्थिक साधनों की कमी, पारस्परिक फूट एवं आन्तरिक जातिवाद एवं स्वार्थपरता एवं पदलिप्सा संगठन की प्रमुख समस्याएँ हैं जिनकी वजह से ये संगठन अपने वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति में असफल रहे हैं।

00000————00000

अध्याय - 7

निष्कर्ष

- उपकल्पनाओं का सत्यापन
- सुझाव

7. निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्याय में शोध–प्रबन्ध का निष्कर्ष एवं सुझाव प्रस्तुत किये गये हैं।

धर्म की सीमाओं के बाहर हिन्दुओं का जो कुछ भी अपनापन है, उसकी अनोखी अभिव्यक्ति जाति–प्रथा है। वास्तव में यह संस्था हिन्दू जीवन–पद्धति को दूसरों से इतना पृथक कर देती है कि सैकड़ों भारतीय एवं विदेशी विद्वानों का ध्यान इस संस्था की ओर आकर्षित हुआ है। जाति–प्रथा मुख्यतः जन्म के आधार पर सामाजिक संस्तरण और विभाजन की एक गतिशील व्यवस्था है जो खाने–पीने, विवाह, व्यवसाय और सामाजिक सहवासों के सम्बन्ध में अनेक या कुछ प्रतिबन्धों को अपने सदस्यों पर लागू करती है।

दलित जातियाँ, जिन्हें गाँधी द्वारा 'हरिजन' एवं अम्बेडकर द्वारा 'डिप्रेस्ड कास्ट' कहकर सम्बोधित किया गया, भारतीय सामाजिक व्यवस्था में निम्न स्थान रखती हैं। ऐतिहासिक परिवेश में इनका शोषण उच्च वर्गों द्वारा हमेशा से होता रहा है जिससे प्राचीन एवं मध्यकालीन समाज में इनकी स्थिति आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक दृष्टि से बहुत कमजोर रही है। गौतम बुद्ध (400ई.पू.) के समय से अस्पृश्यता उन्मूलन एवं इनकी सामाजिक–आर्थिक दशा सुधारने के प्रयास शुरू किये गये। मध्य युग में प्रमुख संतों एवं समाज सुधारकों ने अस्पृश्य जातियों में सामाजिक चेतना जाग्रत करने के प्रयास किये। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्ति के प्रयासों के साथ–साथ सामाजिक समानता की स्थापना के लिये अस्पृश्यता उन्मूलन एवं अस्पृश्य जातियों की ओर राष्ट्रीय नेताओं का ध्यान आकृष्ट हुआ। स्वतन्त्रता मिलने के पश्चात् भारतीय संविधान द्वारा जाति, धर्म, लिंग, रंग आदि के अन्तरों को वैधानिक रूप से समाप्त कर देश के समस्त नागरिकों को समान अधिकार प्रदान किये हैं। सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं

राजनैतिक निर्योग्यताओं के फलस्वरूप इन अस्पृश्य जातियों में कई प्रकार की कुण्ठाएँ व्याप्त थीं। अतः इन निर्योग्यताओं की समाप्ति एवं इन जातियों की सुरक्षा तथा अधिकारों के लिए विशेष प्रावधान किये गये हैं। इन विशेष प्रावधानों एवं सुविधाओं के फलस्वरूप दलितों के भी कुछेक सदस्य अभिजन स्तर तक पहुँचने में सफल रहे हैं तथा उन्होंने राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक प्रक्रियाओं में भाग लेना शुरू किया है। इस प्रकार स्वतन्त्र भारत के संविधान ने दलित अभिजनों के उद्भव एवं विकास में प्रोत्साहन प्रदान किया है।

भारतीय संविधान में दलितों को राजनैतिक प्रक्रिया में सहभागिता एवं शैक्षणिक तथा आर्थिक उन्नति के लिए जो विशेष प्रावधान किये गये हैं उनमें संविधान के अनुच्छेद 16(4) द्वारा दलित जातियों को लोकसेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व हेतु आरक्षण, अनुच्छेद 338 द्वारा विशेष अधिकारी एवं अनुच्छेद 340 द्वारा विशेष आयोग की स्थापना, अनुच्छेद 46 द्वारा राज्य विधान सभाओं में इनकी जनसंख्या के अनुपात में स्थान आरक्षित करने के प्रावधान आदि प्रमुख हैं। शुरू में यह व्यवस्था संविधान लागू होने से दस वर्ष तक के लिए थी, लेकिन संविधान संशोधन करके यह अवधि समय–समय पर बढ़ाई जाती रही है। वर्तमान में जनवरी, 1990 में 62 वें सविधान संशोधन द्वारा यह अवधि 25 जनवरी 2000 तक बढ़ा दी गई थी। उक्त प्रावधानों से दलित जातियों के शैक्षणिक, व्यावसायिक, नौकरशाह और राजनैतिक अभिजनों का उद्भव हुआ है। ये अभिजन कानून निर्माता, बुद्धिजीवी एवं मार्गदर्शक होते हैं तथा राष्ट्रीय लक्ष्यों के निर्माण, नीतियों के निर्धारण, धर्म–निरपेक्ष एवं लोकतांत्रिक समाजवादी मूल्यों की प्राप्ति तथा सामाजिक–आर्थिक मशीनरी को प्रभावित करने में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अतः इन दलित अभिजनों की सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि, उद्भव एवं स्वजन समूह के विकास में इनकी भूमिका की जानकारी बहुत महत्वपूर्ण है।

प्रस्तुत अध्याय के लिए अध्ययन का क्षेत्र हमीरपुर जनपद को चुना है। यह जनपद ऐसी महत्वपूर्ण घटनाओं का केन्द्र रहा है, जो सम्पूर्ण देश के लिए युगान्तकारी सिद्ध हुई हैं।

7.1 उपकल्पनाओं का सत्यापन

शोध को वैज्ञानिक आधार पर निर्देशित दिशा की ओर ले जाने हेतु कुछ उपकल्पनाओं का निर्माण किया गया है, जिनको तथ्यगत विश्लेषण से प्राप्त निश्कर्षों के आधार पर विवेचित कर परिलक्षित व सत्यापित किया जा सकता है। यद्यपि इन उपकल्पनाओं का यथा–स्थान परीक्षण किया गया है, लेकिन सारांश रूप में यहाँ एक साथ परीक्षण करना समीचीन होगा।

1. एकाकी परिवार की अपेक्षा संयुक्त परिवार के सदस्यों को अभिजन के अधिक अवसर प्राप्त होते हैं, इस उपकल्पना की प्रामाणिकता वर्तमान अध्ययन से स्पष्ट होती है। वर्तमान में 50.67 प्रतिशत अभिजन संयुक्त परिवारों में तथा 49.33 प्रतिशत एकाकी परिवारों में रहते हैं। अभिजन स्थिति तक पहुँचने के समय ज्यादातर अभिजन संयुक्त परिवारों से ही सम्बन्ध रखते थे, लेकिन पद प्राप्ति के बाद निवास स्थान से दूर पदस्थापना होने के कारण ज्यादातर अभिजनों को अब एकाकी परिवार में रहना पड़ता है।
2. इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि दलित अभिजन ग्रामीण परिवेश की तुलना में नगरीय परिवेश से अधिक सफल रहे हैं। राज्य में दलितों की 81 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या से केवल 52 प्रतिशत तथा मात्र 19 प्रतिशत शहरी जनसंख्या से 48 प्रतिशत अभिजन अध्ययन में शामिल हैं। इन तथ्यों से स्पष्ट हो जाता है कि ग्रामीण परिवेश में रहने वाले व्यक्तियों की अपेक्षा शहरी सदस्यों को उच्च पद प्राप्त करने के अधिक अवसर रहते हैं क्योंकि शहरों में शैक्षणिक सुविधाएँ अधिक मात्रा में

उपलब्ध हैं। इस उपकल्पना की पुष्टि राय तथा सिंह द्वारा उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले में किये गये अध्ययन से होती है, जिसमें जिले की 9.20 प्रतिशत शहरी जनसंख्या में से 50.89 प्रतिशत शहरी अभिजन अध्ययन में शामिल थे।

3. दलित वर्ग के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति में दलित अभिजन सहयोग करते हैं, इस उपकल्पना के दो पक्ष हैं। लगभग 93.33 प्रतिशत अभिजन यह स्वीकार करते हैं कि वे दलितों की सहायता करते हैं एवं उनकी समस्याओं पर ध्यान देकर निराकरण के प्रयास करते हैं। दूसरी ओर दलित जातियों के सामान्य सदस्य (नॉन इलिट) यह महसूस करते हैं कि अभिजन दलित जातियों की समस्याओं की अपेक्षा उच्च जातियों की समस्याओं पर तत्परता से ध्यान देते हैं।

4. अध्ययन में प्राप्त तथ्यों से भी स्पष्ट होता है कि उच्च पद प्राप्ति के बाद व्यक्ति अपनी जाति एवं समाज से 'परकीकृत' हो जाता है। दलित जातियों के जनसामान्य का मत है कि अधिकांश अभिजन स्वयं को दलित समुदाय का सदस्य हीं नहीं बताना चाहते हैं। आज प्रत्येक जाति अपने–अपने जातीय संगठनों एवं संस्थाओं के माध्यम से प्रान्तीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर अपनी 'अस्मिता' को बनाये रखने को प्रयासरत हैं लेकिन दलित अभिजन वर्ग अपनी 'अस्मिता' को ही छिपाना चाहता है। अभिजन पद प्राप्ति के बाद ज्यादातर अभिजन शहरी संस्कृति में सम्पन्न एवं सुविधायुक्त जीवनयापन करते हैं तथा वे शैक्षणिक, आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से जनसाधारण से इस कदर कट चुके हैं कि उनको समाज की धड़कन का ही ज्ञान नहीं है।

5. दलित अभिजनों में व्यावसायिक गतिशीलता सम्बन्धी तथ्यों से स्पष्ट होता है कि दलित जातियों में शिक्षा, सम्पत्ति एवं व्यावसायिक गतिशीलता में पीढ़ी दर पीढ़ी वृद्धि हो रही है। 62.67 प्रतिशत अभिजनों के 28 प्रतिशत पिता निरक्षर थे, जबकि अभिजन एवं उनके बच्चे शत प्रतिशत शिक्षित हैं। इसी प्रकार 70 प्रतिशत अभिजनों के

पितामह एवं 41.33 प्रतिशत अभिजनों के पिता परम्परागत व्यवसाय से सम्बद्ध रहे हैं, जबकि अभिजन एवं उनके बच्चों में यह प्रतिशत शून्य है। सम्पत्ति सम्बन्धी तीन पीढ़ियों के तथ्यों से भी ज्ञात होता है कि पितामह से पिता एवं पिता से अभिजन स्तर पर सम्पत्ति में बढ़ोत्तरी का क्रम है।

6. यह अध्ययन एक महत्वपूर्ण तथ्य यह भी प्रस्तुत करता है कि संवैधानिक विशेषाधिकार, सरकारी प्रयासों एवं आर्थिक विकास के फलस्वरूप दलितों में सामाजिक–सांस्कृतिक परिवर्तन आ रहे हैं। अभिजनों ने अपने वर्तमान पद प्राप्ति के लिए शिक्षा, संवैधानिक प्रावधान, सम्पत्ति आदि कारकों को सहायक माना है। अधिकांश अभिजनों ने शिक्षा प्राप्ति के दौरान छात्रवृत्ति, शुल्क मुक्ति, छात्रावास एवं शिक्षण–प्रशिक्षण तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थाओं में आरक्षण कोटे का लाभ उठाया है तथा बाद में उनका वर्तमान पद पर चयन भी दलितों के लिए आरक्षित कोटे के अन्तर्गत ही हुआ है। तथ्यों से परिलक्षित होता है कि अधिकांश दलित अभिजन संवैधानिक विशेषाधिकार एवं जनतांत्रिक सुविधाओं को दलितों की आर्थिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में श्रेयस्कर परिवर्तन लाने में प्रभावशाली मानते हैं, तथा संवैधानिक सुरक्षा एवं कल्याण के तरीकों को अधिकाधिक समय तक लागू करने के पक्ष में हैं।
7. अध्ययन के आधार पर यह स्पष्ट हो गया है कि दलितों से सम्बन्धित जातीय एवं सामाजिक संगठन अपने वास्तविक लक्ष्यों की प्राप्ति में असफल रहे हैं।
8. अध्ययन यह भी संकेत करता है कि मध्यम एवं उच्च आय वर्ग के सदस्यों को निम्न आय वर्ग की अपेक्षा अभिजन के अधिक अवसर प्राप्त होते हैं। मोस्का (1939) की इस धारणा को यह उपकल्पना सत्य साबित करती है कि "आधुनिक जनतांत्रिक समाजों में अभिजन मध्यम वर्गों से आते हैं।" आधुनिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण विशेषकर व्यावसायिक

प्रशिक्षण इतना खर्चीला है कि निम्न आय वर्ग का सदस्य यह प्रशिक्षण प्राप्त नहीं कर सकता है। इसी प्रकार आज चुनाव प्रक्रिया इतनी महँगी एवं जटिल हो गई है कि गरीब वर्गों के लिए चुनाव लड़ने की कल्पना करना भी असंभव है। सम्पत्ति सम्बन्धी तथ्यों से भी यह स्पष्ट होता है कि अधिकांश अभिजनों के पिता की आर्थिक स्थिति दलितों के सामान्य सदस्यों की अर्थिक स्थिति से ज्यादा सम्पन्न थी।

9. अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि दलित अभिजन दलितों के लिये चलाये जा रहे कार्यक्रमों एवं नीतियों से संतुष्ट नहीं हैं। लगभग 67.33 प्रतिशत अभिजन इस समय दलितों के कल्याणार्थ संचालित कार्यक्रमों एवं नीतियों से संतुष्ट नहीं हैं। उनका विचार है कि नीतियाँ एवं कार्यक्रम तो उचित हैं लेकिन उनका क्रियान्वयन सही तरीके से नहीं हो रहा है। कानूनों को क्रियान्वित करने वाली मशीनरी अर्थात् नौकरशाही में अभी तक सवर्णों का प्रभुत्व है, इस कारण कानूनों एवं योजनाओं को ईमानदारी एवं निष्ठापूर्वक लागू नहीं किया जा रहा है। इससे यह उपकल्पना असत्य प्रतीत होती है कि सरकारी कार्यक्रमों एवं नीतियों से दलितों का समुचित विकास हुआ है।

7.2 सुझाव

संविधानेत्तर काल के पाँच दशक का अनुभव इस बात का द्योतक है कि संविधान निर्माताओं का भारत वर्गविहीन, जातिविहीन एवं समता पर आधारित समाज का सपना साकार नहीं हो सका है। यहाँ वर्ण एवं जाति की जड़ें इतनी गहरी जा चुकी हैं कि सोपानात्मक जाति व्यवस्था के कारण दलितों के प्रति विभेदीकरण एवं असहिष्णुता समाप्त नहीं हो सकी है। सवर्णों का अनार्जित सम्मान एवं दलितों का जन्मजात अभिशाप किसी न किसी रूप में बरकरार है। दुःख की बात यह है कि सभ्यता और संस्कृति के अनवरत विकास औद्योगीकरण, वैज्ञानिक उपलब्धियों और सतत प्रगति के बावजूद भारत में दलित अत्याचार एवं शोषण जारी है। दलित जातियों का अभिजन

वर्ग भी सरकार द्वारा इन जातियों के विकास हेतु निर्मित नीतियों एवं चलाये जा रहे कार्यक्रमों से असंतुष्ट है। ज्यादातर अभिजनों का अनुभव यही है कि सरकारी नीतियाँ एवं कार्यक्रम ठीक है लेकिन उनकी क्रियान्वित उचित तरीके से नहीं हो रही है।

शोधार्थिनी ने दलित अभिजनों से ही यह जानने का प्रयास किया है कि आप वे क्या सुझाव देना चाहते हैं, ताकि दलित जातियों का समुचित विकास हो सके। सभी अभिजनों ने अपने–अपने अनुभवों के आधार पर जो सुझाव दिये हैं, उनको सार रूप में यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। यहाँ अभिजनों द्वारा दिये गये सुझावों को तीन भागों में विभाजित किया गया है–

(1) सरकार एवं नीति निर्माताओं से सम्बन्धित सुझाव
(2) दलित जातियों के बौद्धिक एवं अभिजन वर्ग के लिए सुझाव
(3) दलित जातियों के लिए सुझाव

7.2.1 सरकार एवं नीति निर्माताओं के सन्दर्भ में

1. दलित जातियों के विकास से सम्बन्धित नीतियों एवं कार्यक्रमों का उचित क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जाए। इन नीतियों एवं कार्यक्रमों में ढ़िलाई बरतने वाले अधिकारियों एवं कर्मचारियों को कठोर सजा का प्रावधान किया जाए। इन जातियों के सम्पूर्ण विकास में आ रही बाधाओं का व्यापक सर्वेक्षण करवाकर एक समयबद्ध कार्ययोजना तैयार की जाए।
2. दलितों के लिए शिक्षा का व्यापक प्रचार–प्रसार किया जाए। शत प्रतिशत अभिजनों का यही मानना है कि एकमात्र कारक है जिससे इन जातियों का विकास संभव है। अतः इन जातियों के प्रत्येक बच्चे के लिए अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान करके निःशुल्क शिक्षा उपलब्ध

करवाई जाए। समाज कल्याण विभाग द्वारा संचालित छात्रावासों में दलित वर्ग के बच्चों को स्नातकोत्तर, मेडिकल एवं तकनीकी शिक्षा पूर्ण करने तक रखा जाए जिससे निर्धन परिवारों के बच्चे भी व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा प्राप्त कर सकें।

3. दलितों पर अत्याचार करने वाले लोगों को कड़ी से कड़ी सजा दी जाये एवं ऐसे व्यक्तियों का सामाजिक तिरस्कार किया जाए। यदि अपराधी सरकारी या प्राइवेट सेवा में है तो उसे सेवा से निष्कासित कर दिया जाए। अनुसूचित जाति/जनजाति अत्याचार (निवारण) अधिनियम को और अधिक प्रभावी तथा विशेष न्यायालयों को और अधिक सक्षम बनाया जाए।
4. दलितों के लिए आरक्षण को जारी रखा जाए। विशेष भर्ती अभियान चलाकर इन जातियों के लिए आरक्षित स्थानों को इन्हीं जातियों के प्रत्याशियों से भरा जाए। आरक्षण लाभार्थियों का समय–समय पर परीक्षण किया जाए जिससे उनमें अनुचित आरक्षण लाभ की मानसिकता न पनपने पाए और उसके सही उपयोग के प्रति जागरूकता बनी रहे। उपयुक्त उम्मीदवार नहीं मिलने की स्थिति मे आरक्षित पदों को अनारक्षित नहीं किया जाए।
5. दलितों की आर्थिक दशा सुधारने के लिए विशेश प्रयास किये जाएँ। इन वर्गों के सदस्य जो बड़े पैमाने पर उद्योग धंधे लगाना चाहते हैं उनको योजना लागत की राशि एवं गारन्टी की राशि स्वयं वहन करनी पड़ती है। इसकी शत प्रतिशत पूर्ति सरकार द्वारा की जाए ताकि दलित वर्ग के लोग भी बड़े पैमाने पर उद्योग लगाकर आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न बन सकें। सरकार इन जातियों को लघु उद्योग लगाने के लिए ब्याज मुक्त ऋण उपलब्ध करवाये।
6. इन जातियों का मुख्य व्यवसाय कृषि है लेकिन दलित वर्ग के अधिकांश परिवारों के पास कृषि योग्य भूमि नहीं है। अतः इन जातियों को पर्याप्त भूमि आवंटित की जाए। जब तक ये जातियाँ स्वयं की

जमीन की मालिक नहीं होंगी, स्वतन्त्र होते हुए भी दासता से जकड़ी रहेंगी। इन वर्गों को प्रभुत्वशाली जातियों द्वारा दबाई गई भूमि पुनः दिलवाई जाए।

7. दलितों के कर्मचारियों के लिए सेवाकाल में प्रशिक्षण व्यवस्था की जाए जिससे इनमें हीनभावना का विकास न होने पाये एवं किसी को उनकी क्षमता या योग्यता पर अंगुली उठाने का मौका न मिले।

7.2.2 अभिजन वर्ग के सन्दर्भ में

1. बाबा साहेब डा. भीमराव अम्बेडकर के मूलमन्त्र 'शिक्षित बनों', 'संगठित रहो', संघर्ष करो' को समाज में व्यापक रूप से प्रचारित किया जाए।
2. दलित वर्गों के कल्याण से सम्बन्धित योजनाओं एवं नीतियों की सरकारी निम्न स्तर पर प्रदान की जाए। इन जातियों में इतना साहस एवं प्रेरणा पैदा की जाए कि दलित भी अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होकर संगठित हो सकें।
3. समाज के प्रबुद्ध, अभिजन एवं धनिक वर्ग इन जातियों के विद्यार्थियों के लिए शहरी स्तर पर छात्रावासों का निर्माण करें, ताकि इन जातियों के विद्यार्थी आवास समस्या से मुक्त रहकर अध्ययन कर सकें।
4. दलित जनप्रतिनिधियों को अपने–अपने क्षेत्र के दलितों की तरफ अधिक ध्यान देना चाहिए।
5. अभिजन वर्ग जातीय संगठनों के प्रति उदासीन रहे हैं। अतः जातीय संगठनों से सम्बद्ध होकर उनको गतिशील बनाने में इनकी अहम भूमिका हो सकती है।
6. दलित वर्गों में शिक्षा, खासकर महिला शिक्षा की उपादेयता समाज मे अभिजन वर्ग ही सही दृष्टि से प्रतिपादित कर सकता है। अतः अभिजन वर्ग अपने लेखों, पुस्तकों, सभा आदि में भाषण, विधानसभा में प्रश्न आदि के माध्यम से दलित अत्याचारों का विरोध, शिक्षा के महत्व,

सामाजिक कुरीतियों को छोड़ने, असभ्य व्यवहारों को त्यागने एवं नवीन सांस्कृतिक मूल्यों का प्रसार कर सकते हैं।

7.2.3 दलित जातियों के सन्दर्भ में

1. दलित वर्ग के अभिजनों का इन जातियों के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण सुझाव यह है कि ये जातियाँ सामाजिक कुरीतियाँ पर्दा–प्रथा, मृत्युभोज, बाल–विवाह, दहेज–प्रथा, नशावृत्ति आदि का पूर्णतः परित्याग कर आधुनिक सांस्कृतिक मूल्यों के अनुरूप आचरण करें।
2. दलित जातियों को 'कम संतान' एवं 'परिवार नियोजन' के महत्व को समझकर अपने परिवार को सीमित रखना चाहिए। सीमित परिवार इन जातियों के लिए सर्वाधिक जरूरी है क्योंकि आर्थिक पिछड़ेपन के कारण बड़े परिवार का भरण–पोषण एवं शिक्षा की व्यवस्था उचित रूप से नहीं हो पाती है।
3. दलित संगठनों की भरमार है लेकिन उनमें पारस्परिक तालमेल एवं समन्वय का नितान्त अभाव है। अतः यह आवश्यक है कि प्रभावी जातीय संगठन निर्मित करके समाजोत्थान की गतिविधियाँ चलाई जाएँ। इन जातीय संगठनों से अधिक से अधिक मात्रा में समाज के अभिजन वर्ग को जोड़ा जाए। प्रत्येक व्यक्ति दूसरे व्यक्तियों का आदर–सम्मान करते हुए अपना कर्तव्य समझे एवं समाज सेवा का प्रण लें।
4. दलितों में आपसी भेदभाव एवं आन्तरिक जातिवाद, संकीर्णवाद की भावना बहुत घातक है। दलित अत्याचारों को रोकने के लिए यह जरूरी है कि ये जातियाँ एकजुट एवं संगठित होकर इस प्रकार की घटनाओं का विरोध करें।
5. परम्परागत, अस्वच्छ, घृणित एवं कम आय वाले व्यवसाय के स्थान पर स्वच्छ एवं सम्मानजनक व्यवसायों की ओर प्रवृत्त हों।

6. दलित जातियाँ शिक्षा के महत्व को समझें तथा अनिवार्य शिक्षा का प्रण लें। शिक्षा दिलवाने में लड़के एवं लड़कियों में कोई भेदभाव नहीं करें।
7. शादी–विवाह एवं सार्वजनिक समारोहों में सवर्ण जातियों की नकल न करें एवं अनाप–शनाप कर्ज लेकर खर्च करने की प्रवृत्ति से बचें।

00000————00000

परिशिष्ट

सन्दर्भ - ग्रन्थ

पुस्तकें

1. अम्बेडकर, बी.आर., 1943, रानाडे, गाँधी एण्ड जिन्ना, बॉम्बे, ठक्कर एण्ड कं. लि.
2. 1946, हू आर द शूद्रा'ज? हाऊ दे केम टू बी फोर्थ वर्ण इन इंडो–आर्यन सोसायटी? बॉम्बे, ठक्कर एण्ड कं. लि.
3. 1948, अनटचेबल्स– हू आर दे एण्ड व्हाई दे बिकम अनटचेबल्स, न्यू देहली, अमृत बुक कम्पनी
4. 1969, द अनटचेबल्स गोंडा, भारतीय बौद्ध शिक्षा परिषद
5. 1979, द अनटचेबल्स ऑफ कास्ट– डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर : राइटिंग्स एण्ड स्पीचेज, वॉ. 1, बॉम्बे, गवर्नमेंट ऑफ महाराष्ट्र
6. 1990, अछूत कौन और कैसे? भदन्त आनन्द कौसल्यायन (अनु.) लखनऊ, कल्चरल पब्लिशर्स
7. 1991, हिन्दुत्व का दर्शन, मोहनदास नैमिसराय (अनु.), अलीगढ़, आनन्द साहित्य सदन
8. अनिरूद्ध प्रसाद 1991, आरक्षण : सामाजिक न्याय एवं राजनैतिक संतुलन, जयपुर, रावत पब्लिकेशन्स
9. 1991, हिन्दू धर्म का गूढ़ रहस्य, एस. मूर्ती (अनु.), लखनऊ, कल्चरल पब्लिशर्स
10. आहूजा राम 1975, पॉलिटिकल इलिट्स एण्ड मॉर्डर्नाइजेशन : द बिहार पॉलिटिक्स, मेरठ, मीनाक्षी प्रकाशन
11. इग्गलिंग, जूलियस, 1963, सतपथ ब्राह्मण पार्ट– 1, देहली, मोतीलाल बनारसीदास
12. इसाक, हैराल्ड, आर, 1965, इण्डिया'ज एक्स अनटचेबल्स, न्यूयार्क, हारपर एण्ड रॉ पब्लिशर्स

13. क्लार्क, जे.एण्ड अदर्स, 1966, इन्डस्ट्रलिज्म एण्ड इन्डस्ट्रीयल मैन, कैम्ब्रिज, हारवर्ड यूनिवर्सटी प्रेस

14. कदम, एस.बी., (संपा.), 1969, श्री संत चोखामेला महाराज, बॉम्बे, भीमदी वाला बिल्डिंग

15. कपाड़िया, के.एम., 1558, मैरिज एण्ड फैमिली इन इंडिया, बॉम्बे, आक्सफोर्ड यूनिवर्सटी प्रेस

16. कम्पर्ट, एलैक्स, 1963, सैक्स इन सोशियालॉजी, लंदन, गेराल्ड डकवर्थ एण्ड कं. लि.

17. कीर, धनन्जय, 1961, अम्बेडकर– लाइफ एण्ड मिशन (बायोग्राफी), बॉम्बे, पापुलर प्रकाशन, II एडीशन

18. 1974, महात्मा ज्योतिराव फूले– फादर ऑफ इण्डियन सोशियल रिवॉल्यूशन, बॉम्बे, पापुलर प्रकाशन

19. कुबेर, डबलू.एन., 1973, डा. अम्बेडकर– ए क्रिएटिव स्टडी, न्यू देहली, पिपल्स पब्लिशिंग हाउस

20. 1990, बी.आर. अम्बेडकर– बिल्डर्स ऑफ मॉडर्न इंडिया, न्यू देहली, मिनिस्ट्री ऑफ इनफारमेशन एण्ड ब्राडकास्टिंग, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया

21. कोठारी, रजनी, 1970, कास्ट इन इंडियन पॉलिटिक्स, न्यू देहली, ओरियेंट लांगमैन

22. कोलाब्रिस्का, एम., 1912, सरकुलेशन ऑफ इलिट्स इन फ्रांस, लुसाने, प्राइमरी रियुनाइस

23. कौशाम्बी, डी.डी., 1956, एन इन्ट्राडक्शन टू द स्टडी ऑफ इंडियन हिस्ट्री, बॉम्बे, एशिया पब्लिशिंग हाउस

24. कोहन, बी.एस., 1955, द चेंजिंग स्टेट्स ऑफ ए डिप्रेस्ड कास्ट– विपेज इंडिया, शिकागो, द यूनिवर्सटी ऑफ शिकागो प्रेस

25. ग्रिफिथ, आर.टी.एच., 1976, हास ऑफ द रिगवेद, देहली, मोतीलाल बनारसीदास

26. गुप्ता, नीलम, 1994, कानूनों और कार्यक्रमों के बावजूद, इन राजकिशोर (संपा.), हरिजन से दलित, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन
27. घुर्ये, जी.एच., 1950, कास्ट एण्ड क्लास इन इंडिया, बॉम्बे, पापुलर बुक डिपो
28. चतुर्वेदी, ज्वाला प्रसाद, 1992, मनुस्मृति (हिन्दी अनुवाद), हरिद्वार, रणधीर बुक सेल्स (प्रकाशन)
29. चन्द्रमौली, वी., 1991, बी.आर., अम्बेडकर : मैन एण्ड हिज विजन, न्यू देहली, स्टर्लिंग पब्लिशर्स प्रा. लि.
30. चौधरी, आर.एन., 1980, बीसवीं सदी का राजस्थान, अजमेर, कृष्णा ब्रदर्स
31. जाटव, डी.आर., 1965, द सोशियल फिलॉसफी ऑफ डा. बी.आर. अम्बेडकर, आगरा, फोनिक्स पब्लिशिंग हाउस
32. 1992, भारतीय समाज एवं संविधान, जयपुर, समता साहित्य सदन
33. झा, एम.एस., 1972, पॉलिटिक्स इलिट इन बिहार, बॉम्बे, वोरा एण्ड कं. पब्लिशर्स प्रा. लि.
34. तिवारी, एच.के., सक्सेना, एच.एम., 1994, राजस्थान का प्रादेशिक भूगोल, जयपुर, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
35. दिवाकर, बी.एम., 1987, राजस्थान का इतिहास, जयपुर, साहित्यागार
36. देसाई, आई.पी., 1965, द न्यू इलिट, इन टी.के.एन., यून्निथान एण्ड अदर्स (एडी.), टूवर्डस ए सोशियालॉजी ऑफ कल्चर इन इंडिया, न्यू देहली, प्रेन्टिस हॉल ऑफ इंडिया
37. नवलखा, एस., 1989, इलिट एण्ड सोशियल चेंज– ए स्टडी ऑफ इलिट फॉरमेशन इन इंडिया, न्यू देहली, सेज पब्लिकेशन्स
38. नील, सी.वाटर, 1965, इंडिया– द सर्च फार यूनिटी, डेमोक्रेसी एण्ड प्रोग्रेस, प्रिन्सटन, डी.वान., नास्टरेंड कं. इनक्लेव
39. प्रभु, पी.एन., 1963, हिन्दू सोशियल आर्गेनाइजेशन, बॉम्बे, पापुलर प्रकाशन

40. पानगड़िया, बी.एल., 1988, राजस्थान में स्वतन्त्रता संग्राम, जयपुर, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, द्वि. सं.

41. पामेचा, रेणुका, 1985, इलिट इन ए ट्राइबल सोशायटी, जयपुर, प्रिन्टवैल पब्लिशर्स

42. पुरी, एस.एल., 1978, लेजिस्लेटिव इलिट इन एन इंडियन स्टेट, न्यू देहली, अभिनव पब्लिकेशन्स

43. पूर्णिमा, नवीन लाल, 1986, राजस्थान में स्वतन्त्रता आन्दोलन– कुछ पहलू, जोधपुर, हिन्दी साहित्य मन्दिर

44. प्रेम प्रकाश, 1993, अम्बेडकर, पॉलिटिक्स एण्ड शिड्यूल्ड कास्ट, न्यू देहली, आशीष पब्लिशिंग हाउस

45. ब्लैक, सी.ई., 1966, द डाइनामिक ऑफ मॉडर्नाइजेशन, न्यूयार्क, हारपर एण्ड रॉ

46. बर्थवाल, चन्द्रप्रकाश पाण्डे, रामनिवासन, 1974, आधुनिक राजनीतिक विश्लेषण, लखनऊ, उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी

47. विद्यार्थी, एल.पी., मिश्रा, एन, 1977, हरिजन टुडे, न्यू देहली, प्रेन्टिस हाल ऑफ इंडिया प्रा. लि.

48. विद्यालंकार, एस. के., वेदालंकार, एच.डी., आर्य समाज का इतिहास (प्रथम भाग), नई दिल्ली, आर्य स्वाध्याय केन्द्र

49. वेंकटेश्वर, डी., 1990, हरिजन– अपर क्लास कनफ्लिक्टस, न्यू देहली, डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस

50. बेवर, मैक्स, 1947, द रिलिजन ऑफ इंडिया, लंदन, एलेन एण्ड अनविन

51. सचान, एडवर्ड, सी., 1964, अलबरूनी'ज इंडिया, देहली, एस. चंद कम्पनी

52. सच्चिदानन्द, 1977, द हरिजन इलिट– ए स्टडी ऑफ देअर स्टेट्स, नेटवर्क, माबिलिटि एण्ड रोल इन सोशियल ट्रांसफॉरमेशन, फरीदाबाद, थामसन प्रेस (इंडिया) लि.

53. सत्वलेकर, एस.डी., (अनु.) 1979, महाभारत (आदि पर्व), बलसाड़, स्वाध्याय मंडल, पराधी
54. सब्बरवाल, एस., 1972, स्टेट्स, मॉबिलिटी एण्ड नेटवर्क इन ए पंजाब इन्डस्ट्रीयल टाउन, शिमला, इंडियन इन्स्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडी
55. 1972, बेयोंड द विलेज, शिमला, इंडियन इन्स्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडी
56. सागर, एस.एल., हिन्दू संस्कृति में वर्ण–व्यवस्था और जातिवाद, लखनऊ, बहुजन कल्याण प्रकाशन
57. स्मिथ, डोनाल्ड ई., 1967, इंडिया एज ए सेक्यूलर स्टेट, प्रिस्टन, प्रिस्टन यूनिवर्सिटी प्रेस
58. सिंवर्ग, जी.एण्ड, नैट, आर, 1968, ए मैथडालॉजी फॉर रिसर्च, न्यूयार्क, हारपर एण्ड रॉ
59. सिरस्कार, वी.एम., 1970, द रूरल इलिट इन डवलपिंग सोसायटी– ए स्टडी इन पॉलिटिकल साशियोलॉजी, न्यू देहली, ओरियेंट लांगमैन
60. सिसन, रिचर्ड एण्ड श्रदर, लारेंस एल., 1972, लेजिस्लेटिव गवर्नमेंट एण्ड पालिटिकल इन्टीग्रेशन– पैटर्न ऑफ पॉलिटिकल लिंकेज ऑफ एन इंडियन स्टेट, केलीफोर्निया, बर्कले
61. सिसन, आर., 1970, कास्ट एण्ड पॉलिटिकल फैक्सन इन राजस्थान, इन रजनी कोठारी (एडी.), कास्ट इन इंडियन पॉलिटिक्स, न्यू देहली, ओरियेंट लांगमैन
62. सिंह, भवानी, 1973, काउंसिल ऑफ स्टेट्स इन इंडिया, मेरठ, मीनाक्षी प्रकाशन
63. सिंह, एस.एस., : सुन्दरम्, एस., 1987, इमरजिंग हरिजन इलिट– ए स्टडी ऑफ देअर आइडेन्टिटी, न्यू देहली, उप्पल पब्लिशिंग हाउस
64. सिंह, आर.पी., 1989, दलित के विधानमण्डलीय अभिजन, दिल्ली, मित्तल पब्लिकेशन्स

65. सिंह, के.एस., 1993, प्यूपिल ऑफ इंडिया, वॉना, द शिड्यूल्ड कास्ट, देहली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सटी प्रेस

रिसर्च जनरल्स

1. नाडेल, एस.एफ., द कन्सेप्ट ऑफ सोशियल इलिट्स, इंटरनेशनल सोशियल साइंस बुलेटिन, वॉ viii, नं.3
2. नारगोलकर, वी.एस., 1969, रिमूवल ऑफ अनटचेबल्टी, गोल्स एण्ड अटेनमेंटस, इंडियन जनरल ऑफ सोशियल वर्क, वॉ. 30, नं. 3
3. पर्वतम्मा, सी., 1968, केस फार इंडियन अनटचेबल्स, यूनाइटेड एशिया, वॉ. 20, नं. 5, सितम्बर–अक्टूबर
4. पिकाक, डी.एफ., 1955, द मूवमेंट ऑफ कास्ट, मैन, वॉ. 5, नं. 3, मई
5. पूरण मल, 1995, राजस्थान में दलितों पर बढ़ते अत्याचार : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण, डा. अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका, वर्ष–3, अंक–3
6. 1997, राजस्थान के बैरवाओं में बीसवीं शताब्दी में सामाजिक एवं धार्मिक सुधार आन्दोलन, शोधक (हिस्टोरिकल रिसर्च जनरल), वॉ. 25, नं. 78, जयपुर
7. भाटिया एच.एस., 1970, इंटरकास्ट रिलेशन एण्ड एसप्रियेशनल लेवल–एन एटीट्यूडनल स्टडी, इंडियन जनरल ऑफ सोशियल वर्क, वॉ. 31, नं. 1
8. राव, के.आर., एण्ड मूर्थी, 1975, ए नोट ऑन पब्लिक ऑफिस लेगिटीमेसी एण्ड फ्लो ऑफ कन्टीनिटी एण्ड चेंज, सोशियालॉजीकल बुलेटिन, वॉ. 24, नं. 2, सितम्बर
9. लियाड, आई., रूडोल्फ, 1960, द पालिटिकल रोल ऑफ इण्डिया'ज कास्ट एसोसिएशन, पैसेफिक अफेयर्स, वॉ. 33, मार्च
10. सच्चिदानन्द, 1968, एजूकेशन एण्ड सोशियल वैल्यूज, मैन इन इंडिया, वॉ. 48, नं. 1

11. सहाय, के.एन., 1967, कास्ट एण्ड ऑक्यूपेशन इन ए विलेज, मैन इन इंडिया, वॉ. 47, नं. 3

12. सिंह, योगेन्द्र, 1968, कास्ट एण्ड क्लास– सम आस्पेक्ट ऑफ कन्टीनिटी एण्ड चेंज, सोशियालॉजी बुलेटिन, वॉ. 7, नं. 1

अप्रकाशित थीसिस

1. गोयल, एस.के., 1973–74, ए स्टडी ऑफ शिड्यूल्ड कास्टस्टूडेन्ट्स ऑफ कालेज इन ईस्टर्न यू.पी. : रिसर्च प्रोजेक्ट स्पान्सर्ड बाई आई.सी. एस.एस.आर., न्यू देहली, डिपार्टमेंन्ट ऑफ सोशियालॉजी, बनारस हिन्दू यूनिवर्सटी

2. चाको, अनिता, 1996, गरीब साहेब : एन अनटचेबल्स सेंट, हिज लाइफ एण्ड मिशन, राजस्थान विश्वविद्यालय में एम.फिल. (समाजशास्त्र) की डिग्री की आंशिक पूर्ति हेतु प्रस्तुत लघु शोध–प्रबन्ध

3. चौहान, अमिता, राजस्थान की नौवीं विधानसभा में दलित के विधायक अभिजन, राजस्थान विश्वविद्यालय में एम.फिल. (समाजशास्त्र) की डिग्री की आंशिक पूर्ति हेतु प्रस्तुत लघु शोध–प्रबन्ध

रिपोर्ट्स/सेंशस हैण्डबुक

1. रिपोर्ट ऑफ द कमिश्नर फॉर शिड्यूल्ड कास्ट्स एण्ड शिड्यूल्ड ट्राइब्स– 1955, न्यू देहली, मैनेजर ऑफ पब्लिकेशन्स, गवर्नमैंन्ट ऑफ इंडिया, 1956
2. रिपोर्ट ऑफ द कमेटी ऑन अनटचेबल्टी, इकानॉमिक एण्ड एजूकेशनल डेवपलपमेंन्ट ऑफ द शिड्यूल्ड कास्ट्स एण्ड कनैक्टेड डॉक्यूमैंन्टस, न्यू देहली, लोकसभा सेक्रेटिरीज, 1969
3. रिपोर्ट ऑफ बैकवर्ड क्लासेज कमीशन, न्यू देहली, गवर्नमेंन्ट ऑफ इंडिया प्रेस, 1981
4. रिपोर्ट ऑफ द कमिश्नर फॉर शिड्यूल्ड कास्ट्स/शिड्यूल्ड ट्राइब्स 1990, न्यू देहली, मैनेजर ऑफ पब्लिकेशन्स, गवर्नमेंन्ट ऑफ इंडिया, 1991
5. सेशंस ऑफ इंडिया रिपोर्ट, 2001
6. सेशंस ऑफ इंडिया– 1971, सोशियल टेबिल्स एण्ड नोट्स ऑन एस. सी/एस.टी., न्यू देहली, रजिस्ट्रार जनरल एण्ड सेशंस कमिश्नर इंडिया, 1974
7. सेशंस ऑफ इंडिया–1981, सीरीज–1, इंडिया, पार्ट–II बी (II), प्राइमरी सेशंस, एब्सट्रेक्ट्स, शिड्यूल्ड कास्ट, न्यू देहली, रजिस्ट्रार जनरल एण्ड सेशंस कमिश्नर इंडिया, 1983

समाचार–पत्र/पत्रिकाएँ

(अ) दैनिक

1. जनसत्ता, नई दिल्ली
2. टाइम्स ऑफ इंडिया, न्यू देहली

(ब) पाक्षिक

1. इंडिया टुडे, नई दिल्ली
2. भीम पत्रिका, जालंधर

00000————00000